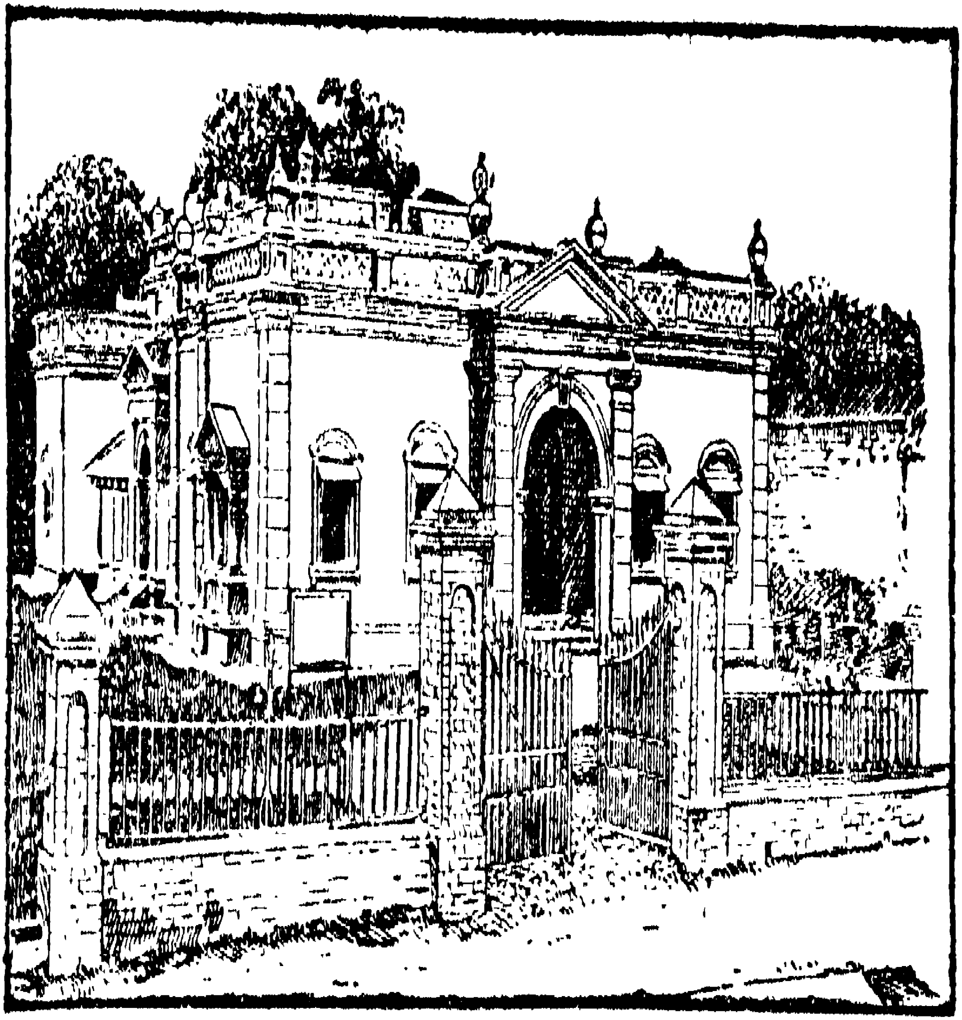
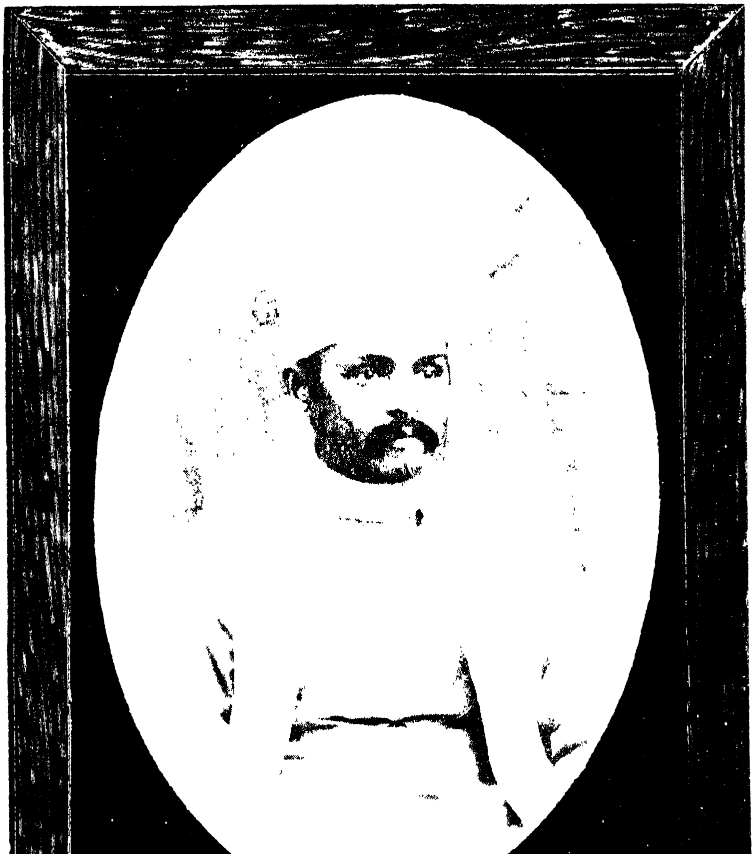


बी० एल्० पावगी द्वारा हितचिन्तक प्रेस,
रामघाट, बनारस सिटी में मुद्रित ।



माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीयजी ।

The Indian Press, Allahabad

भूमिका

प्रकृति का यह अटल नियम है कि जो काम एक मनुष्य करता है उसे यदि दो चार मनुष्य मिलकर और एकचित्त होकर करें तो वह कार्य अच्छा होगा और उसमें समय भी कम लगेगा। आधुनिक समय में यह नियम प्रत्येक देश की संस्थाओं में स्पष्ट रूप से प्रयुक्त होता है और इसी के अनुसार बड़े बड़े देशों का शासनकार्य तक होता है। इस समय की यह प्रवृत्ति देखने में आती है कि केवल एक मनुष्य के हाथ में जो अधिकार वंशपरम्परा से चला आता है वह भी अनेक लोगों में विभक्त होजाय। राजनीति सम्बन्धी कार्यों में भी इसी नियम का विशेष कर पालन होने लगा है। हमारे भारतवर्ष में भिन्न भिन्न सभा समाजें भी इसी नियम का प्रतिफल हैं और धीरे धीरे इसका पालन राज्यशासन में भी होने लगा है। हिन्दी संसार में गत २५, ३० वर्षों से यह विशेष कर देखने में आता है कि जहां दो एक मनुष्य अपनी मातृभाषा की सेवा करते थे वहां पर दस पांच आदमियों ने आपस में मिलकर उसी कार्य में लगना उचित समझा। यह भी प्राकृतिक बात है कि कोई काम हो वह पाहिले ही उद्योग में सफल नहीं होता। किसी नए काम के करने में पहिले तो उसके अंगों प्रत्यंगों का पूर्ण ज्ञान नहीं होता, फिर उसके विपरीत चिर अभ्यास के रहने से नए मार्ग के अवलम्बन करने में अरुचि होती है और अनेक अचिंतनीय कठिनाइयां दृष्टिगोचर होती हैं। इन्हीं कारणों से प्रारम्भ में लोग प्रायः घबड़ा कर उस काम को शीघ्र छोड़ बैठते हैं। किसी ने ठीक कहा है कि विफलता ही सफलता की सीढ़ी है। ज्यों ज्यों मनुष्य उद्योग करता जाता है और उसे विफलमनोरथ होना पड़ता है त्यों त्यों दूसरों के लिये उसका तथा उसके उद्योग का इतिहास मार्गदर्शक होजाता है। क्रमशः कठिनाइयां घटने लगती हैं और अन्त में वह मार्ग जो पहिले संकीर्ण देख पड़ता था, प्रशस्त हो जाता है और उद्योग का मधुर फल मन को प्रसन्नित और उद्योग में सफलता प्राप्त करने का कारण होता है। ठीक यही अवस्था हमारी उन सभा और समाजों की हुई है जो अपनी मातृभाषा की उन्नति में दत्तचित्त हुई थीं। अनेक सभाएं इस निमित्त बनीं और थोड़े ही काल में अपनी छाया मात्र के अतिरिक्त और कोई चिन्ह अपनी स्थिति का न छोड़ गईं। पर अब यह समय आगया है जब ऐसी सभाएं १०, २० वर्ष से निरन्तर चलती हुई देखी जाती हैं। इससे यह आशा होती है कि इनका जीवनकाल दीर्घ होगा और ये अपने उद्देश्यों में बहुत कुछ सफलता प्राप्त करेंगी।

जहां एक ओर सभा समाजें स्थापित होने

लगीं वहां दूसरी ओर भारत की प्राचीन सभ्यता का पश्चिम की अर्वाचीन सभ्यता के साथ संसर्ग होने से नए विचारों, नए उपायों, नए उत्साहों तथा नए उद्योगों का प्रकाश चारों ओर फैलने लगा। विद्यादेवी ने पुनः भारतवर्ष पर कृपा की, उसका प्रकाश धीरे धीरे बढ़ने लगा, समाचारपत्रों का जन्म हुआ, लोगों के हृदय में अन्धकार और निरुत्साह के स्थान पर प्रकाश और उत्साह ने अधिकार जमाया। जहां पहिले अहं अहं की वासना से वे लिप्त रहते थे वहां देशोपकार, देशोन्नति और देशसेवा ने नए विचार और नई वासनाएं उत्पन्न कीं। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतवासी मात्र के हृदय में मातृभूमि और मातृभाषा के उपकार की उत्कट कामना उत्पन्न हुई। हमारे देश के जिस अंश में यह अवस्था जिस क्रम से उपस्थित हुई उसी क्रम से ये भावनाएं, ये वासनाएं, ये उद्योग देख पड़ने लगे।

इन बातों पर ध्यान रखकर यदि देखा जाय तो जो अवस्था हमारी हिन्दी की ५० वर्ष पहिले थी उसमें अब आकाश पाताल का अन्तर पड़ गया है। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि हम अपने उद्योग, उत्साह और मनोवांछा के शिखर पर पहुंच गए हैं। ईश्वर न करे वह दिन कभी आवे क्योंकि इससे तो पहिये की गति के समान हमें क्रमशः नीचे उतरना पड़ेगा। अब तक कुछ विद्वानों का यह मत था कि जातियां उन्नति के शिखर पर चढ़ कर जब नीचे गिरी हैं तो फिर उनके ऊपर चढ़ने के कोई प्रमाण नहीं मिले हैं, पर चीन आदि देशों की जागृति से ये विचार भ्रमात्मक सिद्ध होने लगे हैं। इसलिये प्रार्थना यही है कि जगन्नियंता जगदीश्वर हमारी स्थिति का चक्र इतना बड़ा बनावे कि जिसमें अनन्त काल तक वह जो अब नीचे उतर कर ऊपर चढ़ रहा है निरन्तर ऊपर ही चढ़ता जाय।

अस्तु यद्यपि हमारी भाषा की दशा पूर्व की अपेक्षा बहुत कुछ संतोषजनक है तथापि अभी हमको उसकी हितसाधना के लिये बहुत कुछ करना बाकी है। हमारी भाषा की उन्नति के लिये अनेक सभाएं बनीं और अनेक अब भी वर्तमान हैं। इसके सेवियों की संख्या इस समय सैकड़ों पर, पढ़ने वालों की सहस्रों पर, बोलने वालों की लाखों पर और प्रेमियों की करोड़ों पर गिनी जा सकती है। पर फिर भी इसका प्रभाव समस्त देशव्यापी नहीं है, न इसका महत्व मुक्तकंठ से स्वीकार किया जाता है। इसमें अनेक त्रुटियां वर्तमान हैं, इसके भंडार की पूर्ति में बहुत कुछ कसर है। इस अवस्था में यह नितांत आवश्यक है कि इस भाषा के लेखक, पाठक, वक्ता तथा प्रेमी इसकी अवस्था पर विचार करें, इसकी उन्नति के उपाय सोचें और निश्चित मत को मान कर दृढ़तापूर्वक अग्रसर होने का उद्योग करें। इधर कई वर्षों से इसी मनोरथ की पूर्ति के लिये हिन्दी प्रेमियों के हृदय में उत्साह हो रहा था। बंगला, गुजराती, मराठी तथा उर्दू के साहित्य सेवियों के सम्मेलन होने लगे हैं और उन्होंने अपने उद्योगों में बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त की है। उत्साह देखा देखी बढ़ता है। हमारे हिन्दी प्रेमियों के मन में यह बात आई कि क्या हमारे लिये यह आवश्यक नहीं है कि हम एक स्थान पर मिल कर अपने विचारों पर परस्पर विचार करें, अपनी मातृभाषा की हितचिंतना करें और उसकी उन्नति के उपाय निश्चित करें। यह कामना कई वर्षों से लोगों के हृदयों में वर्तमान थी और कभी कभी इसका आभास भी हिन्दी समाचार-पत्रों द्वारा मिल जाता था पर जैसे नायक के विना सेना रणोन्मत्त नहीं हो सकती वैसेही किसी के अग्रणी न होने के कारण यह कामना कुछ काल तक हृदय में ही पानी की छोटी छोटी लहरों के समान उठती और बैठती जाती थी। धीरे धीरे इन्होंने ज़ोर पकड़ा और अन्त में ये इतनी सुदूर-व्यापिनी और प्रभावोत्पादिनी वीचिमाला होगई कि इनका वेग रोकना कठिन होगया और काशी की नागरी प्रचारिणी सभा ने जो हिन्दी की अन्य सभाओं में ज्येष्ठा है इस प्रवाह के साथ ही चलना उचित

समझा। निदान १ मई १९१० के अधिवेशन में सभा ने निश्चय किया कि शीघ्र ही हिन्दी साहित्य सम्मेलन किया जाय। इस समाचार के प्रकाशित होते ही चारों ओर आन्दोलन मच गया और सहानुभूति की वर्षा होने लगी। इससे बढ़कर इस बात का और प्रमाण क्या मिल सकता है कि यह कामना हिन्दी प्रेमियों के हृदय मन्दिर में बहुत दिनों से बंद थी। अवसर मिलते ही इसने अपने दर्शन दिए। अस्तु काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने एक स्वागतकारिणी समिति बनाकर इस कार्य को सुचारु रूप से करने का समस्त भार उनके हाथ में सौंप दिया। इस समिति के सभासदों की नामावली नीचे दी जाती है—

बाबू कालिदास माणिक
पण्डित केशवदेव शास्त्री
राय कृष्ण चन्द्र
राय कृष्णजी
पण्डित कृष्णाराम मेहता बी० ए०, एलएल० बी०
राव गोपालदास
बाबू गोपालदास
बाबू गौरीशङ्कर प्रसाद बी० ए०, एलएल० बी०
बाबू गंगाप्रसाद गुप्त [(मंत्री)
बाबू जुगलकिशोर
पण्डित देवीप्रसाद उपाध्याय
बाबू नन्दगोपाल
बाबू बलभद्रदास बी० ए०, एलएल० बी०
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा (उपमंत्री)
राव बैजनाथ दास
बाबू माधव प्रसाद
पण्डित रामचन्द्र शुक्ल
पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए०
गोस्वामी रामपुरी
राव शिवप्रसाद (सभापति)
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
डाक्टर शोभाराम मेहता
बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०
पण्डित सिद्धेश्वर शर्म्मा
महामहोपाध्याय पण्डित सुधाकर द्विवेदी
पण्डित सुरेन्द्रनारायण शर्म्मा

समिति ने शीघ्र ही यह शुभ समाचार सुनाते हुए एक सूचना प्रकाशित की जिसमें पूछा कि सम्मेलन कब किया जाय, सभापति कौन हो और कौन कौन से विषय विचार करने के लिये निर्धारित किए जांय। इस सूचना के प्रकाशित होते ही सम्मतियां आने लगीं। अधिकांश सम्मति से यह निश्चय हुआ कि सम्मेलन आश्विन नवरात्र में सोमवार सप्तमी (१० अक्तूबर) को प्रारम्भ हो और माननीय पंडित मदन मोहन मालवीय इसके सभापति बनाए जांय। तीसरे विषय पर जो सम्मतियां आईं उन्हें एकत्रित करके "प्रस्तावित मन्तव्य" रूप में वे प्रकाशित की गईं।

सभापति महाशय के चुनाव को छोड़ कर अन्य दोनों विषयों पर घोर आन्दोलन मचा। समय के सम्बन्ध में यह कहा गया कि नवरात्र में सम्मेलन नहीं होना चाहिये क्योंकि इस अवसर पर अनेक लोग उपस्थित न हो सकेंगे। इस सम्बन्ध में सभापति महाशय ने अपनी वक्तृता में जो कहा है उस पर ध्यान दिलाने के अतिरिक्त यह निवेदन करना है कि यह समय किसी व्यक्ति विशेष के आग्रह से या किसी को सम्मेलन से वंचित रखने के अभिप्राय से नहीं निश्चित किया गया था। अधिकांश लोगों की ही सम्मति को शिरोधार्य किया गया। आन्दोलन और मतभेद का होना सजीवता के चिन्ह हैं पर यह तभी तक होना चाहिये जब तक अधिकांश लोगों की सम्मति से कोई बात स्थिर न हो जाय। स्थिर हो जाने पर तो उसे मान ही लेना चाहिए। इस सम्बन्ध में सभा पर जो दुराग्रह और हठधर्मी के दूषण लगाए गए हैं वे अनुचित थे क्योंकि सभा को इस समय के निश्चित होने में किसी प्रकार की लाभ या हानि की सम्भावना न थी; न इससे उसके कार्य में सुगमता ही होती थी।

विचारणीय विषयों के सम्बध में यह कहना आवश्यक जान पड़ता है कि जो प्रस्तावित मन्तव्य प्रकाशित किए गए थे उनके साथ यह सूचना नहीं दीगई थी कि वे ही सम्मेलन में उपस्थित किए जांयगे, वरन वे इस अभिप्राय से उपस्थित किए गए थे कि जिसमें सम्मेलन में उपस्थित होने वाले महाशयों तथा अन्य हिन्दी प्रेमियों को यह अवसर मिल जाय कि वे इस बात पर विचार कर लें कि इनमें से कौन कौन से मन्तव्य स्वीकार करने योग्य हैं अथवा इनमें क्या परिवर्तन होना चाहिये या दूसरे किन नए मन्तव्यों को उपस्थित करना चाहिए। इस अवस्था में कुछ महाशयों ने जो यह मान लिया कि ये प्रस्तावित मन्तव्य ही सम्मेलन के लिये अन्तिम विचारणीय विषय हैं किसी अंश में उचित नहीं जान पड़ता। अस्तु इस सम्मेलन के सम्बन्ध में जो आन्दोलन हुआ उससे इस की आवश्यकता और उपयोगिता पूर्णता सिद्ध होगई।

इन विषयों के निश्चय हो जाने पर सम्मेलन की अन्य तैयारियां आरम्भ कीगईं और धीरे धीरे सब प्रबन्ध ठीक होगया।

पहिले यह विचार था कि सभा के बड़े हॉल ही में सम्मेलन का अधिवेशन किया जाय पर जब यह ज्ञात हुआ कि जो लोग उपस्थित होने वाले हैं उनकी संख्या इतनी है कि वे हॉल में न बैठ सकेंगे तो सभाभवन के पश्चिम वाले मैदान में सामियाना खड़ा करने की आयोजना की गई।

उपस्थित होने वाले सज्जनों के स्वागत, ठहरने आदि का भी उपयुक्त प्रबन्ध किया गया। निदान धीरे धीरे सब प्रबन्ध ठीक होगया और सम्मेलन के दिन मंडप की शोभा दर्शनीय थी। निस्संदेह हिन्दी के इतिहास में यह दिन बड़े आनन्द और सौभाग्य का था कि २०० से अधिक महाशय बाहर से इसमें सम्मिलित होने के लिये आए और सब मिलाकर कोई ५०० प्रतिनिधि उपस्थित थे और दर्शकों की संख्या किसी अवस्था में एक हजार से कम न थी।

जो कार्यविवरण इस रिपोर्ट में दिया गया है उसमें तीन दिन के कार्य का सविस्तर वर्णन है। पन्द्रह प्रस्ताव उपस्थित किए गए थे। इनमें से पहिले में सम्राट् सप्तम एडवर्ड की मृत्यु पर शोक प्रगट किया गया। दूसरे में नए सम्राट् पंचम ज्यार्ज के सिंहासनारूढ़ होने पर आनन्द प्रदर्शित किया गया और तीसरे में हिन्दी के चार भक्तों की मृत्यू पर शोक प्रगट किया गया। शेष बारह प्रस्तावों में से अन्त के चार प्रस्तावों का सम्बन्ध सम्मेलन के भविष्य से था। बाकी के आठ प्रस्ताव इस प्रकार हुए—

(१) अदालतों में नागरी का प्रचार।
(२) युनिवर्सिटी शिक्षा में हिन्दी का आदर।
(३) हिन्दी पाठ्य पुस्तकों के चुनाव का प्रबन्ध।
(४) राष्ट्र भाषा और राष्ट्र लिपि।
(५) स्टाम्पों और सिक्कों पर नागरी अक्षर।
(६) प्रांतीय कांफ्रेंसों द्वारा नागरी का आदर।
(७) बड़ोदानरेश को धन्यवाद।
(८) नृपतिगणों से नागरी प्रचार की प्रार्थना।

इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि जहांतक प्रस्तावों का सम्बन्ध था सम्मेलन में विशेष कर हिन्दी भाषा तथा नागरी अक्षरों के प्रचार की ओर अधिक ध्यान दिया गया। जो लेख सम्मेलन में उपस्थित किए गए और जिनका संग्रह अलग पुस्तकाकार प्रकाशित किया गया है उनमें अवश्य हिन्दी के कई अंगों पर विचार किया गया। कदाचित् यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि जहां हिन्दी भाषा और नागरी अक्षरों का प्रचार आवश्यक है वहां हिन्दी के भंडार की पूर्ति तथा उसकी त्रुटियों की निवृत्ति भी कम आवश्यक नहीं है। आशा है कि आगामी सम्मेलनों में दोनों बातों पर पूरा ध्यान दिया जायगा जिससे यह सम्मेलन अपने नामको चरितार्थ कर सके।

सब बातों पर ध्यान देकर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि यह सम्मेलन का पहिला अधिवेशन था, यह एक नए काम का प्रारम्भ था। इस अवस्था में जो कुछ कार्य हो सका है वही इसकी सफलता का सूचक है। केवल प्रस्तावों से इसकी सफलता का

अनुमान करना कदाचित् उचित न होगा। यदि एक भी प्रस्ताव उपस्थित न होता, यदि एक भी विषय पर विचार न किया जाता, यदि एक भी लेख न पढ़ा जाता, यदि नागरी प्रचार के लिये एक पैसा भी चन्दा न होता, यदि काशी नागरी प्रचारिणी के ऋणमुक्त होने की बात भी न उठती, तौभी ५०० हिन्दी प्रेमियों का एक स्थान पर तीन दिन तक मिलना और परस्पर अपने भावों तथा विचारों को प्रगट करना कम आनन्द और संतोष की बात नहीं है। पहिले खेत जोत कर तब उसमें बीज बोया जाता है और निरन्तर जलसिंचन और क्षेत्ररक्षा के अनन्तर उसमें वांछित वस्तु उत्पन्न होती है। इस लिये यह कहना अनुचित न होगा कि इस वर्ष के प्रथम सम्मेलन में भूमि जोत कर बीज बो दिया गया है। अब आगे यदि इसका सिंचन सुचारु रूप से हुआ और भली भांति इसकी रक्षा की गई तो निस्सन्देह इससे हमें अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त होगी।

यह आशा की गई थी कि यह रिपोर्ट शीघ्रही प्रकाशित की जायगी। इस निमित्त कुछ रिपोर्टर भी नियुक्त किए गए थे पर वे "संक्षेप प्रणाली" द्वारा वक्तृताएं लिखने में कृतकार्य न हो सके। इससे जिन जिन महाशयों ने वक्तृताएं दी थीं उनसे वे लिखवानी पड़ीं। कुछ वक्तृताएं अब तक भी प्राप्त न हो सकीं। परन्तु अब उनका आसरा देखना व्यर्थ है। इसलिये जो कुछ सामग्री हो सकी उसीकी सहायता से यह रिपोर्ट तैयार करके प्रकाशित की जाती है। जिन महानुभावों ने इसके तैयार करने में सहायता दी है उन सब को हृदय से धन्यवाद दिया जाता है।

श्रीनगर
१८-६-११ } श्यामसुन्दरदास।

प्रथम हिन्दी साहित्य-सम्मेलन काशी।

कार्यविवरण—पहिला भाग।

प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन का कार्य काशी नागरी प्रचारिणी सभा के हाते में एक बड़े मंडप के नीचे सोमवार तारीख १० अक्तूबर १९१० को दिन के ११॥ बजे प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन मंडप में एक ओर एक विशाल मंच पर सभापति महाशय तथा अन्य महानुभावों के लिये स्थान निर्धारित किया गया था। साम्हने मंच के नीचे लम्बे लम्बे टेबुलों की एक श्रेणी सजाई गई थी जहां समाचारपत्रों के सम्पादकों और प्रतिनिधियों के लिये स्थान था। इनके पीछे कई पंक्तियों में प्रतिनिधियों तथा दर्शकों का स्थान था। यह मंडप फूल और पत्तों से खूब सजाया गया था और देखने में अत्यन्त मनोहर जान पड़ता था। इस दिन निश्चित समय के बहुत पहिले ही से प्रतिनिधियों और दर्शकों की भीड़ एकत्रित होने लगी और ११ बजे सारा मंडप भर गया। कार्य आरम्भ होने का समय ११ बजे निश्चित किया गया था पर सभापति महाशय बड़ी धूम धाम के साथ लाए गए थे, इस लिये कुछ विलंब हो गया। ११॥ बजे सभापति महाशय सम्मेलन मंडप में पधारे और उनके आते ही कार्य आरम्भ किया गया।

पहिला दिन।

सब महाशयों के यथा स्थान बैठ जाने पर स्वागतकारिणी समिति के सभापति राय शिवप्रसाद ने सभापति का आसन ग्रहण किया और बाबू हरिदास माणिक ने सुन्दर स्वर में पंडित रामचन्द्र शुक्ल रचित निम्न लिखित मंगलमय प्रार्थना की—

जय जय जगनायक करतार।

करत नाथ कर जोरि आज हम बिनती बारंबार।
प्रात समीर सरिस भारत मँह हिन्दी करै प्रसार॥
जय जय०॥

खोलै परसि उनींदे नयनन दरसावैं संसार।
बुध हिय सागर बीच उठावै भाव तरंग अपार॥
जय जय०॥

देश देश के मृदु सुमनन सों भरि सौरभ को भार।
बगरावै यदि भूमि बीच जो हरै समाज विकार॥
जय जय०॥

मेटै सब अज्ञान ताप करि शीतलता संचार
विविध कला कौशल किसलय कल खदरावै प्रति द्वार॥
जय जय० ॥

इसके अनन्तर हरिश्चन्द्र स्कूल के कतिपय विद्यार्थियों ने हारमोनियम के साथ स्वागत सम्बन्धी उत्साहवर्धक निम्नलिखित गान गाया जिसे हरिश्चन्द्र स्कूल के अध्यापक बाबू जगन्नाथदास बी. ए. ने रचा था—

आओ ! आओ ! भारतवासी ।
क्या बंगाली ! क्या मदरासी ! ॥
क्या पंजाबी ! क्या गुजराती ! ।
क्या सिंधी ! क्या पर्वतवासी ! ॥
हम हैं एकहि देश के वासी ।
एकहि बोली बोलें खासी ॥
हिन्दी को सब मिलि अपनावैं ।
वाहीको सब सीस नवावैं ॥
हिन्दी मेरी प्यारी प्यारी ।
नख सिख से लगती उँजियारी ॥
सुन्दर डौल सुडौल सुहाई ।
अंग अंग सुन्दरता छाई ॥
सिर में बेनी गुथी बनाई ।
ओढ़नि तापर परम सुहाई ॥
पायन में पैजनिया भाई ।
सिर पर मुरछल चँवर ढुराई ॥
ऐसी हिन्दी महरानी को ।
देव नगर की सुख दानी को ॥
सरल स्वभाव दया खानी को ।
सत्यव्रती अखिला मानी को ॥
आओ हम सब मिलिकै सारे ।
तिलक हिन्द का और जुहारे ॥
करैं पूरती भंडारे की ।
दै दै तिन भेंट यथा सक्ती ॥
सम्मिलनी करके हिन्दी की ।
कह डालैं है जो कुछ जी की ॥
करि डालैं त्रुटि दूर सबै मिलि ।
जामें हिन्दी राज्य चलै चलि ॥
राज काज में याहि चलावैं ।
सिक्कन पर भी याहि खुदावैं ॥
दिग दिगन्त में यश फैलावैं ।
हिन्दी की जय ध्वजा उड़ावैं ॥

गान हो चुकने पर स्वागतकारिणी समिति के सभापति राय शिवप्रसाद ने निम्नलिखित शब्दों में उपस्थित सज्जनों का स्वागत किया—

स्वागतकारिणी समिति के सभापति की वक्तृता ।

" माननीय महोदयो,

मेरे प्यारे प्रान प्रिय, भाषा सेवक भ्रात ।
निज भाषा हित करि कसे, हम कहँ आजु लखात॥
काशी अस यह ठौर धन, जहां मिले सब आज ।
धन्य दिवस जो यह जुड्यो, 'हिन्दी हेत समाज'॥

हिन्दी के इतिहास में आज का दिन सदा स्मरणीय बना रहेगा कि जब हिन्दी के इतने प्रेमी और सहायक दूर दूर से अनेक प्रकार के शारीरिक कष्ट और आर्थिक हानि उठा कर इस सम्मेलन में सम्मिलित होने और हिन्दी के हितसाधन के उपायों पर विचार करने के लिये इस स्थान में एकत्रित हुए हैं। हिन्दी के आधुनिक इतिहास में अनेक ऐसी घटनाओं का वर्णन हो सकता है जिनमें अनेक महानुभावों ने मिलकर अपनी मातृभाषा की उन्नति के लिये उद्योग किया है तथा साथही हिन्दी के विद्वानों ने उसके साहित्य की पूर्ति में अपनी अपनी शक्ति के अनुसार सफलता प्राप्त की है । पहिले पहिल प्रयाग के " हिन्दू समाज " ने दो तीन वर्षों तक बड़ी धूमधाम से वार्षिक अधिवेशन करके इस कार्य्य के करने की चेष्टा की परन्तु खेद का विषय है कि वह समाज चिरकाल तक स्थिर न रह सका। दूसरा उद्योग अलीगढ़ की "भाषा संवर्धिनी सभा" है । इसके मूल आधार और प्राण बाबू तोताराम जी थे । इसके द्वारा अनेक अच्छे अच्छे ग्रन्थ प्रकाशित हुए। इसका ढङ्ग सब से निराला और प्रशंसनीय था।

दुःख है कि यह सभा भी बहुत दिनों तक जीवित न रह सकी। तीसरा उद्योग मेरट की "देवनागरी प्रचारिणी सभा" है जिसके जीवनाधार पण्डित गौरीदत्त जी थे। इस सभा ने अनेक वर्षों तक हिन्दी की उन्नति के लिये उद्योग किया, यद्यपि इसकी उद्योगसीमा विशेष कर मेरट जिले के अन्तर्गत ही रही। पश्चिमी जिलों में जहां मुसलमानों का प्रभुत्व बड़े जोर के साथ अनेक काल तक बना रहा और जहां उर्दू देवी ने जन्म पाकर अपना बल प्रताप बढ़ाया, हिन्दी के लिये प्रेम उत्पन्न करना और उस की उन्नति का बीजारोपण करना कुछ कम साहस और अध्यवसाय की बात नहीं है। जिस किसी ने पण्डित गौरीदत्त जी के दर्शन किए होंगे, उनके उद्योगों का कुछ आभास पाया होगा, उसने हिन्दी का दूसरा ऐसा अनन्य भक्त कदाचित ही देखा होगा। अस्तु, इनकी वृद्धावस्था तदनन्तर मृत्यु के कारण यह सभा भी शिथिलता के चिन्ह दिखाने लगी और आज दिन उसकी वह अवस्था नहीं है जो विकाश सिद्धान्त के नियमानुसार सब सांसारिक पदार्थों की होती रहती है। कदाचित् यह शिथिलता तितली की नींद के समान हो और उसका पुनरुत्थान वैसाही मनोहर और आश्चर्यदायक भी हो। चौथा उद्योग काशी की "नागरी प्रचारिणी सभा" है जिसने आज आप लोगों को यहां निमंत्रित करने का साहस किया है। इस सभा का सूत्रपात वटवृक्ष के बीज के समान १६ जुलाई सन १८९३ ई० को काशीधाम में हुआ था। उस समय कुछ नवयुवक विद्यार्थियों ने मिलकर अपनी मातृभाषा की उन्नति का विचार किया था। किसी को यह स्वप्न में भी आशा न थी कि उस छोटे से बीज से समय पाकर इतना बड़ा वृक्ष खड़ा हो जायगा जिसकी शीतल छाया में ८०० हिन्दी प्रेमी एकत्रित होकर उस वृक्ष की पुष्टि का निरन्तर उद्योग करेंगे। इस सभा से मेरा घनिष्ट सम्बन्ध रहा है और अब भी है। इस लिये इच्छा रहते हुए भी इसके विषय में मैं विशेष कुछ नहीं कह सकता। मेरी इस त्रुटि को आप लोग क्षमा करेंगे। पांचवां उद्योग आरे की "नागरी प्रचारिणी सभा" है। इसको स्थापित हुए थोड़े ही वर्ष हुए हैं पर इस बीच में इसने कई उपयोगी काम किए हैं और उसके द्वारा और भी अधिक अच्छे कार्यों के होने की आशा की जाती है। छठां उद्योग कलकत्ते की "एकलिपिविस्तार परिषद्" है। उसने अपना उद्देश्य नागरी लिपि का सार्वभौम प्रचार स्थिर कर रक्खा है। इस परिषद् का एक पत्र भी निकलता है जिसमें भिन्न भिन्न देशभाषाओं के लेख देवनागरी अक्षरों में छपते हैं। इस समय दिनों दिन देवनागरी लिपि के प्रचार में राष्ट्रमत बढ़ता चला जाता है और यदि इस अवसर का हम लोग उपयुक्त प्रयोग कर सकें तो हमें अपने उद्देश्य की सफलता में बहुत कुछ सहायता पहुंचेगी। सातवां उद्योग प्रयाग की "नागरी प्रवर्धिनी सभा" है। इसे स्थापित हुए दो तीन वर्ष हुए हैं। इस बीच में ही इसके उद्योग से कई अच्छे अच्छे ग्रन्थ छपे हैं। इस सभा का भविष्य निस्सन्देह बहुत कुछ आशाजनक है। इन सभाओं के अतिरिक्त और कई सभाएं हैं जो अपने व्रत पालन में लगी हुई हैं जैसे कलकत्ते का "हिन्दी साहित्य परिषद्" छत्रपुर की "काव्यलता सभा" इसलामपुर की "हिन्दी भाषा प्रचारिणी सभा" जौनपुर की "नागरीरक्षिणी सभा" लखनऊ की "मातृभाषा प्रचारिणी सभा" जालन्धर और मैनपुरी की "नागरी प्रचारिणी सभाएँ" इत्यादि।

महाशयो, यह सब कथा कहने से मेरा तात्पर्य्य आप लोगों का ध्यान इस बात पर दिलाने का है कि इस समय कई स्थानों में सभाएं स्थापित हैं जो हिन्दी भाषा की उन्नति और उसके साहित्य की पूर्ति के लिये उद्योग कर रही हैं परन्तु वे सब एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं, किसी सम्बन्धसूत्र से बंधी नहीं हैं और न एक दूसरे की विशेष रूप से सहायक ही हैं। जहां यह सत्य है कि अलग अलग उद्योग करने की अपेक्षा कुछ पुरुषों के एक साथ मिल कर उद्योग करने से विशेष सफलता होती है और साथही किसी एक पर इतना बोझ नहीं पड़ जाता कि वह उसके नीचे दब

जाय उसी प्रकार अलग अलग कई सभाओं के उद्योग करने से उतना लाभ नहीं हो सकता जितना उनके आपस में मिल कर करने से हो सकता है। मेरा अनुमान है कि इस सम्मेलन द्वारा एक सभा का दूसरे से प्रेम निस्सन्देह बढ़ेगा जिसमें अपने उद्देश्यों में हमें अवश्य सफलता प्राप्त होगी। यह समय ऐसा है जब कि चारों ओर सब भाषा वाले अपनी अपनी मातृभाषा की उन्नति के उद्योग में लगे हुए हैं परन्तु हिन्दीभाषाभाषी अब तक कार्यक्षेत्र में आने में विलम्ब कर रहे हैं। इन सब कारणों से मैं समझता हूं कि यह अत्यन्त आवश्यक था कि हिन्दी के प्रेमीगण एक स्थान पर एकत्रित होकर अपनी मातृभाषा की अवस्था पर विचार करें और उसकी उन्नति के उपायों को सोचें। मुझे इस बात पर आज बड़ा आनन्द होता है कि हिन्दी के आधुनिक इतिहास में आज यह पहिला दिन है जब कि हिन्दी के प्रेमी अपनी मातृभाषा की सेवा ही के लिये एकत्रित हुए हैं और मैं अपने को बड़ा सौभाग्यवान मानता हूं कि मुझे आप महानुभावों को स्वागत करने का गौरव और आनन्द प्राप्त हुआ है। यह कार्य्य जो मुझे सौंपा गया है सर्वथा मेरी योग्यता और बुद्धि के बाहर है। काशी ऐसी त्रिलोक से न्यारी विद्यापीठ में अनेक हिन्दी सेवक हो गए हैं और अब भी वर्तमान हैं जिन्होंने अपनी साहित्य-सेवा से उसके भंडार की पूर्ति की है और उसके गौरव को बढ़ाया है। ऐसे स्मरणीय अवसर पर यह सर्वथा उचित था कि इन महानुभावों में से कोई आप का स्वागत करता।

महाशयो! इस अवस्था के रहते हुए मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूं कि जो वाक्य इस समय मेरे मुंह से आप लोगों से स्वागत में निकल रहे हैं वे हार्दिक और भक्ति भाव पूर्ण हैं। मुझ में इतनी शक्ति नहीं कि मैं मानसिक भाव को स्पष्ट शब्दों द्वारा आप लोगों पर प्रगट कर सकूं। तिस पर विशेष आनन्द के समय पर यह प्रायः देखने में आता है कि बड़े बड़े लोगों का मुंह बन्द हो जाता है। इस अवस्था में यदि मेरे इस कथन में उपयुक्त शब्दों का अभाव पाया जाय तो उसके लिये मैं दोषी नहीं ठहराया जा सकता। पूज्य महाशयो! इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप लोगों के यहां पधारने से नागरी प्रचारिणी सभा कृतार्थ हुई है और वह अपने को बड़ी सौभाग्यवती समझती है कि आप लोगों ने उसके निमंत्रण को स्वीकार कर इस समय यहां आने की कृपा की है।

जिस कार्य के लिये आप लोग यहां एकत्रित हुए हैं वह बड़े महत्व का है। मातृभाषा की सेवा करने का सौभाग्य सब को प्राप्त नहीं होता। धन्य हैं वे लोग जो इसकी सेवा के व्रती हैं और धन्य है वह देश जहाँ ऐसे व्रती लोगों की अधिकता है। भारतवर्ष में अनेक देशभाषाओं का प्रचार है। सन् १९०१ की मनुष्यगणना के समय १८५ भाषाओं का पता लगा था। इनमें से २३ युरोपीय भाषाएं हैं और १५ दूसरे एशियाई अफ्रिकन आस्ट्रेलियन देशों की हैं। शेष १४७ भाषाओं में से २ मालय ९२ इंडोचीनी और ४ ऐसी हैं जो गणना योग्य नहीं। शेष ४९ भाषाओं में से २४ द्राविण और २५ आर्य्य हैं। द्राविण भाषाओं में से तेलगू, तामिल, कनारी और मलयालम ये चार प्रधान हैं जिनका साहित्य ध्यान देने योग्य है और जिन में प्रत्येक के बोलने वालों की संख्या २० लाख से अधिक है। शेष २० असंस्कृत और अविकासित अवस्था में हैं और संभवतः समय पाकर वे लुप्त हो जांय। इन चारों मुख्य द्राविण भाषाओं में से तेलगू प्रधान है और इसके बोलने वालों की संख्यां २ करोड़ से अधिक है। यह भाषा भारतवर्ष की आर्य भाषाओं से बहुत ही भिन्न है। इसका व्याकरण, इसकी शब्दावली, सारांश यह कि इसकी सारी बनावट किसी दूसरी भाषा से नहीं मिलती। सम्भव है कि यह तामिल मलयालम को अपने उदर में लीन करले। कनाडी की बनावट मराठी से बहुत कुछ मिलती जुलती है। २५ आर्य भाषाओं के बोलने वालों की संख्या २२ करोड़ के लगभग है और इनका प्रचार

भारतवर्ष के अधिक भाग में है। इनमें से १६ तो ऐसी हैं जिनके बोलने वालों की संख्या १० लाख से अधिक है और ७ ऐसी हैं जो एक करोड़ से अधिक सेवकों के रखने का अभिमान कर सकती हैं। इन सातों के नाम ये हैं:—

बंगला—	४, ४६, २४, ०४८
पश्चिमी हिन्दी—	३, ९३, ६७, ७७९
पूर्वी हिन्दी—	२, ०९, ८६, ३५८
बिहारी—	३, ७०, ७८, ९९०
मराठी—	१, ८२, ३७, ८९९
पंजाबी—	१, ७०, ७०, ९६१
राजस्थानी—	१, ०६, १७, ७१२
	१८, ८२, ६१, ७४७

इस प्रकार मुख्य आर्य भाषाओं के बोलने वालों की संख्या ६ करोड़ के लगभग है। अब यदि पूर्वी और पश्चिमी हिन्दी बोलने वालों की संख्या ही ले ली जाय तो वह ६ करोड़ से अधिक होती है जितने सेवक और किसी भाषा के नहीं हैं। यदि हम हिन्दी से मिलती हुई दूसरी भाषाओं (यथा बिहारी, पञ्जाबी, राजस्थानी) की भी गणना इसके साथ कर लें तो इसके सेवकों की संख्या १२ करोड़ ५० लाख हो जाती है। इस प्रकार भविष्यत् में हिन्दी, बंगला, मराठी और तेलगू यही चार भाषाएं ऐसी हैं जिनमें परस्पर उच्च आसन ग्रहण करने के लिये स्पर्धा हो सकती है। परन्तु हिन्दी के बोलने वालों का सामना करने का साहस किसी को नहीं हो सकता। यदि इसके समझने वाले भी सम्मिलित कर लिए जांय तब तो यह एक प्रकार से अजित हो जाती है और यदि इन लोगों में एका रहा और वे अपनी मातृभाषा की सेवा में दत्तचित्त रहे तो निस्संदेह यह एक दिन सर्वोच्च आसन पर विराजमान होगी। अतएव हम हिन्दीभाषियों के लिये यह बात बड़े गौरव तथा अभिमान की है और हम लोगों का यह परम धर्म्म है कि इसके हित साधन में तत्पर रह कर अपने कर्तव्य का पालन करें।

इसी आशा से आप लोग यहां निमंत्रित किए गए हैं कि इन बातों का विचार करें कि हिन्दी की उन्नति किस प्रकार हो सकती है, उसका साहित्य कैसे भरा जा सकता है, उसके प्रचार में सुगमता कैसे हो सकती है, वह राष्ट्रभाषा कैसे बन सकती है और उसके द्वारा देश में विद्या का प्रचार कैसे हो सकता है। महाशयो! सूक्ष्म रूप से येही प्रश्न हैं जिन पर विचार करके भविष्यत् कार्य प्रणाली को स्थिर करने के लिये आप लोगों को कष्ट दिया गया है। इनमें से प्रत्येक प्रश्न पर अपने विचारों को प्रगट करके मैं व्यर्थ आपका समय नहीं लिया चाहता। सम्मेलन समिति ने प्रस्तावित मन्तव्य आप लोगों की सेवा में उपस्थित कर दिए हैं। उनके पढ़ने से ही आप लोगों का ध्यान इस ओर आकर्षित हो गया है और निस्संदेह आप लोगों ने इनके सम्बन्ध में पूर्वापर का विचार किया होगा। इस अवस्था में मेरे कुछ विशेष निवेदन करने की आवश्यकता नहीं है फिर भी आधुनिक हिन्दी के प्राण उसके उद्धारक और उन्नायक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के इन महत्वपूर्ण वाक्यों पर आपका ध्यान दिलाऊंगा—

निज भाषा उन्नति अहै,
सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के,
मिटत न हिय को सूल ॥ १ ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब,
उठहु मिटावहु सूल।
निज भाषा उन्नति करहु,
प्रथम जु सबको मूल ॥ २ ॥
विविध कला शिक्षा अमित,
ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देशन सों लै करहु,
भाषा मांहि प्रचार ॥ ३ ॥
प्रचलित करहु जहान में,
निज भाषा करि यत्न।
राज काज दर्बार में,
फैलावहु यह रत्न ॥ ४ ॥

प्यारे हरिश्चन्द्र ने बहुत पहले ही हमारे लिये पथप्रदर्शन करा दिया है। अब केवल देश काल पात्र पर विचार कर इसी पथ के पथिक बनना और दृढ़ चित्त हो निर्दिष्ट स्थान पर दृष्टि रखते हुए अपनी यात्रा को पूर्ण करना ही हमारा कार्य है। मुझे विश्वास है कि इस सम्मेलन द्वारा हमारे इष्ट की सिद्धि होगी और इसका फल बहुत ही मधुर होगा तथा भारतवासी और विशेष कर उनमें से हिन्दी भाषीमात्र उसके रसास्वादन से तृप्त और उत्साहित होंगे। महाशयो! एक बात पर मैं आपका ध्यान विशेष रूप से दिलाया चाहता हूं। इस सम्मेलन की ओर केवल हिन्दी भाषी ही अतृप्त नेत्रों से नहीं देख रहे हैं परन्तु अनेक अन्य आर्यभाषाभाषी भी उत्साह उत्कंठा और प्रेम की दृष्टि से देख रहे हैं। इस स्थान पर मैं उस कानफरेन्स का उल्लेख करना आवश्यक समझता हूं जो सन् १९०९ में बड़ोदा में हुई थी। इस कानफरेन्स में सम्मिलित होने वाले अधिकांश ऐसे महानुभाव थे जिनकी हिन्दी मातृभाषा नहीं है परन्तु इन सब लोगों ने मुक्तकंठ से इस बात को स्वीकार किया कि देवनागरी अक्षर तथा हिन्दी भाषा सारे भारतवर्ष में आदरणीय हो। हमारा उत्साह इस बात को जान कर और भी बढ़ जाता है कि इसके सञ्चालक श्रीमान् बड़ोदानरेश तथा प्रसिद्ध देशभक्त स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्त और डाक्टर रामकृष्ण गोपाल भंडारकर थे। इसलिये जहां आपका कार्य कुछ कठिन हो गया वहां साथ ही यह बात है कि यह अवस्था आप के लिये अत्यन्त गौरव तथा उत्तर दायिता की है। मुझे पूरा विश्वास है कि आप लोग इस बात पर ध्यान रखकर अपने कार्य में दत्तचित्त हो कर लगेंगे और भारतवर्ष के आर्य भाषा भाषियों को अपने निष्पक्ष विचार और अपनी कर्तव्यनिष्ठा से संतुष्ट, उत्साहित और आनन्दित करेंगे।

इस सम्मेलन को फलीभूत करने में अनेक महाशयों ने अनेक प्रकार से हमारी सहायता की है जिन सब के हम अत्यन्त अनुगृहीत हैं। हम समाचारपत्रों के सम्पादकों के भी बाधित हैं। प्रायः सभी हिन्दी पत्रों ने सम्मेलन का प्रबन्ध करने में हमारा उत्साह बढ़ाया है। नवरात्र में इस सम्मेलन को करने के कारण कुछ मतभेद अवश्य था परन्तु हम लोग विवश थे। जितने हिन्दी प्रेमियों की सम्मति हम लोगों के पास आई उनमें से अधिक महाशयों ने यही समय पसंद किया।

अस्तु महाशयो, मैं नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से आपको निमंत्रण स्वीकार करने के लिये धन्यवाद देता हुआ और साभिमान आप का हृदय से स्वागत करता हुआ अब यह प्रार्थना करूंगा कि इस सम्मेलन का सभापति चुन कर आप इस शुभकर यज्ञ को प्रारंभ कीजिए। ऐसे बड़े महत्व के कार्य्य के लिये एक योग्य और मान्य हिन्दी सेवक का सभापति होना भी आवश्यक ही है। यद्यपि आप लोग इस सम्बन्ध में अपनी इच्छा को पहिले ही से प्रगट कर चुके हैं तथापि प्रचलित रीति के अनुसार सभापति का चुनाव इस सम्मेलन में होना उचित है। अतएव मैं पूज्यवर महामहोपाध्याय पण्डित सुधाकर द्विवेदी जी से प्रार्थना करता हूं कि वे इस प्रस्ताव को आप लोगों के सम्मुख उपस्थित करने की कृपा करें।"

सम्मेलन के सभापति का चुनाव।

राय शिवप्रसाद की प्रार्थना के अनुसार महामहोपाध्याय पण्डित सुधाकर द्विवेदी ने यह प्रस्ताव करते हुए कि माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय सभापति चुने जांय कहा—

"महाशयो, यह कहना है कि यह बूढ़ा आदमी आप लोगों से जो कुछ कहना चाहता है उसे आप ध्यान दे सुनलें। बूढ़ों में चञ्चलता नहीं होती किन्तु युवकों में और नवयुवकों में चञ्चलता दिखाई देती है, इस समय जो काम आप के साम्हने है वह बड़े महत्व का है। इसके सम्पादन के लिये इस सम्मेलन का सभापतित्व किसी ऐसे पुरुष को देना चाहिए

जिनमें चञ्चलता न हो, गम्भीरता हो और जो बड़े बड़े कामों पर बड़े विचार से विचार करें। मेरी समझ में जिस पुरुष को गवर्न्मेण्ट ने प्रधान माना, उन्हीं माननीय पण्डित मदन मोहन मालवीय महाशय इस पद के लिये सर्वतोभाव से उपयुक्त पुरुष हैं। मैं इन्हीं मालवीय महाशय को इस सम्मेलन का सभापति बनाने का प्रस्ताव करता हूं।"

पण्डित श्यामविहारी मिश्र एम. ए. इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा–

"अपने बड़े सौभाग्य से मुझे एक माननीय पुरुष के सम्बन्ध में कुछ कहने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। महामहोपाध्याय पण्डित सुधाकर द्विवेदी महाशय ने जिन माननीय महाशय को सभापति बनाने का प्रस्ताव किया है उनसे समस्त युक्त प्रदेश ही क्यों समग्र भारतवर्ष भली भांति परिचित है, जिनका सम्मान युक्त प्रदेश के प्रायः सभी पूज्य-बुद्धि महाशय करते हैं, जिनका सम्मान इस देश के भिन्न भाषाभाषी भी करते हैं, जिन महाशय ने अपनी योग्यता के कारण बृटिश राज्य से सम्मान प्राप्त किया है, उन्हीं पण्डित मदन मोहन मालवीय महाशय को इस सम्मेलन का सभापति बना हमें अपने को धन्य समझना चाहिए। जिस समय मालवीय जी ने हिन्दी की उन्नति का यत्न करना आरम्भ किया था उन दिनों हिन्दी के जानने वाले बहुत थोड़े थे, उन दिनों हिन्दी की उन्नति का यत्न करने में हिन्दी सेवियों को अगणित असुविधाओं से साम्हना करना पड़ता था। मालवीय जी उन दिनों हिन्दी की उन्नति के सम्बन्ध में हिन्दी में बहुतेरी वक्तृताएं दिया करते थे। मुझे याद है कि जब मैं बहुत छोटा था तब एक दिन मैंने मालवीय जी की वक्तृता सुनी थी, उससे पहिले कभी वैसी वक्तृता मैंने सुनी न थी, वह घड़ी मुझे आजतक याद है। मालवीय जी ने हिन्दी को कभी नहीं बिसारा, इसकी उन्नति का जैसा उद्योग आप पहिले करते थे वैसा ही अब भी कर रहे हैं। हिन्दी की जो उन्नति आज दिखाई देती है उसमें मालवीय जी का उद्योग मुख्य कहना चाहिए। आपही के यत्न से हिन्दी को अदालतों में जगह मिली है। यह बात सब लोगों को मालूम रह सकती है कि तरह तरह के कामों में फँसे रहकर भी मालवीय जी हिन्दी की सेवा किया करते हैं। अभ्युदय का जन्म दे आप हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। हाल में आपने "मर्य्यादा" नाम की मासिक पुस्तक निकलवा उस के द्वारा हिन्दी की सेवा करने का प्रयत्न किया है। इन कारणों से मेरी सम्मति में इनसे बढ़कर इस अवसर पर हमें दूसरा सभापति नहीं मिल सकता। इसलिये मैं महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी जी के प्रस्ताव का सहर्ष अनुमोदन करता हूं।"

इस प्रस्ताव का सेठ दामोदर दास राठी ने निम्नलिखित वाक्यों में समर्थन किया—

"हिन्दी भाषा की जो सेवा श्री पण्डित मदन मोहन मालवीय महाशय ने की है उसे हमारे पहिले के वक्ता आप के सामने वर्णन कर चुके हैं। इन दिनों समग्र भारत की विद्वन् मण्डली ने मिल यह सिद्धान्त किया है कि हिन्दी ही राष्ट्रभाषा हो। इस में सन्देह नहीं कि यदि कोई देशी भाषा भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है तो वह हिन्दी ही है। ऐसी ही हिन्दी भाषा के साहित्य सम्मेलन का सभापति सिवाय श्रीयुत पण्डित मदन मोहन मालवीय के और कौन हो सकता है। इन महाशय का सम्बन्ध केवल अपने ही प्रांत से नहीं वरन् भारत के भिन्न भिन्न प्रदेशों से भी घनिष्ट है। ऐसे ही पण्डित मदन मोहन मालवीय जी के सभापतित्व का समर्थन करते हुए मुझे बड़ाही आनन्द होता है।"

बाबू हरिकृष्ण जौहर ने भी इस प्रकार इस प्रस्ताव का समर्थन किया—

"भाइयो! बड़े सौभाग्य का नवीन दिन उपस्थित हुआ है। आज हिन्दी साहित्य के परम अभ्युदय का चिरस्मरणीय दिन होगा। जानते हैं कि आज आप सज्जन किस महान उद्देश्य से यहां सम्मिलित हुए हैं, जानते हैं कि कौनसा अनुराग, कौनसी आकर्षण शक्ति आप सज्जनों को यहांतक

खींच लाई है। आज हिन्दी की उन्नति के सम्बन्ध में विचार करने के लिये और हिन्दी प्रेम के अनुरोध ही से हम इतने हिन्दी प्रेमी तथा हिन्दी सेवक यहां एकत्रित हुए हैं। आप लोगों को खबर हो या न हो किन्तु आज इस समय यहां जो कुछ हो रहा है वह हिन्दी इतिहास में उज्ज्वलाक्षरों में लिखे जाने का प्रयोजनीय मसाला बन रहा है। इस प्रयोजनीय कार्य्य में हमें एक सुयोग्य पथप्रदर्शक का प्रयोजन है, मैं पूर्ववक्ता महाशय के अनुमोदन को समर्थन करता हुआ विशुद्धान्तःकरण से यह बात स्वीकार करता हूं कि इस पद के लिये श्री पण्डित मदन मोहन मालवीय महाशय ही उपयुक्त पुरुष हैं।"

पण्डित नन्दकुमार देव शर्मा ने भी इस बात का समर्थन किया और कहा—

"मैं मालवीय जी के विषय में कुछ कहना नहीं चाहता, क्योंकि उन्होंने हिन्दी साहित्य की जो सेवा की है वह विश्व भर में प्रसिद्ध है। सिवाय इसके उन्होंने देशहित के बहुतेरे कार्य्य किए हैं। पण्डित श्याम बिहारी मिश्र ने मालवीय जी के सम्बन्ध में कहने की प्रायः सभी बातें कह डाली हैं। इसमें सन्देह नहीं कि मालवीय जी सब के श्रद्धाभाजन और हिन्दी के बहुत बड़े सेवक हैं। यही कारण है कि मालवीय जी इस सभा के सभापति किए जांय। मुझे विश्वास है कि सभी लोग मेरे इस समर्थन का समर्थन करेंगे।"

सभापति की वक्तृता।

इस प्रकार माननीय पंडित मदन मोहन मालवीय जी के सभापति चुने जाने के मन्तव्य का प्रस्ताव, अनुमोदन और समर्थन हो चुकने पर सब उपस्थित महाशयों ने हर्षपूर्वक इसे स्वीकार किया और मालवीय जी महाशय ने सभापति के आसन पर सुशोभित होकर निम्नलिखित वक्तृता दी।

"मुझ को बहुत लोग जानते हैं कि मैं वाचाल हूं लेकिन मुझ को जब काम पड़ता है तो मैं देखता हूं कि मेरी वाणी रुक जाती है। यही दशा इस समय मेरी हो रही है। प्रथम तो जो अनुग्रह और आदर आप लोगों ने मेरा किया है उसके भार से ही मैं दब रहा हूं, इसके उपरान्त मेरे प्रिय मित्रों और पूज्य विद्वानों ने जिन शब्दों में मेरे सभापतित्व का प्रस्ताव किया है उसने मेरे थोड़े से सामर्थ्य को और भी कम कर दिया है। सज्जनो, मैं अपने को बहुत बड़भागी समझता यदि मैं उन प्रशंसावाक्यों के सर्वे हिस्से का भी अपने को पात्र समझता जो इस समय इन सज्जनों ने मेरे विषय में कहे हैं। हां, एक अंश में मैं बड़भागी अवश्य हूं। गुण न रहने पर भी मैं आप की मण्डली में गुणी के समान सम्मान पाता हूं। इसी के साथ मुझको खेद होता है कि इतने योग्य और विद्वानों के रहते हुए भी मैं इस पद के लिये चुना गया। फिर भी मैं आप के इस सम्मान का धन्यवाद करता हूं जो आपने मेरा किया है। मेरा चित्त कहता है, कि इस स्थान में उपस्थित होने के लिये हमारे हिन्दी संसार में अनेक विद्वान थे और हैं जिन में कुछ यहां भी उपस्थित हैं और जिन को यदि आप इस कार्य्य में संयुक्त करते तो अच्छा होता और कार्य्य में सफलता और शोभा होती। अस्तु, बड़ों से एक उपदेश मैं ने सीखा है। वह यह है, कि अपनी बुद्धि में जो आवे उसे निवेदन कर देना। मित्रों की आज्ञा, मित्रों की मण्डली की आज्ञा पालन करना मैं अपना परम धर्म्म समझता हूं। अनुरोध होने पर अन्त में मैं ने अपने प्यारे मित्रों से प्रेमपूर्वक निवेदन किया कि साहित्य-सम्मेलन जिसका सभापति होने का सौभाग्य मुझे प्रदान किया गया है उसके कर्तव्य का पालन मेरा परम धर्म्म है। मैं आप से दूर रहता हूं। तौ भी मैं कदाचित निर्भय कह सकता हूं कि हिन्दी साहित्य का रसपान करने में मुझको अन्य मित्रों की अपेक्षा कम स्वाद नहीं मिलता। उसके स्वाद लेने में मैं अपने किसी मित्र से पीछे नहीं हूं। किन्तु अनेक कामों में रुका रहने के कारण मैं आप के बाहरी कामों का करने वाला सेवक हूं। इस काम के लिये मैं अपने को कदापि

योग्य नहीं समझता हूं और इस अवसर में जिस में आप को पूर्व्व उन्नति के दृश्यों को देखना चाहिये था, जिस में हिन्दी की भावी उन्नति का पथ प्रशस्त करना चाहिये था, किसी और ही मनुष्य को इस स्थान पर बैठना चाहिये था; इस के योग्य मैं किसी प्रकार नहीं। अब यदि मैं इस स्थान में आकर आप की आज्ञा पालन करने का यत्न न करूं तो उस से अपराध होता है। केवल इसी कारण मैं इस सम्मान का धन्यवाद देता हूं और इस समय इस स्थान में आप लोगों की सेवा करने को तय्यार हुआ हुं।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के विषय में जो मतभेद हो रहा है, इस में कोई संदेह नहीं, उसे स्वीकार करना चाहिये। हठधर्म्मी अच्छी नहीं। अनेक विद्वानों के मत से यह समय सम्मेलन के लिये उपयुक्त नहीं। नवरात्र दुर्गादेवी के पूजन का समय है, नवरात्र में सरस्वती शयन करती हैं। प्राचीन रीति के अनुसार तीन दिन सरस्वती शयन के दिन हैं। यह नियम आर्य्यजाति ने इस लिये रक्खा कि तीन सौ सत्तावन दिन संसार के व्यवहार करो, अपने मस्तिष्क को पीड़ा दे लो, किन्तु जाति की रक्षा के लिये इन तीन दिनों में लेखनी मत उठाओ, पत्रा मत पढ़ो, इन दिनों सरस्वती शयन करती हैं। ऐसे समय में मेरे मित्रों ने आप महाशयों को इधर उधर से खींचकर बुलाया है और इस के लिये मेरी बुद्धि में आता है कि मुझको आप के सामने उनकी ओर से उत्तर देना चाहिये। इसमें मैं इतना ही कहूंगा कि जितना मतभेद हो उसे आप को स्वीकार करना चाहिये और जिन लोगों का मत नहीं मिलता उन के मत का आदर करके उन से यही कहना चाहिये कि अब से यह समय उन्नति का होगा। इस के विचार में यह मेरी बुद्धि में आता है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के लिये यह समय बहुत ही उपयुक्त है। हिन्दी की दशा इस समय शोचनीय हो रही है। हिन्दी-साहित्य के इस शयन की अवस्था में सरस्वती शयन कैसा ? इस ध्यान से हमारे हिन्दी प्रेमियों में बहुत से लोगों का यदि यह विचार है कि सरस्वती शयन कर रही हैं तो इससे क्या होता है ? हम लोग इस सम्मेलन में उपयुक्त यत्न कर सरस्वती को जगायें। बात भी ऐसी ही है। जहां रात होती है वहीं सूर्य्यनारायण की लालिमा दिखाई देती है। रात के अन्धकार के पश्चात प्रातः काल होता है तो उस को देखना अच्छा लगता है। ऐसी अवस्था में इस सरस्वती शयन का समय मुझ को आशा देता है कि हिन्दी भाषा के शयन के समय में जब साहित्य-सम्मेलन होता है तब इस सरस्वती शयन के समय के उपरान्त जैसे विजयादशमी का दिन आता है वैसे ही मुझको विश्वास है कि सोई हिन्दी भाषा, हिन्दी साहित्य के जागने का समय निकट है। प्राचीन समय से लोग दुर्गा अष्टमी में विद्या की वृद्धि के लिये देवी की उपासना करते आते हैं। जिस तरह पहिले, उसी तरह आज भी हिन्दुस्थान में हिमालय के ऊंचे शिखर से लङ्का के छोर तक सहस्रों करोड़ों हमारे भाई इस नवरात्र में दुर्गा जी की स्तुति करते हैं। एक ही विद्या है, एक ही भाव है, केवल भाषा इसे पृथक करती है। तो इस से क्या हो सकता है ? जब हम अपनी भाषा के साहित्य की उन्नति के दुःख में पड़े हुए हैं तब हमें क्या उचित नहीं कि इसकी उन्नति के लिये सब तरह के यत्न करें और उन के फल उपलब्ध कर उनका प्रकाश करें ? (हर्ष नाद) मुझे आशा और विश्वास है कि आप के चित्त में मेरी बातें आ गई होंगी। और बातों में यह बात भी मुझे निवेदन करनी है कि इसके उपरान्त विजयादशमी का दिन आता है। यह विजयादशमी वही विजयादशमी है जिस में भगवान रामचन्द्र जी ने राक्षसों का नाश करके देश में फिर से सुख शान्ति की मन्दाकिनी बहाई थी। यह वही विजयादशमी है जिसकी गूंज आज भी हिन्दुस्तान के एक सिरे से दूसरे सिरे तक सुनाई पड़ती है, जिस की प्रतिमा का अनुकरण आज भी हिन्दुस्तान के नगर नगर में लीलाओं द्वारा

किया जाता है। देशी राज्यों में उस का अनुकरण किया जाता है, जो कुछ पहिले होता था, वही आज भी हो रहा है। पुराने समय में भगवान रामचन्द्र जी ने जो किया, अब वह देशी राज्यों में होता है। वही मारू बाजा बजता है, वही आर्य्यों के राजा महाराजाओं के विजय का डङ्का बजता है। अब विजय नहीं है, उनका शब्द है, उसे तो सुन लीजिये। आज भी केसरिया जामा पहिन राजे महाराजे अपने अपने गढ़ों से निकलते हैं। शक्ति के बढ़ाने में आज भी इस समय की प्रतिभा आप को दिखाई देती है। शक्ति ही ने ये बातें कीं और मेरे दुर्बल शरीर और चित्त में बल का सञ्चार किया। मैं आशा करता हूं कि मेरे और भाइयों के चित्त में भी इसी तरह बल का सञ्चार हुआ होगा। ऐसी दशा में हम लोग मिले हैं और मैं आशा करता हूं कि जो विरोध इस समय के ठन जाने का हुआ है उसको अब इसी वक्तृता के साथ समाप्त कर दीजिये। हम सब यही आशा करते हैं कि सङ्कट के समय में बड़े कार्य्य हो जाते हैं और इस दृष्टि से जो कुछ भूल चूक हुई हो उसको भुलाकर एकस्वर से, एक उद्देश्य से, हिन्दी की उन्नति के विचार से सम्मेलन होना चाहिये।

सम्मेलन हुआ है सम्मेलन के लिये। इसमें विजयादशमी का उत्सव मनाने का कुछ प्रयोजन नहीं। इन दिनों जितनी लीलायें होती हैं, उनका उद्देश्य यही है कि एक दिन भारतवर्ष में ऐसा था कि विजय का डंका बजता था। इस दशहरे में इस सम्मेलन का भी यही उद्देश्य है और बहुत कुछ सम्भावना इस बात की होती है कि कोई रोग इस देश में आगया हो तो सब एकत्र हो उसे मिटाने का प्रयत्न करें। गांव गांव और ज़िले ज़िले के लोग एक स्थान में बैठ कर परामर्श करें कि किस प्रकार ऐसी बला टल सकती है। दूसरा सम्मेलन इस श्रेणी का होता है कि काम चल रहा है लेकिन अच्छी तरह नहीं चल रहा है इसलिये यद्यपि कुछ सन्तोष का विषय है तथापि विशेष रूप से एकत्र होकर इस बात का विचार किया जाता है कि कार्य कैसे चले। मेरी बुद्धि में तो हिन्दी का ऐसा सौभाग्य नहीं है। हम लोग वर्त्तमान समय में जो मिले हैं वह इस दूसरी श्रेणी का सम्मेलन है। कुछ लोगों के मत में हमारी उन्नति कुछ भी सन्तोषजनक नहीं है। अन्य लोगों के विचार ऐसे हैं कि यह कहना ठीक नहीं है। फिर भी प्रत्येक दशा में यह सम्मेलन आवश्यक हो गया है। अब इस सम्मेलन में यदि हम मिले हैं तो दूसरी या तीसरी कक्षा जिसकी ले लीजिये, उसीके अनुसार पहिले यह विचार कीजिये कि हमारी अवस्था क्या है। जब कोई वैद्य बुलाया जाता है तब निर्दिष्ट स्थान में पहुंचकर पहले वह यह जानना चाहता है कि रोगी की दशा क्या है, रोग कहां तक बढ़ा है, कितनी आशा है, कितना घटा है, रोगी में कितना बल आया है। यह आवश्यक है कि हम पहिले हिन्दी की दशा विचारें। किन्तु इससे पहिले कि हम इस बात का विचार करें हमारे एक मित्र ने प्रश्न किया है कि पहिले यह तो बतलाइये कि हिन्दी है क्या? यह बड़ा टेढ़ा प्रश्न उठा है कि हिन्दी क्या है। ऐसी दशा में पहिले मैं इसीको लेता हूं। मुझको दुःख है कि मैं न संस्कृत का ऐसा विद्वान हूं कि इस विषय में प्रमाण के साथ कह सकूं, न भाषा का ऐसा विद्वान हूं कि इस विषय की चर्चा चलाऊं। किन्तु मैं आप के संमुख निवेदन करता हूं कि जब प्रमाण की रीति से कोई कुछ न कह सके तो उसका धर्म्म है कि वह अपने विचारों को उपस्थित करके जो प्रमाण दे सकता हो उन्हीं को दे। हिन्दी के विषय में बहुत सा विवाद है। हिन्दी के सम्बन्ध में हमारे देश के लिखने वालों में जो हुए तो हुए ही हैं, हमारे यूरोपियन लिखनेवालों में विलायत के डाक्टर ग्रियर्सन एक बड़े शिरोमणि हैं। (हर्षध्वनि) आपने हिन्दी की बड़ी सेवा की है और हिन्दी की उन्नति में बड़ा यत्न किया है। आपने एक स्थान में लिखा है कि हिन्दी सन् १८०३ ई० के लगभग लल्लूलालजी से लिखवाई गई। और भी लोगों ने इसी प्रकार की

बात कही है। जो विदेशी हिन्दी के विद्वान हैं, वे तो यही कहते आए हैं कि हिन्दी कोई भाषा नहीं है। इस भाषा का नाम उर्दू है। इसीका नाम हिन्दुस्थानी है। ये लोग यह सब कहेंगे, किन्तु यह न कहेंगे कि यह भाषा हिन्दी है (लज्जा)। लज्जा तो कुछ नहीं है, विचार की बात है। सज्जनो ! ऊंचे पद पर प्रतिष्ठित कितने ही अङ्गरेज अफसरों ने मुझसे पूछा था कि हिन्दी क्या है ? इस प्रांत की भाषा तो हिन्दुस्तानी है। मैं यह प्रश्न सुन दङ्ग रह गया। समझाने से जब उन्होंने स्वीकार नहीं किया तब मैंने कहा कि जिस भाषा को आप हिंदुस्थानी कहते हैं, वही हिन्दी है। अब आप कहेंगे कि इसका अर्थ क्या हुआ ? इसका अर्थ यह है कि न हमारी कही आप मानें, न उनकी कही हम। इसमें न्याय पूर्व्वक विचार कीजिये। डाक्टर ग्रियर्सन का क्या कहना है ? मैं उनका सम्मान करता हूं किन्तु उनकी बात पर न जाकर हमें यह देखना चाहिये कि यथार्थ तत्व क्या है। यहां इस मण्डली में बड़े बड़े विद्वान और विचारवान पुरुष हैं, वह इसे अच्छी रीति से कह सकेंगे। इसके विचारने में हमको अपने विचारों का दिग्दर्शन करना चाहिये। इसमें बहुत कुछ अन्तर हो सकता है। किन्तु मूल में कोई अन्तर हो नहीं सकता। हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में विचार करते हुए सब से पहिले संस्कृत की आकृति एक बार ध्यान में लाइये, हिन्दी भाषा की आकृति को ध्यान में लाइये। इसके पीछे आप विचारिये कि हिन्दी कौन भाषा है और उसकी उत्पत्ति कहां से है। संस्कृत की जितनी बेटियां हैं उनमें कौन सी बड़ी बेटी है। संस्कृत की बेटियों में हिन्दी का कौनसा पद है। इसका संस्कृत से क्या सम्बन्ध है। संस्कृत, जैसा कि शब्द कहता है, नियमों से बांध दी गई है। जो व्यर्थ बातें थीं, वे निकाली गईं, अच्छी अच्छी बातें रक्खी गईं, नियमों और सूत्रों से बँधे शब्द रक्खे गये, जो शब्द नियम विरुद्ध थे उनके लिये कह दिया गया कि ये नियम से बाहर हैं। नियमबद्ध शब्दों का व्याकरण में उल्लेख हो गया। आप जानते हैं कि संस्कृत से प्राकृत हुई जो लोग यह कहते हैं कि संस्कृत कभी बोली नहीं जाती थी, वे संस्कृत को नहीं जानते। वे थोड़ी प्राकृत पढ़ें तो उनको मालूम हो जायगा कि प्राकृत तो बोली जा नहीं सकती। संस्कृत के बोले जाने में कोई सन्देह नहीं। संस्कृत से प्राकृत हुई। उसके पीछे सौरसेनी, मागधी और महाराष्ट्री। कदाचित् आप के ध्यान में होगा, कि दण्डी ८ वीं शताब्दि में थे। अपने समय में उन्होंने यह लिखा था कि भारत में चार भाषायें हैं—महाराष्ट्री, सौरसेनी, मागधी और भाषा। यही चार भाषायें चलीआई हैं।

अब आपको मालूम हो गया होगा कि जो महाराष्ट्र भाषा थी मागधी भाषा थी इनके बीच में बहुत भेद था। मेरे शब्दों पर ध्यान दीजिये इन भाषाओं में संस्कृत भाषा के शब्दों के रूप का अनुरूप आप को मिलता है। यह जितना हिन्दी भाषा में मिलता है, उतना दूसरी किसी भाषा में नहीं मिलता। संस्कृत के शब्दों को ले लीजिये, अब देखिये कि हिन्दी में यह बात कहां से आई संस्कृत से इन भाषाओं का क्या सम्बन्ध था। शकुन्तला में "तुक मणि दवे बलीयममणाणि" कहां से आया होगा? एक शब्द को आप लीजिये। उसको देखिये कि प्राकृत में उसका क्या रूप है और भाषा में क्या हुआ। इस प्राकृत को देखने से आपको मालूम होगा कि संस्कृत शब्दों का प्राकृत रूप क्या से क्या हो गया। भाषा के कितने ही रूप आपको मिल सकते हैं। परन्तु यह बात मेरे कहने से न मानिये। मेरे सामने इस समय चन्द कवि के रासो में बहुत से रूप ऐसे हैं जिनको इस मण्डली में पंडित सुधाकर जी और दो तीन को छोड़ कर बहुत कम लोग जानते हैं। मैं तो उसका चौथाई भी समझ नहीं सकता। मैं जो देखता हूं वह आपके सामने उपस्थित करता हूं। आप ही देखकर यह कहें कि कौन ठीक है। संस्कृत से पाली, पाली से प्राकृत और प्राकृत से तीसरा रूप हिन्दी दिखाई दिया। अब आप थोड़े से शब्दों पर विचार करें। अग्ग का

आग और योग का याग हो गया। चन्द के काव्य में तुलसीदास की एक चौपाई को बीच में यदि मैं रख दूं तो बहुत सज्जनों को यह न मालूम होगा कि दोनों के बीच कितना अन्तर है। संवत् ११२५ में चन्द कवि ने इसको लिखा। उनकी भाषा में जितने रूप देखते हैं वे रूप इस भारतवर्ष की किसी दूसरी भाषा के रूप से नहीं मिलते। मिलते हैं, हिन्दी से और उतने ही जितनी आज की अंग्रेजी चौसर की अङ्गरेजी से मिलती है। ऐसी दशा में हिन्दी भाषा क्या है, इसका उत्तर यह है कि हिन्दी भाषा वह है जिसमें चन्द कवि से लेकर आज तक हिन्दी के ग्रन्थ लिखे गये। यह सही है कि पहिले इसका नाम भाषा था, हिन्दी भाषा या सूरसेनी।

क्या आप भाषा की उत्पत्ति पूछते हैं। कितने ही लोगों को अपनी मा का नाम नहीं मालूम। बहुतसी औरतें ऐसी हैं जिनको अपने लड़कों का नाम नहीं मालूम। प्रयाग और बनारस के कितने ही बालकों का नाम सिर्फ बच्चा है। पिता और दादा के नाम का पता लगाना और भी कठिन है। नाम रखते हैं किन्तु उसको याद नहीं रखते। अस्तु, देखना चाहिये कि चन्द के समय से जो भाषा लिखी जाती है वह एक है, उसीको हम हिन्दी भाषा कहते हैं। कभी कभी लोग उसका नाम बदल देते हैं। भीष्म को लीजिये। देवव्रत उनका नाम था। जब उन्होंने पिता की प्रसन्नता के लिये राज्य त्याग किया, तो ब्रह्मचर्य्य अंगीकार कर कहा कि हम विवाह न करेंगे, केवल इस लिये कि पिता प्रसन्न होंगे, उस दिन से उनका नाम भीष्म हुआ, छठी के समय नहीं हुआ था। इसी तरह भाषा का भी नाम बदलता है। पहिले कुछ था, अब कुछ है। भाषा का नाम पहिले और था पर अब तो हिन्दी कह के इसे पूजते हैं, प्रेम करते हैं। इस हिन्दी भाषा का दूसरा प्रश्न यह उपस्थित होगा कि हिन्दी भाषा की और भाषाओं के साथ तुलना करने से क्या पता लगता है। इसमें भी मैं इतना कहूंगा कि हिन्दी सब बहिनों में मा की बड़ी और सुघर बेटी है। संस्कृत के वंश की बेटियों के २२ करोड़ बोलने वाले हैं, उनमें पांच या छः करोड़ मन्द्राज में तामिल और तेलगू बोलते हैं। उनकी भाषा में संस्कृत का भाण्डार भरा हुआ है, उनके वाक्यों में संस्कृत की लड़ी की लड़ी आती है। फलतः संस्कृत की महिमा इस देश में गाज रही है और बहुत दिन तक गाजेगी। अब रहा कि इन बहिनों में कौन बड़ी और कौन छोटी है। यह पक्षपात है कि हमारी भाषा हिन्दी है और हम हिन्दू हैं, हिन्दी का पक्ष करें या हमारा यह विचार है कि (छोटे मुंह बड़ी बात होती है, मगर चित्त में जो कुछ है कह देंगे) दण्डी कवि ने भी उसमें पक्षपात किया है। किन्तु हिन्दी भाषा को यदि मैं आपके सामने यह कहूं कि यही सब बहनों में मा की अच्छी पहिली पुत्री है, अपने पिता और माता की होनहार मूर्ति है, तो अत्युक्ति न होगी। सौरसेनी में शब्द बंधे हुए हैं, महाराष्ट्री में उखड़ते पुखड़ते नाचते कूदते जाते हैं। आपको अनेक शब्द हिन्दी भाषा में मिलते हैं जिनके सात सात रूप हैं। भारतीय सभी भाषाओं में हिन्दी शब्दों की न्यूनाधिक झोली की झोली भरी पड़ी है। हां, यह मानना पड़ेगा कि इनके रूप में बड़ा परिवर्त्तन है। जैसे कि बनारस से नीचे बङ्गाल में चलिये तो आगे चलकर बिहार में बिहारी मिलेगी, बङ्गाल में जाइये तो लकारों का सङ्गीत पाया जाता है, हरिद्वार से जब गङ्गा चलीं और उनके सङ्ग में जो पत्थर के टुकड़े बहते हुए चले तो हरद्वार से काशी आते आते रगड़ते झगड़ते कोमल और चिकने हो गये, इसी प्रकार यह बिहार में गाजीपुर और बनारस से नीचे रगड़ कर प्रिय कोमल स्वरों के हो गये। जब आप बंगाले में पहुंचे तब आप को कोमलता का घर मिला। वहां आपकी भाषा भी अधिक कोमल दिखाई दी। यहां की भाषा का रूप देख हमारे युरोपियन विद्वान और देशी विद्वान भी भ्रम में पड़ गये हैं कि क्या हिन्दी महराष्ट्री और सौरसेनी, पञ्जाबी और बंगला, सब वस्तुतः एक

हैं। हमें भी स्वीकार कर लेना चाहिये कि इनके बीच बड़ा अन्तर हो गया है । संस्कृत शब्दों का हिन्दी ही में कितना परिवर्तन हो गया है। जो कर्ण था वह कान, नासिका थी वह नाक है, जो हस्त था वह हाथ है, पानीय का पानी है । यह परिवर्तन सभी जगह दिखाई देता है । लक्ष्मी को भाषा वालों ने लिखा लच्छमी या लक्खी। लच्छमी कहने में जो प्रेम आया वह लक्ष्मी कहने में नहीं। जैसे जैसे भाषा बंगाल की ओर बढ़ी वैसे वैसे कहा गया कि इसमें जितना कर्कशपन है उसे काट दो । अब बेटियों में बड़ा रूपान्तर हुआ। यहां तक यह कह दिया कि भाषा की उत्पत्ति क्या है। सिवाय इसके यह निवेदन करता हूं कि जितने और प्रमाण हैं जिनसे भाषा की अवस्था को जान सकते हैं, अब उसको जांचना चाहिये। भाषा के रूप की शब्दमाला क्या है ? इन दोनों के विचारों से हिन्दी भाषा ही प्राचीन है । डाक्टर ग्रियर्सन ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि हिन्दी संस्कृत की बेटियों में सबसे अच्छी और शिरोमणि है। आप कहेंगे कि इसमें कौन फूहड़ मालूम होती है। यह मेरा कहना आवश्यक भी नहीं है। यह समझा जा सकता है कि मैं हिन्दू हूं और पक्षपात से कहता हूं।

आज मैं अपने बङ्गाली हिन्दुस्थानी गुजराती भाइयों से पुकार कर कहता हूं कि भाषा एक चली आई और संस्कृत भी एक है । जब प्राकृत हुई तब अङ्ग की प्राकृत हो गई किन्तु मूल में एक ही रही । जितनी भाषायें हैं, हमारी हैं। बङ्गाली हमारी भाषा, पञ्जाबी हमारी भाषा और गुजराती हमारी भाषा है। अब इसके विचार से कौन किस को कहे कि कौन बुरी है ।

हिन्दी अपनी बहिनों में सब से प्राचीनतम और बड़ी बहिन है और माता की रूप आकृति इस से बहुत मिलती जुलती है । यह सब जो बड़ी छोटी बातें मैं आप से निवेदन करता हूं इसका दूसरा प्रमाण मिलना चाहिये । शब्दमाला, शब्दों की रचना यह तो हो गया। दूसरा प्रमाण है ग्रन्थमाला। अधिक हिन्दी ग्रन्थमाला का, भाषाओं की ग्रन्थमाला का शिवसिंहजी ने, जैसा कि मालूम होगा, इन बातों को दिखाया है । प्रथम हिन्दी भाषा का काव्य ७५० में हुआ । भाषा के ग्रन्थों में राजा मान की सहायता और आदेश से दूसरा जो हमें मिलता है, वह पूज्य कवि ८०२ में हुआ और तीसरा लेख जो मिलता है, वह राव खुमान सिंह ने एक ग्रन्थ हिन्दी में लिखा । ९०० में खुमान रासो प्रसिद्ध हुआ। चौथा ग्रन्थ, जैसा कि मैं अभी आप से निवेदन कर चुका हूं, चन्द कवि कृत रासो है। जो भाषा के विद्वान हैं और जो भाषा की रूप-रचना जानते हैं, वे बिना शङ्का के यही कह देंगे कि जिस भाषा में चन्द कवि ने ग्रन्थ लिखा है वह भाषा बहुत पहिले से हुई है । यह नहीं हो सकता कि जिसकी भाषा प्रिय होने लगी उसी में ग्रन्थ लिख डाला। चन्द कवि से पहिले अनेक कवि हो चुके थे। हिन्दुओं में ब्राह्मण और कायस्थ उर्दू अधिक पढ़नेवाले थे। पर हमारे क्षत्रिय भाइयों ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। उन में पढ़ने का प्रचार कम हुआ । वह इस के बदले जमींदारी और खेतीबारी में रहे और उसी से प्रेम रहा और विद्या को कम पढ़ा । वैश्य जो हमारे भाई हैं, उन्हों ने कहा, कि जिस को नौकरी करना हो वह पढ़ने जाय; उन्हें इतनी फुरसत कहां । वह दूसरी ओर उन्नति करते रहे । आप को उर्दू के ज्ञाता मिलेंगे-ब्राह्मण और कायस्थ। ब्राह्मणों में काश्मीरी ब्राह्मण बुद्धि में प्रखर, भाषा के विशेष योग्य थे। इनका प्रेम उर्दू की ओर बढ़ गया और वे इसी तरफ झुके। कायस्थ भाइयों का भी यही हाल हुआ कि सरकारी दफ्तरों में उर्दू गाज रही थी, हिन्दी सभ्य भाषा भी नहीं समझी जाती थी। हमारे पण्डित मथुरा प्रसाद, राजा शिवप्रसाद कह गये हैं कि हिन्दी भाषा को यह कहना कि हिन्दी कोई भाषा ही नहीं अनुचित है। यह दशा थी। इसी कारण से हिन्दी की उन्नति न हुई। अब क्या होता

है। इस बीच में और और प्रान्तों में उन्नति हुई। बङ्गाल में, जैसा कि मैं आप से निवेदन कर चुका हूं, भाषा का बड़ा सुधार हुआ। एक अंश में सर माइकल मधुसूदन को लीजिये। हेमचन्द्र, बङ्किमचन्द्र इत्यादि बङ्गाली बड़े बड़े कवि हुए हैं। उन्होंने उपन्यास, इतिहास और काव्य से अपनी भाषा को बनाया, सजाया। इसके उपरान्त कबीरदास हुए, १५४० में मलिक मुहम्मद जायसी हुए। गोस्वामी तुलसीदास जी, श्रीकेशवदास जी, दादू दयाल जी, गुरु गोविन्द सिंह जी, बिहारी लाल को ही देखिये। हर एक की भाषा में हिन्दी के पुष्ट रूप दिखलाई पड़ रहे हैं। यह सिद्ध है कि भाषाओं में मरहठी भाषा में, जो सब से पुष्ट है, नामदेव १३ वीं सदी में थे। बङ्गला भाषा में, जिसे आज देख कर आनन्दित होते हैं और यदि सच कहूं तो ईर्षा भी होती है, चण्डीदास जी बड़े प्रसिद्ध १४ वीं सदी में हुए। चन्द के समय तक न मराठी में, न बङ्गला में, न गुजराती में, तीनों में इतना बड़ा काव्य नहीं था जितना बड़ा काव्य चन्द कवि का हिन्दी में मिलता है। इस प्रकार से हिन्दी भाषा आरम्भ हुई। यदि यह जानना चाहते हैं कि किसका भाण्डार किसका रूप और कौन अधिक थी, तो इस के देखने के लिये मैं आप के सम्मुख कुछ बातें उपस्थित करता हूं। यह जो सन् १८५७ ई० में विप्लव हुआ, उस समय से भाषाओं की ओर उन्नति हुई। १८३५ ई० में बङ्गाल में पञ्जाब में फारसी भाषा दफ्तरों में थी। अंगरेजी गवरमेंट ने इसको मिटाकर मराठी, गुजराती, बङ्गाली और उर्दू को इनके स्थान में किया। वहीं से देशी भाषाओं की उन्नति की रेखा बंधी। अब इस बात का विचार कीजिये कि सन् १८३५ के पूर्व और १८५८ के उपरान्त इन सब भाषाओं का कैसा भाण्डार था, इनमें ग्रन्थमाला कैसी थी? ७७० से लेकर आप केवल बड़े बड़े कवियों को लीजिये। उनके ग्रन्थ आज तक हिन्दी भाषा का भाण्डार भर रहे हैं। चंद कवि के रासो को ले लीजिये। लल्लूजी कबीरदास, गुरु नानक जी, मलिक मुहम्मद जायसी, तुलसीदास, सूरदास अष्टछाप, केशवदास, दादूदयाल, गुरु गोविन्दसिंह जी, बिहारीलाल, किस किसके नाम गिनाऊं। मुझे सब गिनाना भी नहीं। बिहारीलाल को ले लीजिये। इन्होंने १६५० के लगभग ग्रन्थ लिखा है। बहुत वृक्ष वाटिकाओं में उगते हैं, कितने ही आपसे आप उगते हैं, उनका झाड़ भी बड़ा फैला हुआ होता है। जैसे जैसे वे ऊपर उठते हैं वैसे वैसे उनकी छाया अधिक होती जाती है। कुछ ऐसे होते हैं, जिन को आप काटकर मट्टी को बना कर किसी स्थान में लगाते हैं और अपनी वाटिकाओं में उगाते हैं। इसी तरह भाषा में जो बहुत शब्द हैं, जैसे कर्ण से कान, हस्त से हाथ संस्कृत से उत्पन्न हुए हैं वे प्राकृत रूप में अपने से आप उपजे। जो शब्द संस्कृत के उठाकर रख दिये हैं, वह वैसे ही हैं जैसे कि गुच्छा; कितने ही वृक्ष थोड़े समय में सूख जांयगे, फिर उनमें शक्ति नहीं कि वह दूसरे फल उत्पन्न करें। जहां ये मुर्झाये, फिर इन्हें हटाना ही पड़ेगा। इसी प्रकार से हिन्दी भाषा के तद्भव शब्द जो हैं वे निज की सम्पत्ति हैं; उनके निज के अवयव पुष्ट हैं, वे फूले फलेंगे और अपने आप बढ़ते चले जांयगे। ये सब प्रबल और पुष्ट होते हैं। किन्तु जिन शब्दों में किसी का पैवन्द लगा दिया जाता है, वे बनने को बन जाते हैं किन्तु पुष्ट नहीं होते। जो लिये हुए शब्द हैं, उन में भाषा की शक्ति नहीं। बच्चा माता के दूध से जितना पुष्ट होता है, ऊपरी दूध से उतना पुष्ट नहीं होता; जो बच्चा धीरे धीरे माता का दूध पीता है वह पुष्ट होता जाता है और अन्त में संसार में काम करने योग्य होता है। फिर भी हरेक भाषा में हरेक तरह के शब्द मिलेंगे ही; जैसे भोजन में दाल भात रोटी इत्यादि। और संस्कृत की जितनी बेटियां हैं, वे सब भी मां के गहनों को पहनेंगी, चाहे वह अच्छा हो चाहे बुरा, सब मां का गहना है। उन में एक गहना दो गहना चार गहना मां का है। मां के गहने से बड़ा प्रेम होता है। उस समय उन को धारण करने में विशेष आनन्द होता है। किन्तु जो सब गहने मां

के ही हों तो सब कहेंगे कि यह सब मां की सम्पत्ति है। इस लिये हिन्दी भाषा का यह सौभाग्य है कि उस के जो शब्द हैं वे सब माता के ही प्रसाद हैं। किन्तु माता ने कहा-हे बेटी! ये तेरे हैं; तू इनका व्यवहार करना। बिहार में, बङ्गाल में विद्यापति जी ने हिन्दी भण्डार से फूल पत्ते ले जाकर अपने काव्य ग्रन्थ को भरा है। इस प्रकार आप देखेंगे कि दाक्षिण में मराठी में भी जो शब्दों का मेल है, उस में जो कुछ तद्भव शब्द व्यवहार में लाये जाते हैं वे यहीं के हैं। हम आप "मुझ, तुझ" कहते हैं मराठी में "माझा, तुझा" कहते हैं। हां यह मानना पड़ेगा कि इन शब्दों का उच्चारण बङ्गाल में और है, महाराष्ट्र में और। हमें इस बात की ईर्षा नहीं है; अगर वह सबकी मां नहीं तो मौसी है। हम तो सब के बालक हैं, सब के पैरों पर लोटेंगे। मां ने भोजन दे दिया तो ले लेंगे, मौसी ने दे दिया तो ले लेंगे। वह हमारी, हम उन के हैं। आप देखेंगे कि हिन्दी-भाषा में शब्दों का अधिक भण्डार है, यह बड़ा प्रबल है और हिन्दी की यह बड़ी सम्पत्ति है। इस प्रकार से आप की ग्रन्थमाला की शब्दावली का भण्डार भरा हुआ है। सन् १८३५ से १८५८ तक महाभारत का प्रथम अनुवाद हुआ। इस के उपरान्त एक विशेष दशा आई। आप जानते हैं कि रीति जो पड़ जाती है, वह छोड़े नहीं छुटती। जब जब जिस जिस स्थान में आप देखेंगे, लता वृक्ष के सहारे फैलती पायंगे। सब से बड़ा सहारा प्रत्येक भाषा का राजा ही होता है। बिहारी ने जयपुर के महाराज के यहां जाकर अपनी कविताशक्ति का चमत्कार दिखाया। शिवाजी महाराज के आश्रय में भूषण कवि ने अपनी कविताशक्ति का परिचय दिया। एक ओर युद्ध में तलवार नाचती थी; दूसरी ओर उनकी कविता नाचती थी। राजा का आश्रय दो प्रकार का होता है। एक तो प्रत्यक्ष, दूसरा गुप्त। इन दोनों की आवश्यकता है, किन्तु इस समय में प्रत्यक्ष को ही लूंगा। जब अङ्गरेजी गवरमेण्ट इस देश में आई, तब उसने बड़ी ही सुव्यवस्था की, जिस के लिये उसे सच्चे हृदय से धन्यवाद देना चाहिये। इसने इस देशमें ऐसा नियम स्थापित किया जिस से आज इतना बड़ा समारोह हो रहा है। याद रहे कि कोई व्यक्ति चाहे वह ऊंचे घर का बालक ही क्यों न हो, जब गिरता है, तब बुरा गिरता है। यह पवित्र आर्य्य जाति जो अपनी प्राचीन महिमा से गिरी तो ऐसी गिरी कि फिर से उसका पुनरुद्धार न हुआ। इस आर्य्य जाति के पतन के कारण इससे महाराष्ट्रों और सिक्खों का अलगाव हुआ। जबसे अङ्गरेजी गवरमेण्ट आई तब से आप देखते हैं कि विद्या की चर्चा बढ़ गई। यन्त्रालय आया, साथ ही साथ बड़ी भारि शिक्षा आई। आपने देखा होगा कि अङ्गरेज लोग अपनी भाषा की कैसी उन्नति करते हैं। अङ्गरेज़ी गवर्न्मेण्ट ने यहां आ अङ्गरेज़ी विद्या के प्रचार का उपाय किया; साथ साथ आपकी संस्कृत भाषा की उन्नति का भी पथ प्रशस्त किया। इस काशीपुरी में सबसे पहिले क्वीन्स कालेज और संस्कृत कालेज स्थापित हुआ, जिससे हिन्दुओं की भाषा की रक्षा हुई। गवर्न्मेण्ट के उत्तम कार्य्यों का धन्यवाद हम हिन्दू किसी प्रकार कर नहीं सकते और आज जो आपके भारतवर्ष में कुछ जनों में संस्कृत का प्रचार देख पड़ता है, इस काशी ही में धुरन्धर पण्डित मिलते हैं जिनका सम्मान बड़े बड़े लोग करते हैं, उसका अन्यतम कारण अङ्गरेज सरकार का संस्कृत प्रचार है। इस नीति का फल है। मैंने आपसे इसको सुनकर नहीं कहा है। डाक्टर वालेण्टाइन जब प्रिन्सिपल थे तब उन्होंने लेख लिखा था कि हमको केवल संस्कृत के ग्रन्थों का अनुवाद कर के हिन्दी भाषा में प्रचार करना चाहिये; सो उन्होंने अपने समय में जो आवश्यक था वह कर डाला। किन्तु खेद की बात है कि इतना अवसर पाने पर भी हम जगाये जाने से भी आप से आप नहीं जागे। गवर्न्मेण्ट की सहायता से भी नहीं जागे। इस प्रान्त में भाषा की उन्नति का बीज सबसे पहिले बोया गया था; किन्तु आज उसी प्रान्त की हिन्दी भाषा अपनी और बहिनों के सामने मुंह मोड़े खड़ी है।

अब १८३५ के लगभग आ जाइये। उस समय गवर्न्मेण्ट के सरकारी दफ्तरों में फ़ारसी में काम होता था। गवरमेण्ट ने १८३५ में यह आज्ञा दी कि हिन्दुस्थान की भाषायें भी काम में लाई जांय। इस आज्ञा के फल से इस प्रान्त में उर्दू जारी हो गई; हिन्दी जारी नहीं हुई; इसका फल यह हुआ कि हिन्दी की बड़ी अवनति हुँई। यह सत्य है कि सन् १८४४ ई० में जब टामसन साहब लफ्टिनेण्ट गवर्नर थे, सरकार ने हिन्दी भाषा का पढ़ना पढ़ाना आरम्भ किया। यदि यह न हुआ होता, तो आज आपको हिन्दी को जानने वाले इतने भी न मिलते जिनसे लोगों को पढ़ाने का अवसर मिलता। फिर भी, अदालतों में हिन्दी के प्रवेश न करने से हिन्दी की उतनी उन्नति नहीं हुई। उर्दू सरकारी दफ्तरों में जारी थी उसी का प्रचार था। फिर भी उर्दू का वैसा प्रचार नहीं हुआ जैसा होना चाहिये था। उर्दू पुस्तकों की उतनी उन्नति नहीं हुई जितनी बङ्गाली, महाराष्ट्री और गुजराती की। मैं जानता हूं कि मुसलमान अब जागे हैं, किन्तु पचास साठ वर्ष तक उन्होंने उर्दू की वैसी उन्नति नहीं की जैसी करनी चाहिये थी। उर्दू की उन्नति में बाधा पड़ने का एक कारण यह है कि उर्दू, विशेष करके वह उर्दू जिसे अधिकतर उर्दू के प्रेमी लिखते हैं, अरबी और फारसी के शब्दों से भरी होती है, जिसके जानने वाले लोग कम हैं और जिसके लिखने वाले लोग भी कम हैं। सन् १८५८ में जब गवर्न्मेण्ट ने विद्या के विभाग के नियम बनाये; उन्हीं दिनों स्कूल के लिये हिन्दी पुस्तकें छपवाईं और बहुतेरे विद्वानों की सम्मति ली। गवरमेण्ट आफ इण्डिया ने सन् १८७३ के लगभग २३१ पुस्तकों का सञ्चय किया। गवरमेण्ट की सहायता से आदित्यरामजी ने एक दो अनुवाद अङ्गरेजी पुस्तकों के किये। राजा शिवप्रसाद जी से सम्मति ली गई। लोगों को इस पर ध्यान देना चाहिये कि हिन्दू मुसलमान दोनों की तरफ से, जहां तक मुझको मालूम हुआ है, इन पुस्तकों के पढ़ने वाले अधिक नहीं थे; इसीलिये दोनों की उन्नति नहीं हुई। और प्रान्तवालों ने जिन्हों ने अङ्गरेजी पढ़ी, उनकी दूसरी भाषा मातृ-भाषा थी; बङ्गालियों ने अङ्गरेजी पढ़ी; उन की दूसरी भाषा बङ्गला थी। बङ्गालियों को ले लीजिये, चार विद्वानों ने बङ्गाली भाषा को जन्म दिया। पचास वर्ष में बङ्गला ने ऐसी उन्नति की कि उस को देख कर न केवल सन्तोष ही होता है बल्कि ईर्षा भी होती है। मराठी में ऐसा ही हुआ कि जिन्हों ने अङ्गरेजी पढ़ी उन्हों ने साथ साथ अपनी भाषा भी पढ़ी। गुजरात में वर्नाक्यूलर सोसाइटी बनी। संस्कृत से अनुवाद करना आरम्भ किया गया; उन की भाषा की पुस्तकें जितनी बिकने लगीं, वह सभी को मालूम है। अनुवाद का अन्त नहीं। आज ऐसा होता है कि अङ्गरेजी भाषा में जो अच्छी पुस्तकें छपती हैं, उन का अनुवाद हो जाता है। इधर हिन्दू, मुसलमान। काश्मीरी, कायस्थ, हमारे सब भाइयों ने सिर्फ उर्दू लिखना आरम्भ किया। "गुलज़ार नसीम" पण्डित दयाशङ्कर नसीम ने लिखी। हिन्दुओं को यह तो शौक हुआ कि वह लिखें, लेकिन हिन्दी में लिखने का शौक नहीं हुआ। पण्डित रत्ननाथ सरशार ने "फिसानये आजाद" लिख कर उर्दू भाषा को अनमोल हार पहना दिया। पर हिन्दी जानने वालों को उस हार का पता नहीं कि वह कैसा है-मूंज का हार है या किस का। यह सत्य है कि मुसलमान कवियों ने हिन्दी भाषा की भी सेवा की है। मलिक मुहम्मद जायसी ने पद्मावत लिखा है; जब तक हिन्दी भाषा रहेगी उनका नाम रहेगा। किन्तु मैं आप को यह दशा दिखलाता हूं कि काश्मीरी भाइयों ने जो लिखा वह उर्दू में। हमारे हिन्दू भाइयों में कायस्थ भाइयों ने बहुत समय से बहुत कुछ लिखा किन्तु वह भी उर्दू में। उन्हों ने विज्ञान काव्य की कितनी ही पुस्तकें लिखीं। हिन्दू मुसलमानों द्वारा उर्दू की उन्नति का यत्न किया गया सही, किन्तु हमें तो बङ्गला की उन्नति और वृद्धि से संतोष

होता है। मराठी गुजराती से भी ऐसा ही होता है। वहां विद्या सरस्वती आप ही आप चली आई। इधर हिन्दी के लिये काम करने वाले नहीं। यह दशा आप की है। १८३५ और ५८ से पहिले आप की हिन्दी भाषा अपनी मां की सुन्दर छवि को लिये हुए अपने भण्डार को भरे आनन्द के साथ बैठी हुई आप को देखती है। १८३५ और ५८ के बाद इसकी और बहिनें आगे बढ़ गईं, यह जहां की तहां रह गई। कहते हुए दुःख होता है कि जिस हिन्दी के लिखने वालों में चन्दकवि, तुलसीदास, सूरदास, बिहारी लाल हो गये हैं, बबुआ हरिश्चन्द्र हो गये हैं, वह हिन्दी आज अपनी बहिनों के सामने आंखें नीची किये खड़ी है। हिन्दी के प्रेमियो! तुम्हारे और हमारे लिये यह बड़ी ही लज्जा की बात है। यह सच है कि अङ्गरेज़ी कार्य्यालयों में हिन्दी का प्रचार अधिक नहीं। १८५८ में जब राजा शिवप्रसाद विद्यमान थे, उस समय अनेक सज्जनों ने इस बात को कहा था कि सरकारी दफ्तरों में हिन्दी भाषा का प्रवेश हो, किन्तु उस समय यह बात बातों ही में रह गई।

अन्त में सर एण्टनी मेकडानल का भला हो, उन्हों ने यह आज्ञा दी कि कचहरियों में जो दरख्वास्तें दी जावें हिन्दी उर्दू दोनों में लिखी जावें। उस समय से हम लोग हिन्दी भाषा की विशेष उन्नति करने लगे हैं। जब रोगी दुर्ब्बल हो सन्निपात की दशा को पहुंच जाता है, तब पहिले उसका ज्वर छुड़ाया जाता है फिर उसका आहार आदि ठीक किया जाता है, अन्त में यह पहाड़ हट गया। किन्तु बड़े धिक्कार और बड़े लज्जा की बात है कि यद्यपि यह पहाड़ हमारे मार्ग से काट कर हटा दिया गया, तो भी हम लोगों ने आज तक इस से पूरा लाभ न उठाया। हम वकील, हम मुख्तार, हम व्यवहार करने वाले महाजन और वह लोग जो कचहरी में वकालत करते हैं और अपने हिन्दू भाइयों के मुक़द्दमे में उनका धन व्यय कराते हैं, वे लोग भी हिन्दी भाषा की ओर से उदासीन हैं। कितने लोग हैं, जो जाति का उपकार करते हैं। कहते हैं कि जाति बिना भाषा जीवित नहीं रह सकती; जैसे कि नाल के बिना बालक नहीं जीवित रह सकता। किन्तु क्या यह बात सत्य है? जरा बङ्गाली मराठी आदि को देखिये। हिन्दी भाषा के कितने लोग हैं जिनको इस बात से दुःख और लज्जा होती है कि यह आर्य्यावर्त्त देश, जहां कि आप देखेंगे कि लाखों लोग ऐसे हैं जो अपनी मा की बोली से परिचय नहीं रखते। सब आशा उन्नति को छोड़ दीजिये। उन्नति करने वालों के सामने खड़ा होना छोड़ दीजिये। जब तक आप इस लज्जा को न मिटावें, अपनी मां की बोली न सीखें, तब तक आप मुंह न दिखायें। मातृभाषा के सीखने में कौन लज्जा करता है? अब आप लोग अपने हृदय में आज से इस बात का प्रण कर लें कि जब तक आप मातृभाषा को सीख न लेंगे तब तक आप मस्तक ऊंचा न करेंगे। कोई अङ्गरेज जो अङ्गरेजी भाषा से परिचित न हो या कोई और देश का पुरुष जो अपने देश की भाषा न जानता हो, क्या कभी गौरवान्वित हो सकता है? जब हमारी यह दशा है तब क्यों न इस भाषा की दुर्दशा होगी और क्यों न हम को औरों के सामने दुर्ब्बलता स्वीकार करनी पड़ेगी? यह सत्य है कि कुछ लोग अपनी मातृभाषा का काम करते हैं; किन्तु ऐसे लोग कितने हैं? मेरा यह प्रस्ताव नहीं है मेरा यह निवेदन है, कि जो हुआ वह हुआ; अब क्या करना चाहिये। आप को यह आवश्यक है, कि सरकारी दफ़तरों से जो नकलें ली जाती हैं, उन को आप हिन्दी में लें; जो डिगरियां तजवीजें आदि मिलती हैं, उन को आप हिन्दी में लें। यह सब आप के लिये आवश्यक है। गवर्न्मेण्ट ने आप को जो अवसर दिया है, उसे आप काम में नहीं लाते। इस के उपरान्त यह भी सत्य है कि आज तक इस कारण से आप के अंगरेजी पढ़ने वालों में केवल उर्दू का अधिक प्रचार है। अब मैं यह आशा करता हूं और सोचता हूं कि जब तक यह प्रचार रहेगा, तब तक हिन्दी भाषा की

उन्नति में बड़ी रुकावट रहेगी। उर्दू भाषा रहे; कोई बुद्धिमान पुरुष यह नहीं कह सकता कि उर्दू मिट जाय। यह अवश्य रहे और इस के मिटाने का विचार वैसा ही होगा, जैसा हिन्दी भाषा के मिटाने का। दोनों भाषायें अमिट हैं; दोनों रहेंगी। उर्दू भाषा के प्रेमी करोड़ों हैं और इस पचास वर्ष में उन्होंने बहुत कुछ उन्नति की है। मौलवी जकाउल्लह साहब, मुहम्मद हुसेन आजाद और देहली के नजीर अहमद को लीजिये; उस शब्द कोष को लीजिये, जो हैदराबाद दक्खिन में छप कर तय्यार हो गया है। हैदराबाद में मुसलमान भाई २५ वर्ष से उर्दू की उन्नति का बड़ा यत्न कर रहे हैं। हम को सन्तोष और सुख होता है कि मौलवी शिबली के काम से उसकी उन्नति में अधिकता हुई है और उस की उन्नति हमारे देश की उन्नति है। हम इसकी भलाई चाहते हैं, किन्तु इसी के साथ साथ हमें यह भी कहना चाहिये, कि हिन्दी जानने वाले इस प्रान्त में बहुत हैं। पिछली मनुष्यगणना से जान पड़ा है कि एक उर्दू जानने वाला है, तो चार हिन्दी जानने वाले। हमारे मुसलमान भाई जिनको इसका प्रेम है और जो देशभक्त हैं, जिन से हमारे देश की सब तरह की उन्नति है, वे उर्दू की उन्नति का यत्न करें और हिन्दी जानने वाले हिन्दी की उन्नति का। इस देश में हिन्दी भाषा जाननेवालों की कमी नहीं; कोई दश बारह करोड़ हैं। इन की हिन्दी-भाषा की उन्नति करने के लिये हमें क्या उपाय करना चाहिये? जितना अब विचार हो चुका है, उस से आप ने यह देख लिया कि भाषाओं की अवस्था में कैसा उलट फेर हुआ और हिन्दी ज्यों की त्यों रही। यह दशा जो हमारी है, उस में क्या करने की आवश्यकता है। इस बात के विचारने में मैंने आप से कहा कि राजा के सहारे से बड़ा सहारा होता है। यदि आप को, जैसा कि नागरी प्रचारिणी सभा के लिये गवर्न्मेण्ट सहारा देती चली आई है, राज साहाय्य मिले तो काम बहुत कुछ बन जा सकता है। किन्तु बड़े दुःख की बात यह है कि अङ्गरेजी गवर्न्मेण्ट ने इसका जितना प्रचार करना चाहा था, हमारी उपेक्षा से उसका उतना प्रचार नहीं हुआ। हम लोगों को जितना करना चाहिये था, उसका सिर्फ कुछ अंश हमने किया। अब यह सम्मेलन ही विचार करे कि इस की उन्नति का क्या उपाय होना चाहिये।

हिन्दी-भाषा की उन्नति की साधना के लिये अब क्या करना चाहिये? हिन्दी-भाषा की ऐसी स्थिति में इसका उन्नति का अब हमारा कर्त्तव्य क्या है इसके विषय में राजा का सहारा है। यदि उसके लिये यत्न करेंगे, तो वह भी मिलेगा। जो मांगा गया, वह मिला। हमने कहा था कि कचहरियों की भाषा हिन्दी भी कर दी जावे, राजा ने हमारे प्रदेशों में कचहरियों की भाषा हिन्दी भी कर दी। इन दिनों इस देश में कचहरियों की जो भाषा है, वह हिन्दी है। यत्न और चेष्टा का प्रयोजन है, आदमी जिस बात के लिये यत्न और चेष्टा करता है, वह हो जाती है; आदमी के लिये क्या असम्भव है? जो स्कूल कालेज स्थापित किये गये हैं, उनमें लड़के हिन्दी पढ़ें। युरोपीय इतिहास, काव्य, कला कौशल आदि की पुस्तकें हिन्दी में अनुवादित हों। हिन्दी में उपयोगी पुस्तकों की संख्या बढ़ाई जाय। सरकार ने स्कूलों में हिन्दी जारी कर दी है; अब हमें चाहिये, कि हम हिन्दी की उत्तमोत्तम पाठ्य पुस्तकें तय्यार करें। इस प्रदेश में अङ्गरेजी जाननेवालों की कमी नहीं। बहुतेरे लोगों ने शेक्सपियर के काव्य समझकर देख डाले हैं, कितने ही लोग हैं, जिन्होंने अङ्गरेजी कविता की रचना को सीखा है। कितने ही लोग अङ्गरेजी में इतिहास लिखते हैं। परमेश्वर के अनुग्रह से इस देश के लोगों को अङ्गरेजी में बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ है। मैं चाहता हूं कि वह ज्ञान अपने ही तक रखा न जाये; उसे हमें अपने भाइयों को भी देना चाहिये। उन भाइयों को भी देना चाहिये, जिनका अङ्गरेजी से परिचय नहीं।

आप यह कह सकते हैं, कि ऐसी पुस्तकों के पढ़नेवाले बहुत कम हैं। हिन्दी-पाठकों में ऐसी पुस्तकों के पढ़ने के नये अनुराग का सञ्चार करना

होगा। इसमें सन्देह नहीं, कि इस काम के लिये यत्न करना होगा। पाठकों के सामने का एक तरह का भोजन हटा दूसरी तरह का भोजन परोसना होगा। क्षुधा उत्पन्न हो चुकी है, बिना भोजन के काम न चलेगा। ईश्वर के परमानुग्रह से पढ़ने का प्रेम बढ़ रहा है; हिन्दी का प्रेम बढ़ रहा है ; हिन्दी-पाठकों की संख्या अधिक हो रही है ; पढ़ने का व्यसन बढ़ रहा है। लोगों को उचित है, कि वे अब पढ़ाने के लिये पुस्तकें बनायें। जो लोग सहाय और सामर्थ्य रहते यह भी काम नहीं करते, वे अपने कर्त्तव्य से उपेक्षा करते हैं।

पुस्तकों के लिखने में हमें भाषा की ओर ध्यान देना होगा। हमें उचित है कि भाषा में जो दोष आ गये हैं, उन्हें हम मिटायें। सरकार की ओर से जिन बातों के करने का हमें अवसर नहीं मिला है उन्हें हम सामने से हटा दें ; किन्तु जिन बातों के करने का अवसर मिला है, उन्हें क्यों न करें ? हमें ऐसी भाषा लिखना चाहिये, जिसे इस प्रान्त के लोग समझ सकें। बङ्गाल में बङ्गाली, उड़ीसा में उड़िया, मन्द्राज में मन्द्राजी चलती है; बम्बई में मराठी और गुजराती चलती है। जिस भाषा में यहां अन्धकार है, यहां वही भाषा चलानी चाहिये। कहते दुःख होता है कि सरकारी विज्ञापनों की जो नकलें छपती हैं, वह हिन्दी-भाषा में नहीं होतीं। हमीं लिखने वाले हैं ; हम जैसी भाषा लिखते हैं, वैसी ही भाषा चलती है। आपका कोई मुंह नहीं कि इसके सम्बन्ध में आप सरकार से कुछ कहें। आपकी यह दशा है और आपकी भाषा की यह अवस्था। ऐसी कोई बात नहीं, जो हिन्दी में कही न जा सकती हो। ऐसी दशा में हमारी भाषा हिन्दी होनी चाहिये। हिन्दी में लिखे जिस वाक्य को देखिये वह हिन्दी में दिखाई दे। यहां बहुत बड़ा दोष यह है, कि लिखने की भाषा और है और बोलने की और; यह बहुत बड़ा दोष है ; जैसी बातें कहिये वैसी ही लिखिये।

कुछ लोगों का सिद्धान्त है, कि उर्दू कोई भाषा नहीं। उर्दू में ' परमेश्वर ' न " आयेगा ; ' खुदा ' हो जायगा। हिन्दी में 'खुदा' की जगह 'परमेश्वर' आयेगा। उर्दू भाषा हिन्दी की एक शाखा है और उर्दू की एक शाखा तय्यार होने पर भी हिन्दी का प्रवाह ज्यों का त्यों है। हिन्दी-भाषा की शक्ति का प्रवाह बदला जा नहीं सकता। मौलवी मुहम्मद हुसैन आजाद कह गये हैं, कि उर्दू जो है वह हिन्दी से बनी है। मौलवी साहब खूब समझाकर कह गये हैं, कि उर्दू दूसरे देश की भाषा नहीं; हमारे ही देश की चीज है। हमें इस बात को समझ लेना चाहिये। सब से पहले यह देखना चाहिये, कि भाषा में कहां तक छेड़छाड़ होनी चाहिये। बहुतेरे शब्द ऐसे हैं जो उर्दू में, हिन्दी में, बहुतेरी भाषाओं में एक हैं। उसे हम भी कान कहेंगे, वह भी कान। किन्तु कितने ही शब्द ऐसे हैं, जो हिन्दी भाषा में काम में लाये नहीं जाते। जैसे " बच्चा हम को दान दे पुण्य होगा " इसके बदले " बाबा हमको दान दे सबाब होगा " कहना उचित नहीं। ऐसे शब्दों को छोड़ बने बनाये शब्दों को बिगाड़ना उचित नहीं। हिन्दी में, फारसी-अरबी के बड़े बड़े शब्दों का व्यवहार जैसा बुरा है ; हिन्दी को अकारण ही संस्कृत शब्दों से गूंथ देना भी वैसाही बुरा। जहां तक हो हिन्दी में हिन्दी ही रखी जाये ; अनावश्यक शब्दों को हिन्दी से अलग कीजिये। उर्दू और हिन्दी ; इन दोनों भाषाओं के रूप गँठ बन गये हैं। अब इन दोनों को यथासम्भव एक स्थल में लाइये। इस बात के लिये यत्न करना जैसा हिन्दुओं के लिये आवश्यक है ; वैसा ही मुसलमानों के लिये भी आवश्यक है। दोनों ओर से यत्न होने से हम भाषा के क्रम को बहुत कुछ एक कर सकते हैं।

सत्य कटु है ; किन्तु सत्य ग्रहण करना चाहिये। हिन्दी-भाषा की योग्यता रखनेवाले बहुत थोड़े हैं। उर्दू की दशा बुरी है ; किन्तु हिन्दी की और भी बुरी। कहीं कहीं समासों के लच्छे के लच्छे लाये जाते हैं। कहीं कहीं ऐसे शब्द भर जाते हैं, कि

पढ़ने में तो भले हों; किन्तु पढ़नेवालों को बेगाने जान पड़ें। कहीं कहीं ऐसे शब्द रखे जाते हैं, जो बहुत ही कठिन होते हैं; पढ़नेवालों की समझ ही में नहीं आते। ग्रीक बहुत अच्छी; किन्तु ग्रीक में क्या समझूं और जब समझूंगा ही नहीं तब उससे मुझे क्या लाभ? मालकोस के समय मालकोस गाया जाता है; वर्षा की बहती हुई धारा में मालकोस अच्छा नहीं लगता; उसका आनन्द कम हो जाता है। जो शब्द भाषा में चलते हैं और जिन्हें हम जानते हैं, उन्हीं को हमें पुस्तकों और समाचारपत्रों में लाना चाहिये।

इसलिये भाषा की उन्नति करने में हमारा सर्व्वप्रधान कर्त्तव्य यह है, कि हम स्वच्छ भाषा में हिन्दी लिखें। पुस्तकें भी ऐसी ही भाषा में लिखी जायँ। ऐसा यत्न हो, जिससे जो कुछ लिखा जाय, वह ऐसी ही भाषा में लिखा जाय। जब हम कोई काव्यमाला लिखें, तो अलङ्कारिक भाषा से काम लें। विज्ञानादि लिखने में पहले भाषा के शब्द लीजिये। जब भाषा में शब्द न मिलें, तब संस्कृत से लीजिये या बनाइये। भाषा का सुधार बड़ा ही प्रयोजनीय है। समाचारपत्रों और स्कूल की पुस्तकों में ऐसी भाषा चल जाने पर उसके प्रसार की राह खुलेगी। एक दिन यह भाषा राष्ट्र-भाषा हो सकेगी।

मन्द्राज, बङ्गाल, बम्बई आदि के अनेक विद्वान् देश में एक ही भाषा चलाना चाहते हैं। देश के बहुतेरे लोगों की जब ऐसी रुचि है, तब आप का भी एक कर्त्तव्य है। आप भी ऐसा यत्न करें, जिससे आपकी भाषा राष्ट्र-भाषा होने का गौरव पाये। झगड़ों में फँसने के बदले उन्हें मिटाना चाहिये। उर्दू के प्रेमी कहते हैं, कि हिन्दी भाषा उर्दू भाषा है। यही सही। यदि आप झगड़ा मिटाना चाहते हैं, तो कह दें, कि अच्छा यही सही। वह उसे एक नाम से यदि पुकारना चाहते हैं, तो पुकारने दीजिये; उसीमें उन्हें सन्तोष करने दीजिये। और यह कीजिये, कि हिन्दी में जो उर्दू-फारसी शब्द आगये हैं, उनका व्यवहार कर उर्दू वालों को और भी सन्तुष्ट कीजिये। आपकी हिन्दी में कितने ही शब्द ऐसे हैं जो देश की बहुतेरी भाषाओं में ज्यों के त्यों या कुछ बदले हुए रूप में काम में लाये जाते हैं। आप उन शब्दों के व्यवहार में सङ्कोच न कीजिये। हमें यह देखना चाहिये कि हमारी भाषा के शब्द ऐसे हों, जिनसे सब प्रदेश के लोग लाभ उठायें।

देशी राज्य के निजाम चालीस हजार रुपये की लागत से एक उर्दू कोष तय्यार करा रहे हैं। यह कोष शीघ्र ही तय्यार हो जाने से लोगों का उत्साह बढ़ेगा और साहित्य बढ़ेगा। यह बड़े ही हर्ष का विषय है कि काशी की नागरीप्रचारिणी सभा ने भी बहुत बड़ा एक कोष तय्यार कराने का प्रशंसनीय कार्य्य आरम्भ किया है। हमारा कर्त्तव्य है, कि इस काम में सभा को सहारा दें सभा की विशेष उन्नति करें। सभा के सम्बन्ध में लोग में जो मतभेद फैल रहा है, उसे मिटायें; सत्य का अवलम्बन कर सभा को और भी हितैषिणी बनायें। बिना अधिक लोगों के एकत्र हुए बड़े बड़े कार्य्य नहीं होते; ऐसी अवस्था में हमें उचित है, कि सभा के सहायकों की संख्या बढ़ायें; सभा की शक्तियों को बढ़ायें। सभा ने जिस कोष के सम्पादन का कार्य्य आरम्भ किया है, वह अधिक रूप से विचार करने योग्य है। यह सब काम शीघ्रता से नहीं होते; इस लिये इसमें शीघ्रता का प्रयोजन नहीं। कितने ही लोग बड़े परिश्रम के साथ इसका काम कर रहे हैं और इसके लिये उन्हें धन्यवाद है। हमें सिर्फ शब्द-कोष की त्रुटि ही निकालना न चाहिये; उस के बनाने में सहारा भी देना चाहिये। यह काम कोष के सम्पादक बाबू श्यामसुन्दरदास या नागरी प्रचारिणी सभा का ही नहीं; यह काम समस्त हिन्दी-प्रेमियों का है। हम सब को इस काम में हृदय से लगकर इसे सम्पूर्ण करना चाहिये। यह काम बड़ा है, सभी बड़ा है। बड़े बड़े काम बड़े श्रम से होते हैं। वेदव्यास का मन्त्र यही है। भगवान् के

उद्देश्यों को समझ हमें उन्हीं के अनुसार कार्य्य करना चाहिये। हम सब के मिल जुलकर यत्न करने से ही हिन्दी के सब अङ्ग पुष्ट होंगे। इसी से सब बातों की उन्नति होगी।

सभी भाषाओं में अनुवाद से कार्य्य आरम्भ हुआ है। अङ्गरेजी भाषा आज दिन बहुत ही उन्नत दिखाई देती है; इसके साहित्य के सभी अङ्ग पूर्ण हैं। इसी अङ्गरेजी भाषा की पुष्टि पहले जर्मन आदि भाषाओं के अनुवाद से हुई है। हमें जगह जगह से और विभिन्न भाषाओं से अच्छे अच्छे विचारों को चुनना चाहिये। हमें इस बात में अङ्गरेजों को अपना गुरु बनाना चाहिये और उन से सहारा भी लेना चाहिये। देखिये अङ्गरेजों ने आप के प्रायः कुल प्राचीन ग्रन्थों के अनुवाद कर डाले हैं। अङ्गरेजी भाषा का साहित्य अनुवादों से भरा हुआ है। आप अङ्गरेजी भाषा और देशी भाषा दोनों भाषाओं के ग्रन्थों से सहारा ले सकते हैं। यह दिन बड़ा ही शुभदिन है; परमेश्वर से प्रार्थना कीजिये, कि अब से हिन्दी-साहित्य पुष्ट हो; जिससे केवल हिन्दी-भाषा ही जानने वाले हिन्दी भाषा में विविध विषय के ग्रन्थ पढ़ें और उन्हें पढ़कर लाभ उठायें।"

इस प्रकार सभापति महाशय ने अपनी वक्तृता को समाप्त करते हुए अत्यन्त उत्साहपूर्ण शब्दों में उपस्थित लोगों को हिन्दी की सेवा के लिये उद्यत होने का परामर्श देते हुए अपनी वक्तृता को समाप्त किया।

सहानुभूति।

इसके अनन्तर निम्नलिखित हिन्दी-प्रेमियों और हिन्दी-हितैषियों के सहानुभूति-सूचक तार और पत्र पढ़े गए।

तार।

(१) मास्टर आत्माराम, बड़ोदा।
(२) पंडित माधवराव विनायक, इन्दौर।
(३) पंडित बदरीनारायण चौधरी, मिर्जापुर।
(४) पंडित शिवनाथ शर्म्मा, लखनऊ।
(५) पंडित चन्द्रधर शर्म्मा गुलेरी, जयपुर।
(६) पंडित सोमदेव गुलेरी, जयपुर।
(७) पंडित भवानीदत्त जोशी, रीवां।
(८) मंत्री, नागरी प्रचारिणी सभा, अमृतसर।
(९) पंडित एम. बी. बोडस, बम्बई।
(१०) बाबू शारदाचरण मित्र, कलकत्ता।
(११) ब्यावर के विद्यार्थी।
(१२) मंत्री, नशीपुर साहित्य पारिषद्।
(१३) बा० दामोदरदास खत्री, कलकत्ता।

पत्र।

(१) श्रीमान काशीनरेश।
(२) श्रीमती मिसेज़ ऐनी बेसेंट, काशी।
(३) पंडित सदाशिव कृष्णराव, खांडवा।
(४) माननीय मिस्टर सच्चिदानन्दसिंह, बांकीपुर
(५) बाबू हनुमान प्रसाद, विजयराघव गढ़।
(६) बाबू गुरुशरणलाल, गाजीपुर।
(७) पंडित नारायणराव आगरे, मुलताई।
(८) पंडित सोमेश्वर दत्त शुक्ल, सीतापुर।
(९) पंडित मुकुन्द शास्त्री, जयपुर।
(१०) पंडित द्वारिका प्रसाद चतुर्वेदी, प्रयाग।
(११) बाबू कालिका प्रसाद, कलकत्ता।
(१२) पंडित चन्द्रशेखरधर मिश्र, चम्पारन।
(१३) पंडित पुतन लाल, कन्नौज।
(१४) पंडित सन्तराम शर्म्मा, लाहौर।
(१५) कुँअर फतहलाल मेहता, उदयपुर।
(१६) बाबू जगन्नाथ सिंह वर्म्मा, हरदोई।
(१७) पंडित शिवप्रसाद शर्म्मा, कटनी।
(१८) पंडित ब्रजरत्न भट्टाचार्य, बरेली।
(१९) पंडित देवीप्रसाद द्विवेदी, प्रयाग।
(२०) बाबू मदनगोपाल, प्रतिनिधि महाराज काशिराज।
(२१) मंत्री, गुरुकुल कार्यालय, हरिद्वार।
(२२) सम्पादक, सांझवर्तमान, बम्बई।
(२३) बाब हरिबहादुरसिंह, छत्रपुर।
(२४) राय राघव प्रसाद नारायण सिंह, बरांव।

(२५) लाला सीताराम बी० ए०, प्रयाग।
(२६) बाबू मृत्युंजय भट्टाचार्य, बलिया।
(२७) बाबू गोविन्द प्रसाद, छपरा।
(२८) मिस्टर ज्यार्ज जे० डन, बांकीपुर।
(२९) मिस्टर लैम्बर्ट, मसूरी।
(३०) डाक्टर ए० एफ० रुडलफ हार्नेली, जर्मनी।
(३१) पंडित बालचन्द्रराव, छत्रपुर।
(३२) बाबू गोकुलानन्द प्रसाद, मुजफ्फरपुर।
(३३) बाबू वासुदेव गोयनका, कलकत्ता।
(३४) बाबू योगेन्द्रपाल सिंह, बदाऊं।
(३५) बाबू लक्ष्मीनारायण, मुरादाबाद।
(३६) मंत्री, गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी, अहमदाबाद।

विषयनिर्द्धारिणी कमेटी का चुनाव।

इन तारों और पत्रों के पढ़े जाने के अनन्तर सर्व सम्मति से विषयनिर्द्धारिणी कमेटी नियत की गई जिसके निम्न लिखित महाशय सभासद बनाए गए।

अजमेर।

(१) राय साहब पंडित चन्द्रिका प्रसाद।
(२) सेठ दामोदर दास राठी, ब्यावर।

अलीगढ़।

(३) पंडित ब्रजवल्लभ मिश्र, सासनी।
(४) पंडित चिरंजीलाल।

आगरा।

(५) पंडित केदारनाथ भट्ट एम. ए.।
(६) पंडित घनश्याम शर्म्मा।
(७) पंडित रुद्रदत्त शर्म्मा।

आज़मगढ़।

(८) पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय।

इटावा।

(९) पंडित ब्रह्मदेव शर्म्मा।

कलकत्ता।

(१०) बाबू हरिकृष्ण जौहर।
(११) बाबू राजेन्द्र प्रसाद, एम. ए. बी. एल.।
(१२) बाबू रखालदास बन्दोपाध्याय एम. ए.।
(१३) पंडित रामानन्द द्विवेदी।
(१४) बाबू राधामोहन गोकुल जी।
(१५) बाबू महावीर प्रसाद।

कानपुर।

(१६) पंडित देवी प्रसाद शुक्ल बी. ए.।
(१७) पंडित शिवाधार पांडे एम. ए., एलएल. बी.।
(१८) पंडित सूर्यप्रसाद शर्म्मा।

काशी।

(१९) राय शिव प्रसाद।
(२०) महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी।
(२१) पंडित कृष्णाराम मेहता, बी. ए., एलएल. बी.।
(२२) बाबू गौरीशंकर प्रसाद, बी. ए., एलएल. बी.।
(२३) मिस्टर ए. सी. मुकर्जी, बी. ए.।
(२४) बाबू गंगाप्रसाद गुप्त।
(२५) पंडित सिद्धेश्वर शर्म्मा।
(२६) बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा।
(२७) राव बैजनाथ।
(२८) पंडित केशवदेव शास्त्री।
(२९) बाबू प्रसिद्धनारायणसिंह, बी. ए.।
(३०) पंडित रामनारायण मिश्र, बी. ए.।
(३१) गोसाईं रामपुरी।
(३२) बाबू शिवप्रसाद गुप्त।
(३३) पंडित लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी।
(३४) पंडित देवीप्रसाद उपाध्याय।

कृष्णनगर।

(३५) बाबू हेमचन्द्र सरकार, एम. ए.।

खांडवा।

(३६) बाबू माणिकचन्द्र जैन बी. ए. एलएल. बी.।
(३७) बाबू चम्पालाल जौहरी।

खीरी।

(३८) पंडित सूर्यनारायण दीक्षित, एम. ए. एलएल. बी.।

गया।

(३९) बाबू गया प्रसाद।
(४०) लाला भगवानदीन।

(४१) बाबू लक्ष्मीनारायण ।

गाज़ीपुर ।

(४२) बाबू विन्धेश्वरीप्रसाद सिंह ।
(४३) बाबू गोपालराम, गहमर ।

छत्रपुर ।

(४४) पंडित श्यामविहारी मिश्र, एम. ए. ।
(४५) बाबू चतुर्भुज सहाय ।
(४६) बाबू गोविंद दास ।
(४७) बाबू विजय बहादुर ।

जम्बू ।

(४८) बाबू श्यामसुन्दरदास, बी. ए. ।
(४९) पंडित रामचन्द्र शुक्ल ।

जयपुर ।

(५०) पंडित गणेशनारायण सोमाणी ।

जौनपुर ।

(५१) पंडित सरजूप्रसाद मिश्र ।
(५२) पंडित महादेव मालवीय ।
(५३) बाबू श्रीगोविंद सहाय ।

दरभंगा ।

(५४) पंडित जगदीश्वर प्रसाद ओझा ।

नागपुर ।

(५५) पंडित चन्द्रशेखर पाठक ।

पटना ।

(५६) राय पूरनचन्द खत्री ।
(५७) बाबू सोनासिंह चौधरी ।

पालामऊ ।

(५८) पंडित रामकृपाल पांडेय ।

प्रतापगढ़ ।

(५९) बाबू शिवनारायणसिंह, कालाकांकर ।

प्रयाग ।

(६०) माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय ।
(६१) बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन, एम. ए., एलएल. बी. ।
(६२) बाबू मिश्रीलाल गुप्त, बी. ए. ।
(६३) पंडित मुरलीधर मिश्र, बी. ए., एलएल. बी. ।
(६४) पंडित सत्यानन्द जोशी, बी. ए. ।
(६५) पंडित माधव शुक्ल ।
(६६) बाबू गंगाप्रसाद गुप्त, एम. ए. ।
(६७) पंडित माधवप्रसाद पाठक ।
(६८) पंडित रामजी लाल शर्म्मा ।
(६९) पंडित मन्नन द्विवेदी, बी. ए. ।
(७०) बाबू भगवानदास हालना ।

बस्ती ।

(७१) पंडित ललिता प्रसाद अग्निहोत्री ।

बांकीपुर ।

(७२) पंडित नन्दकुमार देव शर्म्मा ।
(७३) पंडित हरिदेव भट्ट ।

भागलपुर ।

(७४) बाबू हरिकृष्ण प्रसाद, बी. ए. ।
(७५) बाबू कृष्णप्रसाद, बी. ए. ।
(७६) बाबू युगलकिशोर अखौरी, बी. ए. ।

मिर्जापुर ।

(७७) बाबू ज्वालाप्रसाद, एम. ए. ।
(७८) पंडित बद्रीनाथ वैद्य ।
(७९) बाबू भगवानदास ।

रानीगंज ।

(८०) सेठ जगन्नाथ झुंझनूवाला ।

लखनऊ ।

(८१) बाबू गोपाललाल खत्री ।
(८२) पंडित रूपनारायण पांडेय ।

सारन ।

(८३) पंडित जीवानन्द काव्यतीर्थ ।

सिंहभूमि ।

(८४) बाबू रामचीजसिंह, चक्रधरपुर ।

हरदोई ।

(८५) पंडित शुकदेवविहारी मिश्र बी. ए. ।

हुगली ।

(८६) बाबू कालीप्रसन्नो वन्दोपाध्याय बी. ए. ।

इस प्रकार इस कमेटी ने चुने जाने के अनन्तर इस दिन का कार्य समाप्त हुआ और विषयनिर्द्धारिणी कमेटी ने अपना कार्य आरम्भ किया ।

दूसरा दिन ।

दूसरे दिन मंगलवार तारीख ११ अक्तूबर १९१० को दिन के ११ बजे सम्मेलन का कार्य प्रारम्भ हुआ । सभापति महाशय के आसन ग्रहण करते ही विद्यार्थियों ने मङ्गलगान प्रारम्भ किया ।

पहिला प्रस्ताव ।

मंगलगान के समाप्त होते ही सभापति महाशय ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया ।

"यह सम्मेलन सम्राट सप्तम एडवर्ड की मृत्यु पर शोक प्रकाशित करता है और राजवंश के साथ इस दुःखमय घटना पर सहानुभूति प्रगट करता है ।"

उपस्थित सज्जनों ने खड़े होकर इसे स्वीकार किया ।

दूसरा प्रस्ताव ।

इसके अनन्तर सभापति महाशय ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया ।

"यह सम्मेलन सम्राट पंचम जार्ज के सिंहासनारूढ़ होने पर उनको हृदय से राजभक्तिपूर्वक बधाई देता है और ईश्वर से प्रार्थना करता है कि वे चिरकाल तक राज्यसुख भोगें और अपनी भारतीय प्रजा के हित की उन्नति करें ।"

उपस्थित महाशयों ने इस प्रस्ताव को अत्यन्त हर्षपूर्वक स्वीकार किया ।

तीसरा प्रस्ताव ।

सभापति महाशय ने पुनः यह प्रस्ताव उपस्थित किया ।

"मि० रमेशचन्द्र दत्त, राजा कमलानन्द सिंह, पण्डित उमापति दत्त शर्म्मा और राजा रमेशसिंह की असामयिक मृत्यु से हिन्दी के भविष्य को बहुत हानि पहुँची है और यह सम्मेलन इस दुर्घटना पर शोक प्रकाशित करता हुआ उनके सम्बन्धियों से सहानुभूति प्रगट करता है ।"

उपस्थित सज्जनों ने इस घटना पर शोक प्रगट करते हुए इस प्रस्ताव को स्वीकार किया ।

चौथा प्रस्ताव ।

इस प्रस्ताव को प्रयाग के बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन एम० ए०, एलएल० बी० ने उपस्थित किया प्रस्ताव इस प्रकार था ।

"यह सम्मेलन इस बात पर शोक प्रगट करता है कि जिस आज्ञा को इन प्रान्तों की गवर्नमेंट ने हिन्दी जानने वाली प्रजा के हित के लिये अदालतों में नागरी अक्षरों के व्यवहार के विषय में १८ अप्रैल सन् १९०० की आज्ञानुसार जारी किया था उससे हिन्दी जानने वाली प्रजा को कहीं कहीं अमलों और हाकिमों के नागरी से पूरा परिचय न होने के कारण और कहीं वकीलों और मुख्तारों के स्वार्थ अथवा उदासीनता के कारण उचित लाभ नहीं पहुँच रहा है । यह सम्मेलन इन प्रान्तों की गवर्नमेंट से प्रार्थना करता है कि वह समय समय पर इस बात की जांच करा लिया करे कि गवर्नमेंट की ऊपर कही हुई आज्ञा का पालन ठीक ठीक होता है या नहीं । जो अमले अदालतों में नियत किए जाते हैं उनको दोनों लिपियों का परिचय काम करने योग्य है या नहीं । यह सम्मेलन गवर्नमेंट से नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता है कि वह यह आज्ञा करदे कि जो लोग तजवीज और इज़हार आदि की नकलें नागरी में लेने की प्रार्थना करें उनको वे सब नागरी में मिल जाया करें ।

यह सम्मेलन गवर्नमेंट का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करता है कि जिस प्रकार युक्त प्रान्त का गवर्नमेंट गज़ट अंगरेजी के अतिरिक्त उर्दू में भी प्रकाशित होता है उसी प्रकार उस के नागरी अक्षरों में भी प्रकाशित होने की वह आज्ञा करदे ।

यह सम्मेलन गवर्नमेंट का ध्यान इस ओर भी दिलाता है कि चुंगी तथा दूसरे टेक्सों की रसीदें तथा अन्य कागज़ात जो डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और म्युनिसिपालिटियों से जारी होते हैं वे सब अधिकांश प्रजा के सुभीते के लिये नागरी अक्षरों में लिखे जाने चाहिए और आशा करता है कि डिस्ट्रिक्ट बोर्ड तथा म्युनिसिपालिटियां इस बात पर शीघ्र ध्यान देंगी।

नागरी प्रचार के लिये सम्मेलन उचित समझता है कि युक्तप्रान्त के प्रत्येक ज़िले में इस कार्य्य के सम्पादन के लिये हिन्दी प्रेमियों की एक एक सभा स्थापित हो और सम्मेलन की कमेटी उनके स्थापित होने में सहायता करे और उनके कार्य्य की जांच के लिये तथा उनके सम्बन्ध में अन्य कार्य्य करने के लिये एक इन्स्पेक्टर नियत करे।

यह सम्मेलन उन देशी राज्यों से जिन के दफ्तरों में अब तक हिन्दी का प्रचार नहीं हुआ अत्यन्त विनीत भाव से प्रार्थना करता है कि वे अपनी प्रजा के सुभीते तथा उन्नति के लिये राज्य के दफ्तरों में हिन्दी का व्यवहार करने की आज्ञा जारी करदें।

इस सम्मेलन की सम्मति है कि अदालतों में नागरी प्रचार के कार्य्य तथा हिन्दी-साहित्य की उन्नति के लिये एक कोश इकट्टा किया जाय जो केवल उसी कार्य में लगाया जाय।"

इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए बाबू पुरुषोत्तम दास ने कहा कि "यह बात बहुत दिनोंसे गूंज रही है और लोग इसके लाभ को स्वीकार भी कर रहे हैं कि देश भर में केवल एक भाषा फैलाई जावे। ऐसी भाषा कौन है जो देश भर में सहज ही फैलाई जा सकती है ? यह भाषा हमारी हिन्दी भाषा ही है-हिन्दी भाषा के जानने वाले अन्य भारतवर्षीय भाषाओं के जानने वालों से कहीं अधिक हैं; हिन्दी भाषा अन्य गुणों से भी सर्वाङ्ग पूर्ण है, उसका साहित्य भी अच्छा है और उसके साहित्य की दिन २ उन्नति होने की सम्भावना भी है। जिस भाषा में ऐसे लेख नहीं लिखे जा सकते हैं जोकि पढ़ने वालों के भावों पर अपना प्रभाव डाल सकें, जो उनके भावों को बदल सकें या जो उनके भावों की धारा को एक दूसरी ओर बहा सकें, उसके साहित्य की उन्नति होने की सम्भावना नहीं होती। हिन्दी भाषा में वह गुण है जिससे कि हिन्दी में उक्त प्रकार के लेख लिखे जा सकते हैं। हिन्दी भाषा को भारतवर्ष के हर प्रान्त के लोग समझते और समझ सकते हैं, अब वह उपाय करने चाहिये जिनसे कि हिन्दी भाषा की सर्व प्रकार उन्नति होवे। जिस भाषा को राजा का सहारा नहीं है वह शीघ्र उन्नति नहीं कर सकती है। लोग उसका उतना आदर नहीं करते जितना कि राजभाषा का। उर्दू की उन्नति इसका प्रमाण है। हम को उद्योग करना चाहिये जिसमें कि हमारी हिन्दी को भी 'राजद्वार' में स्थान मिले, ऐसा उपाय कीजिये जिसमें कि हिन्दी भाषा का प्रचार हर एक प्रान्त के गांव २ में हो।

सन् १९०० की आज्ञानुसार हमारी सर्कार ने यह अनुमति देदी थी कि कचहरी की अर्जी आदि यदि अर्जी देने वाला चाहे तो हिन्दी में लिखकर दे सकता है परन्तु हिन्दी की दर्ख्वास्तों की संख्या बहुत कम है, इसमें केवल हमारी उदासीनता है, हमारा दोष है, वकीलों के मुहर्रिर अधिकतर हिन्दी नहीं जानते-वे उर्दू ही लिखना पसन्द करते हैं; यह भी हिन्दी की दर्ख्वास्तों की लघु संख्या का एक कारण है।

सर्कारी गज़ट अंगरेजी में छपता है-उसका एक संस्करण उर्दू में भी निकलता है। इन प्रान्तों में एक बहुत बड़ी संख्या उन लोगों की भी है जो कि केवल हिन्दी ही में लिख पढ़ सकते हैं, इसलिये सर्कारी आज्ञाओं को सब कहीं पहुंचाने के लिये-अति प्रकाश करने के लिये-यह आवश्यक है कि उक्त गज़ट का एक संस्करण हिन्दी में भी निकला करे।

हमारे देश की कई रियासतों में हिन्दी का

प्रचार हो चुका है, परन्तु बहुतों में अभी ऐसा नहीं हुआ है, यहां अभी तक उर्दू ही में अदालती कार्रवाई होती है अतएव ऐसा उद्योग करना चाहिये कि सब देशी राज्यों की अदालतों में हिन्दी को स्थान मिले।" इतना कहने के अनन्तर सुयोग्य वक्ता ने प्रस्ताव के वाक्य पढ़कर सुनाये और उपस्थित सज्जनों से उसको स्वीकार करने की प्रार्थना की।

अजमेर के राय साहेब पंडित चन्द्रिकाप्रसाद त्रिपाठी ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन इस प्रकार किया—

"प्रिय सज्जनो! जिस मन्तव्य का प्रस्ताव बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन साहब ने किया है उसका अनुमोदन मैं सहर्ष करता हूं। प्रस्ताव कर्ता ने इस विषय का ऐसी योग्यता से वर्णन किया है कि अधिक कहने की मेरे लिये जरूरत नहीं है, तो भी मैं कुछ बातें अपने तजुर्बे की कहता हूं। अजमेर की म्युनिसिपल कमिटी का मैं १२ वर्ष से मेम्बर हूं, वहां की म्युनिसिपैलिटी के विशेष कागज़ात हिन्दी और उर्दू दोनों में रक्खे जाते हैं (कर्तालध्वनि)। उस कमिटी के और उसकी सबकमिटियों के तालिका (Agenda) अंग्रेजी में बनाए जाते हैं, पर हिन्दी और उर्दू जानने वाले मेम्बरों के लिये उन के तर्जुमे इन दोनों लिपियों में भी तैयार किए जाते हैं। जब कोई खास काम कमिटी के सामने पेश होने वाला होता है तब उस के संबंध के अंग्रेजी कागज़ात का तर्जुमा कराके हिन्दी और उर्दू दोनों में मेम्बरों को बांटा जाता है। नोटिस जो म्युनिसिपैलिटी के बारे में कमिटी की तरफ़ से या साहेब डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की तरफ से जारी होते हैं सो भी हिन्दी और उर्दू दोनों में छपते हैं। चुंगी की रसीदें और कई राजिस्टर हिन्दी और उर्दू दोनों में बनते हैं, उर्दू की रसीदों में रुपए आनों की रकम हिन्दी में भी हमेशा लिखी जाती है, क्योंकि चुंगी देने वाले व्यापारी उर्दू बहुत कम जानते हैं और हिन्दी उन में लगभग हर एक जानता है।

हर एक म्युनिसिपैलिटी में हिन्दी और उर्दू दोनों का इस भांति से बर्ताव होना चाहिए, खास करके युक्त प्रदेश और पंजाब में। म्युनिसिपल कमिटियों को इस में पूरा इख़तियार है। कमिटियों के मेम्बरों का ध्यान इस तरफ़ खींचना चाहिए। यदि कमिटी के मेम्बर चाहें तो म्युनिसिपैलिटियों में हिन्दी का प्रचार अवश्य हो सकता है (कर्तालध्वनि)।

हमारे देशवासी अधिकतर हिन्दी के जानने वाले हैं, केवल हिन्दू ही नहीं बरंच मुसलमानों में से भी बहुत जन हिन्दी ही को काम में लाते हैं। उर्दूख्वां केवल मुन्शी लोग हैं, बाक़ी साधारण जन जिन की संख्या बहुत ही अधिक है हिन्दी ही को पसन्द करते हैं। यह बात मैंने रेलवे मुलाजिमों में ख़ासकर देखी है, उनमें से बहुत मुसलमान हिन्दी ही लिखना जानते हैं। ये मुसलमान भाई मुंशी नहीं है पर दस्तकार (Skillod workmen) हैं अर्थात् फ़िटर, लोहार, एंजिन चलानेवाले, रंगसाज़ टीन और तांबे का काम करने वाले, कलें चलाने वाले इत्यादि हैं। इस का कारण क्या है? मेरी समझ में बायस यही है कि हिन्दी का सीखना बहुत सहज है जिस से साधारण कारीगर इस को थोड़े ही काल में सीख लेते हैं और अपना काम बखूबी चलाते हैं क्योंकि जो लिखते हैं उस के पढ़ने में भूल नहीं पड़ती (कर्तालध्वनि)।

सर्कारी कचहरियों में और म्युनिसिपल दफ्तरों में हिन्दी का प्रचार केवल प्रजा के सुबीते के लिये ही हम चाहते हैं, हमारी कदापि यह मनसा नहीं है कि उर्दू उठ जाय। हम चाहते हैं कि उर्दू जारी रहे और हिन्दी जानने वालों के लिये हिन्दी भी काम में लाई जाय। जिस से इन लोगों की दिक़्क़तें मिट जांय (कर्तालध्वनि)।

अब मैं, सज्जनो, आप से विनय करता हूं कि इस मंतव्य को आप सब मिलकर पास करें और अपने अपने शहर के म्युनिसिपल कमिश्नरों पर हिन्दी के प्रचार का जोर डालें (कर्तालध्वनि)। इस कथन को समाप्त करने के पहिले मैं अजमेर की म्युनिसिपल कमेटी के कुछ नियम

आपकी सूचना के लिये पढ़ सुनाता हूं जिन्हें अजमेर मेरवाड़ा के चीफ कमिश्नर ने ८ जनवरी १९०९ ई० की आज्ञा न० ८६१२ से स्वीकार किया था।

Rule 26. Knowledge of English, Urdu, *Hindi* and Mahajani shall be required from the Octroi Superintendent and the Assistant Superintendent and every Moharrir to the extent, approved by the Finance Sub committee in each case.

Rule 27. The receipts shall be written in *Hindi* with carbon paper.

Rule 37. Copies of the rules for the assessment and collection of Octroi and the Octroi Schedule in English, *Hindi* and Urdu shall be exposed at every Octroi out-post and at the Head Octroi office.

Rule 54. Rules 28 to 58 both inclusive shall be translated into *Hindi* and vernacular and circulated in the City.

चक्रधरपुर के बाबू रामचीजसिंह ने इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—

"विज्ञवरो! मैं इस चिरस्मरणीय अपूर्व्व साहित्य-सम्मेलन के दुष्प्राप्य शुभ मुहूर्त्त में आप उदारचित्त महानुभावों का ध्यान एक ऐसे आवश्यक विषय की ओर आकर्षित करने की अनुमति चाहता हूं कि जिस पर विचार करना और यथाशक्य उस विचार को चिरस्थायी कार्य्य में प्रणपूर्व्वक परिणत करना प्रत्येक सच्चे हिन्दी-हितैषी और हिन्दीभाषा-भाषी विज्ञ व्यक्ति का परम पवित्र कर्त्तव्य है।

विचारशील सज्जनो, यद्यपि वह विषय आपाततः तुच्छसा बोध तो होगा; परन्तु तथापि उसकी फल रूप कार्य्यकारिणी शक्ति की अत्युत्कृष्ट गुण-गरिमा और असाधारण उपयोगिता पर किञ्चित ध्यान देने से सम्भव है कि आश्चर्य्य और विस्मय के साथही आप महानुभावों के सर्व्वाङ्ग में अवश्य ही आनन्द की तरङ्गें भी विद्युद्वेग से आन्दोलित हो जायंगी। वह प्रकाश्यतः तुच्छ किन्तु वस्तुतः अमोघ लाभदायक विषय "हिन्दी-पैसा-फण्ड" अर्थात् हिन्दी भाषा की प्रकृत उन्नति के निमित्त संगृहीत अर्थकोष मात्र है। जो लोग यह भली भांति जानते हैं कि रेणु के छोटे कणों से बड़े बड़े पर्व्वत बनते हैं, जल की छोटी छोटी बून्दों से बड़े बड़े जलाशय भरते हैं, अन्न के छोटे छोटे दानों से बड़ी बड़ी राशियां लगती हैं; एक एक अक्षर के पढ़ने से मनुष्य महा पण्डित बन जाता है तथा क्रमशः एक एक डग चलने से कालान्तर में बड़ी बड़ी यात्रायें समाप्त होती हैं, उन सज्जनों के लिये यह विषय निश्चयतः विशेष सुलभ, परम प्रिय और अत्यन्त चित्ताकर्षक है। यह वही विषय है कि जिस पर हिन्दी के परम हितैषी और सुलेखक पोड़ाहाट नरेश श्रीमान् राजा नरपतिसिंह जी देव ने सर्व्व प्रथम इस विषय पर मेरा लेख देखकर—कहा था कि इस विषय के लेखों की नकल समाचारपत्रों में छपवाने के लिये मेरी कन्यायें करेंगी। और इस विषय पर सड़कों पर खड़े होकर अथवा कहीं जाकर भी व्याख्यान देने की अवश्यकता होगी तो मैं अवश्य वहां जाकर व्याख्यान दूंगा। महाशयो, यह वही विषय है कि जिस पर दूरदर्शी बंगाली सज्जन श्रीयुक्त बाबू सुरेन्द्रनाथ सेन गुप्त बी० ए० इञ्जिनियर सी० एन० आर० ने कहा था कि यदि इस विषय का यथोचित आदर देशहितचिन्तक हिन्दी भाषा-भाषी सज्जन करेंगे, तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह नवसंस्थापित कोष कभी भारतव्यापी होकर केवल हिन्दी बोलने वालों का ही नहीं वरन् समस्त भारतवर्ष का भी परम कल्याण करेगा।

माननीय महाशयो, इन्हीं स्वनामधन्य विद्वान श्रीमानों की चेष्टा, उत्साह और सत्परामर्श से गत २१ वीं नवम्बर सन् १९०९ ईस्वी को हिन्दी जगत में सब से पहले ज़िला सिंहभूम के अन्तर्गत पोड़ाहाट स्टेट की राजधानी चक्रधरपूर

में पोड़ाहाट नरेश के सभापतित्व में हिन्दी–पैसा–फण्ड पर एक महती सभा हुई और उसी दिन चक्रधरपुर में ‘ हिन्दी–पैसा-फण्ड-समिति ’ भी स्थापित हुई। किन्तु सच बात यह है कि अविवेकी लोग जिन विषयों को तुच्छ समझकर उनपर कभी भूले भी विचार नहीं करते, विवेकी और विचारवान लोग उन्हीं सामान्य विषयों से केवल अपनी ही नहीं वरन् अपने विस्तृत समाज, विशाल देश तथा समस्त संसार की भी मान मर्यादा बढ़ाते और विशेष भलाई करते हैं। यह सम्मेलन हिन्दी-हितैषी और हिन्दी भाषा-भाषी बड़े बड़े विद्वानों एवं विचारवान् पुरुषों से ही संगठित हुआ है और हिन्दी भाषा की यथेष्ट उन्नति करके देशोन्नति करना ही इसका एकान्त कर्त्तव्य है। इसीसे चक्रधरपूर की समिति ने हिन्दी–पैसा–फण्ड जैसे परमोपयोगी विषय पर कुछ आवश्यक निवेदन करने के निमित्त मुझे अपना प्रतिनिधि बनाकर सम्मेलन की सेवा में भेजा है।

माननीय महाशयो, समिति की धारणा है कि जैसे बिना उत्तम श्रेणी के विचारों के स्वभावतः किसी भी व्यक्ति की मानसिक तथा मनुष्यों की बुद्धि विषयक उन्नति के बिना सामाजिक उन्नति नहीं हो सकती, वैसेही सामाजिक उन्नति के बिना देश की उन्नति भी निश्चयतः असम्भव क्रिया है। अतः किसी देश की प्रकृत समृद्धि की वृद्धि के निमित्त तद्‌स्थ देशवासियों को उत्कृष्ट श्रेणी के विचार प्राप्त करने चाहियें। किन्तु बिना सद्विद्या-प्रचार के उत्तमोत्तम विचारशक्ति नहीं उपलब्ध हो सकती इसी लिये विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से विद्यावृद्धि पर ही देशोन्नति का होना निर्भर किया है।

किसी भी सद्विद्या का प्रचार बिना किसी सुसंस्कृत भाषा के नहीं हो सकता और यह भी कि सर्व्वसाधारण के बोध गम्यार्थ स्वमातृभाषा जैसी सरल कोई अन्य भाषा कभी नहीं हो सकती, इसलिये निज मातृभाषा में किसी विद्या का प्रचार जैसा जन समाज के हितार्थ सुगम हो सकता है, वैसा अन्य रूप से कदापि नहीं। तब अपनी मातृ-भाषा को भी बिना उत्तमोत्तम विविध विद्या-प्रचार के योग्य बनाये काम चलने का नहीं। इसलिये देशोन्नति के आन्तरिक अभिप्राय से अपनी मातृ-भाषा का सुधार और उसमें उत्तमोत्तम विद्या का प्रकाशित करना एकान्त कर्त्तव्य सिद्ध हुआ। बस, इन्हीं देश-हितैषी कार्य्यों की प्रकारान्तरतः पूर्त्ति करनी इस सभा का एक मात्र अभीष्ट है। हिन्दी साहित्य-सम्राट भारतेन्दु श्री बाबू हरिश्चन्द्र जी भी आज से बहुत दिन पहलेही कह गये हैं कि;—

“ निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। ”

किन्तु यह बात नितान्त निर्विवाद है कि द्रव्याभाव के कारण हमारी मातृभाषा हिन्दी की यथेष्ट उन्नति होने नहीं पाती। यह कौन नहीं जानता कि बड़े बड़े विद्वानों के उर्व्वर मस्तिष्क द्रव्याभाव के कारण निकम्मे हो रहे हैं? यह किसे ज्ञात नहीं है कि विशेष प्रतिभाशाली बड़े बड़े विद्वानों की लिखी अमूल्य पुस्तकें दीमकों का आहार बनरही हैं? यह किसे विदित नहीं है कि अर्थाभाव से कितनेही हस्तलिखित उत्तमोत्तम श्रेणी की पुस्तकों की स्याही कपूर जैसी उड़ रही है? इस बात को कौन नहीं जानता कि हमारे गम्भीर विचारयुक्त अत्यन्त उर्व्वर मस्तिष्क वाले सहस्र सहस्र विद्वान युवक आर्थिक दुरवस्था के कारण लेखनी सञ्चालन और अपनी विलक्षण बुद्धि विद्या को व्यवहृत करने में असमर्थ से हो गये हैं? भला, हिन्दी–हितैषिणी ऐसी कौनसी सभा है कि जिसके कोष में तदुन्नति साधक आवश्यक कार्य्यों के करने के निमित्त यथेष्ट धन विद्यमान है? यह कौन नहीं जानता कि कितनी ही हिन्दी–हितैषिणी सभा समितियां ऋणभार से ऐसी दब गयी हैं कि कुछ कर ही नहीं सकतीं और नाम मात्र को सभा समिति कही जाती हैं? जब आर्थिक दुरवस्था इस प्रकार चरम सीमा को पहुँच गयी है, तब हमारी महादीना मातृभाषा हिन्दी-की उन्नति कैसे हो सकती है? जब हिन्दी भाषा-भाषी बड़े बड़े श्रीमान् अभीतक हिन्दी की उन्नति

के निमित्त कुछ भी द्रव्य व्यय करना अपना कर्त्तव्य समझते ही नहीं, तब हिन्दी की यह घोर दीनता भला कैसे दूर हो ? अस्तु, इसी द्रव्याभाव को दूर कर विविध सदुपायों द्वारा हिन्दी की यथेष्ट उन्नति करने के अभिप्राय से ही चक्रधरपूर में हिन्दी-पैसा-फण्ड-समिति स्थापित हुई है। सर्व्व साधारण से सुगमतापूर्व्वक द्रव्य संग्रह करके हिन्दी की उन्नति साधन का इससे और कोई उत्तम उपाय परिज्ञात नहीं होता। इस फण्ड में दीन से भी दीन व्यक्ति प्रतिमास पैसे दो पैसे और साधारण स्थिति वाले मनुष्य आने दो आने बिना क्लेश देसकते हैं। ऐसी अवस्था में इस फण्ड के चिरस्थायी होने में कुछ भी सन्देह नहीं किया जा सकता। यह फण्ड एक प्रकार से मराठी पैसा-फण्ड का अनुकरण स्वीकार किया जा सकता है। उस जातीय फण्ड में प्रतिमास कई सौ रुपये की आमदनी है, अतः उससे कला कौशल और शिल्प आदि कई सत्कार्य्यों में आर्थिक सहायता पहुँचाई जाती है; किन्तु कहना यह है कि यदि हिन्दी-पैसा-फण्ड केवल हिन्दीभाषा-भाषियों में ही यथेष्ट रूप से प्रचारित किया जाय, तो भी प्रतिमास कई सहस्र रुपयों की आमदनी हो सकती है; क्योंकि मराठी-भाषा-भाषियों से हिन्दी बोलने लिखने वालों की संख्या लगभग ८ गुनी है, किसी किसी विद्वान की यह भी राय है कि हिन्दी बोलने वालों की संख्या २० कोटि है। तब विनय यह है कि जब महाराष्ट्र विद्वानों ने मराठी-पैसा-फण्ड का प्रचार अपने समाज में करके अपेक्षाकृत अधिक सफलता प्राप्त की है, तब हमलोग हिन्दी भाषा-भाषियों में हिन्दी-पैसा-फण्ड का प्रचार करने में क्यों नहीं सफलता-प्राप्त हो सकते हैं ? चक्रधरपूर एक ऐसा स्थान है कि जहां केवल हिन्दी-भाषा-भाषी ही नहीं हैं, वरन् वहां उड़िया, बंगाली, मरहठे, मदरासी और गुजराती आदि भी बसते हैं, तो भी वहां हमारी समिति ने अपेक्षाकृत अधिक सफलता प्राप्त की है। वहां वर्त्तमान इस फण्ड का मासिक चन्दा १०) से कम नहीं है। इस फण्ड में भिन्न भिन्न भाषा-भाषी सभी सज्जन यह विचार कर अनन्दपूर्व्वक चन्दा देते हैं कि कुछ दिनों में हिन्दी ही हमारी राष्ट्रभाषा होगी। वे यह विचार कर भी चन्दा देते हैं कि जैसे गरीबनी गाय क्या हिन्दू क्या मुसलमान क्या ईसाई और क्या कसाई सभी को एक समान मीठा दूध देकर संतृप्त करती है, वैसेही यह महादीना किन्तु सर्व्वसद्‌गुणसम्पन्ना हमारी हिन्दी भाषा भी सभी की समान रूप से भलाई करती है। इससे सब के प्रति दिन सहस्र सहस्र काम निकलते हैं। चक्रधरपूर की समिति को दृढ़ विश्वास है कि एक न एक दिन हिन्दी ही भारत-वर्ष की राष्ट्रभाषा होगी, इसीसे वह हिन्दी-पैसा-फण्ड को भी भारतव्यापी बनाने की अव्यर्थ चेष्टा करती है। यह सुनकर आप महानुभावों को अत्यन्त हर्ष होगा कि जैसे इस फण्ड में भिन्न भिन्न भाषा-भाषी मासिक चन्दा देते हैं, वैसे ही चक्रधरपूर की समिति के उत्साही सदस्य भी भिन्न भिन्न भाषा-भाषी हैं। सारांश यह कि जब भिन्न भिन्न भाषा-भाषी सज्जन हिन्दी की यथेष्ट उन्नति करने के निमित्त हिन्दी-पैसा-फण्ड को भारतव्यापी बनाने की चेष्टा करते हैं, तब स्वयं हिन्दी भाषा-भाषी हमारे पूज्य और प्रिय बन्धु इस फण्ड को भारतव्यापी बनाने की अपेक्षाकृत अधिक चेष्टा क्यों नहीं करेंगे ?

विचारशील सज्जनो ! यह बड़े ही हर्ष का विषय है कि भारत गवर्नमेण्ट के सुशासन के फल और अपनी स्वाभाविक सरलता आदि विशेष उत्कृष्ट गुणों के कारण हिन्दी भाषा बड़े वेग से उन उन स्थानों में भी फैल रही है कि जहां जहां इसका पहिले कुछ भी प्रचार नहीं था; और सम्भव है कि थोड़े ही दिनों में यह भारतव्यापिनी भी हो जायगी; किन्तु स्मरण रहे कि इसको तब तक प्रधानता नहीं मिल सकती, जब तक यह सुधार संवार कर संस्कृत, फ़ारसी, अर्बी, ल्याटिन, ग्रीक और अंगरेजी प्रभृति भाषाओं की जैसी

सुसंस्कृत भाषा न बनाई जायगी, क्योंकि तभी इसमें उत्तमोत्तम वैज्ञानिक, धर्म्मविषयक तथा अन्यान्य लाभदायक ग्रन्थ पूर्णतया प्रकाशित किये जा सकते हैं, जिन्हें सर्व्वसाधारण सुगमतापूर्व्वक अपनी मातृभाषा में अनायास अध्ययन कर शीघ्रही अपने देश की उन्नति करने में समर्थ हो सकते हैं। अधुना विचार कीजिये कि इस महान कार्य्य में द्रव्य की कैसी आवश्यकता है। अकेली चक्रधरपुर की हिन्दी-पैसा-फण्ड-समिति इस बृहत्कार्य्य में हाथ डालकर तादृश सफलता कथमपि प्राप्त नहीं कर सकती; क्योंकि यह महान कार्य्य समस्त हिन्दी-भाषा-भाषियों के सच्चे मन से मिलकर करने योग्य है। देशभर के मिलकर करने योग्य काम को कोई एक व्यक्ति अथवा किसी प्रान्त की विशेष शिक्षित सभा भी नहीं कर सकती। विज्ञवरो, आप लोग अपने अपने यहाँ चक्रधरपुर की समिति की शाखा-समिति स्थापित कर हिन्दी-पैसा-फण्ड का प्रचार कीजिये। यदि प्रति मास ॥) वा ।) तक की भी आमदनी हो तो भी कृपया इस फण्ड को स्थापित करने से हाथ मत खींचिये। यदि आप सज्जनों की चेष्टा और सच्चे हिन्दी प्रेम से यह फण्ड सर्वत्र स्थापित हो जायगा, तो प्रतिमास इस फण्ड में सहस्रों रुपये सुगमता से इकट्ठे होने लगेंगे जो कल्पद्रुमवत् बहु काल पर्य्यन्त आप तथा आप की सन्तानों का महदुपकार और कल्याण करते रहेंगे। हा! शोक! आज दिन ऐसे कितने बड़े बड़े श्रीमान हैं, जो अपनी मातृभाषा हिन्दी की उन्नति के लिये प्रतिमास ५।६ रुपये भी व्यय करते हों, किन्तु इससे कुछ यह अभिप्राय नहीं कि वे अन्यान्य अतिरिक्त कामों में प्रचुर अर्थ व्यय नहीं करते। मैं हिन्दी-पैसा-फण्ड-समिति की ओर से सविनय निवेदन करता हूं कि आप सज्जन महोदय अपने समाज तथा देश के मंगलार्थ मासिक चन्दे के साथ साथ जन्मोत्सव, पर्व और आनन्द के अवसरों पर भी लोगों से इस कोष में द्रव्य दान कराइए। हाट बाज़ार, घाट, तीर्थ, मेले और स्टेशन आदि स्थानों में विज्ञापन अथवा व्याख्यान द्वारा इस फण्ड का प्रचार कीजिये। गांव गांव और नगर नगर में इस फण्ड के स्थापित करने के लिये अव्यर्थ आन्दोलन कीजिये, निश्चय सफलता प्राप्त होगी। आपका समाज निद्रितावस्था में है सही; किन्तु जैसे निद्रित भूमि जोत कोड़कर धूप हवा और वर्षा के सामने खोल देने से अर्थसाधक बन जाती है, वैसे ही आप सज्जनों के सदुपदेशों को पाकर आपका समाज जाग खड़ा होगा और हिन्दी प्रति अपने कर्त्तव्य का कारण भली भांति समझ जायगा।

महाशयो, मातृपदपद्मस्पर्शिता धूलि भी जब परम पवित्र हो जाती है और उसे शिर नेत्र तथा वक्ष स्थल में लगाकर मनुष्य अपने को धन्य समझते हैं, तब जो बोली माता के सर्व्वश्रेष्ठ अंग श्रीमुखारविन्द से निकली हुई है, जिससे हम सब के नित्य सहस्र सहस्र काम निकलते हैं, जिसके न रहने से एक दिन क्या बरन् एक घड़ी भी काम नहीं चल सकता और जिसके द्वारा बड़े बड़े विद्वानों के अत्यन्त उर्व्वर मस्तिष्क की लाखों और करोड़ों वर्ष की कमाई का सर्व्वाधिकारी, मनुष्य थोड़े ही वर्षों में हो जाता है, तब भला माता की उसी परमकल्याणकारिणी, शोकसन्ताप हारिणी, सततसुधाधारिणी वाणी की उन्नति के लिये ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो आत्मसमर्पण न कर देगा? इससे अधिक पुण्य का कार्य्य और क्या हो सकता है कि जिसमें यदि एक पैसा भी दिया जाय, तो वह पैसा सहस्र सहस्र मूर्खों को पण्डित एवं निकम्मों को कामकाजी बनाने के काम में आयगा। मैंने अपनी जन्मभूमि बालिया की देहातों में अनपढ़ किसानों को भी मातृभाषा की अलौकिक महिमा यथा शक्य समझा कर सफलता प्राप्त की है। महा महिमान्विता मातृ-भाषा के परम पवित्र अगाध प्रेम में निमग्न हो कर मुझे मेरे बहुसंख्यक देहाती भाइयों ने सम्मति दी है कि माता की बोली की उन्नति के लिये यदि

थोड़ी भी चेष्टा की जायगी तो सभी किसान हिन्दी—पैसा—फण्ड में सहायता तो देंगे ही, इसके अतिरिक्त बोआई, कटनी और दँवाई आदि के अवसरों पर भी अवश्य ही कुछ कुछ अन्न देंगे। सभी पेशे के लोग इस पवित्र और देशोन्नति सम्बन्धी कार्य्य में आनन्दपूर्व्वक सहायक होंगे। इस विचार को कार्य्य में परिणत करने की चेष्टा यथा समय की जायगी; किन्तु सम्प्रति निवेदन यह है कि यदि आलस असावधानी और अनुत्साहितादि उन्नतिविरोधी और कार्य्यनाशक शत्रुदल से बचकर धैर्य्य, कार्य्यतत्परता, सहिष्णुता, सत्साहस, अध्यवसाय और सचाई से हिन्दी-पैसा-फण्ड के प्रचार की चेष्टा की जायगी तो विफल-मनोरथ होने का कोई भी कारण दृष्टिगोचर नहीं होता। आशा और प्रार्थना है कि सम्मेलन के तत्त्वावधायक भी इस विषय पर विशेष विचार कर ज़िला—समिति और प्रादेशिक-समिति भी स्थापित करने का शीघ्र कोई विशेष प्रबन्ध करेंगे। समिति की अन्तिम प्रार्थना यह है कि आज से इस फण्डरूप अभिनव शिशु के पालन पोषण का भार ग्रहण करने तथा इसे सब प्रकार से देश-सेवा करने योग्य बनाने में मातृपितृवत् निज निष्कपट स्नेह प्रदर्शन में आप दयावान सज्जन गण किञ्चिन्मात्र भी त्रुटि न करेंगे।

अवशेषतः यह कि मैं इस फण्ड को भारत-व्यापी बनाने और चक्रधरपुर की समिति की सर्वत्र शाखा—समिति स्थापित करने की प्रार्थना हिन्दी की केन्द्रभूमि परम पुण्यभूमि काशी के उस प्रथम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन में कर रहा हूं कि जिसके सभापति युक्तप्रदेश के सर्व्वप्रधान नेता देशपूज्य मान्यवर पण्डित मदनमोहन मालवीय जी हैं। मैं सम्मेलन में सम्मिलित उन सभी महानुभावों से प्रार्थना सुना रहा हूं जो कायमनोवाक्यपूर्व्वक विविध सदुपायों द्वारा हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरी प्रार्थना अवश्य ही कार्य्य में परिणत की जायगी कि जिससे हम समस्त हिन्दीभाषा-भाषी और भारतवासी महादीना हिन्दी का अश्रुमोचन करते हुए उसके कातर कण्ठ निःसृत आशीर्वादों को ग्रहण करने योग्य हो जायंगे। और साथही हिन्दी-साहित्य-सम्राट भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के पूर्व्वोक्त इस सदुपदेश को भी कार्य्य में परिणत हुआ देखकर सच्चे सुख और अपार अचल यश के भागी होंगे कि;—

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।"

छत्रपुर के दीवान पंडित श्यामविहारी मिश्र एम. ए. ने इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—

"माननीय सभापतिजी और सभ्यगण!

मुझे आज्ञा हुई है कि मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करूँ कि नागरी प्रचार तथा हिन्दी-साहित्य की उन्नति के लिये एक कोश इकट्ठा किया जाय जो केवल इन्हीं कार्यों में लगाया जाय। मेरे पूर्व के वक्ताओं ने हिन्दी भाषा का प्रायः समस्त भारतवर्ष में सर्वव्यापिनी होना दृढ़ प्रमाणोंसे सिद्ध कर दिया है और उसी का पिष्ट-पेषण करके मैं आप महाशयों का समय नष्ट नहीं करना चाहता। चाहे उस भाषा को हिन्दुस्तानी कहिए चाहे किसी और नाम से पुकारिए पर वह है हिन्दी ही भाषा, क्योंकि उस का व्याकरण एवं शब्दविन्यास जितना हिन्दी से मिलता है उतना किसी भी दूसरी भाषा से नहीं मिलता। वास्तव में यदि कोई कहे कि उस में और हिन्दी में भेद क्या है तो यही कहना पड़ेगा कि कुछ भी नहीं। हाँ कभी कभी संस्कृतज्ञ लोग हिन्दी में संस्कृत के शब्दों की बिना अधिक प्रयोजन के और अनुपयुक्त रीति पर भरमार कर देते हैं, तभी वह हिन्दी लोगों की बोलचाल वाली हिन्दी से कुछ भिन्न सी प्रतीत होने लगती है; पर स्मरण रहे कि रोज की बोल चाल वाली भाषा के साम्हने सभी देशों और भाषाओं में साहित्य की भाषा गम्भीर और कुछ दुर्गम हुआ करती है पर ऐसा होने से वे भिन्न भाषाएँ नहीं हो जातीं, अस्तु।

इस में सन्देह नहीं कि हिन्दी भाषा का प्रचार भारतवर्ष में बहुत विशेष है तथा प्रायः सारे देश में वह थोड़ी बहुत अवश्य समझ ली जाती है। वह भाषा विशेष करके नागरी लिपि में ही लिखी जाती है और प्रायः सभी प्रान्तों के विज्ञ जनों ने निश्चय किया है कि नागरी अक्षरों का अधिकाधिक प्रचार होना आवश्यक है। यह वर्णमाला ऐसी सरल है कि:—

"द्वै वर्ष ही में लेहिं बालक शुद्ध लिखि पाढ़ि याहि। पर अन्य भाषा पढ़न को दश वर्ष हू बस नाहिं।"

इस में प्रायः सभी बोलियाँ यथातथ्य लिखी जा सकती हैं और उन के शुद्ध उच्चारण करने और पढ़ने में कोई भी बाधा नहीं पड़ती। इस के गुणों को देखकर विद्वानों ने इसे The Lingua-Franca of India अर्थात् हिन्द की सर्वव्यापिनी भाषा कहा है।

ऐसी भाषा और ऐसी लिपि का जितनाही अधिक प्रचार हो उतना ही समस्त भारतवर्ष की प्रजा का सुबिधा और उपकार सम्भव है। इन के प्रचार से क्या क्या सुबिधाएं और उपकार होंगे इस पर एक भारी पुस्तक लिखी जा सकती है और उनका दिग्दर्शन तक कराने में समय बहुत लग जायगा। अब मेरी यही प्रार्थना है कि ऐसे उत्तम कार्य के लिये जो पैसा-फण्ड अर्थात् पैसों का कोश स्थापित करने का प्रस्ताव हुआ है वह बड़ाही उपयोगी और आवश्यक है। इस में सहर्ष और उदारतापूर्वक चन्दा देने की मैं आप लोगों से प्रार्थना करता हूँ। यदि कोई वार्षिक या मासिक चन्दा लगाया जाय तो उस की वसूली में बड़ी बाधाएँ हैं अतः इस पैसा फण्ड में यथाशक्ति एक साथही दान करना उचित है। मैं अपनी ओर से एक सावरन इस फण्ड में देता हूँ इस के जितने पैसे होते हों जमा कर लिए जावें।"

कलकत्ते के बाबू राधामोहन गोकुलजी ने भी इस प्रस्ताव का समर्थन किया और कहा—

"सभापति व सभ्य महोदयगण!

जो प्रस्ताव अभी आप के सम्मुख हमारे प्यारे मित्र बाबू पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने उपस्थित किया है उसके वाक्य इतने साफ व सरल हैं और प्रस्तावकर्ता का कथन इतना स्पष्ट और तर्कयुक्त हुआ है कि मुझे अधिक कहने की आवश्यकता नहीं।

राजा का मन्तव्य अधिकांश प्रजा पर स्पष्ट रूप से सीधा व वस्तुतः प्रकट होना ही राजा व प्रजा दोनों के लिये सर्वथा हितकर होता है और यह जभी हो सकता है कि अधिकांश प्रजा की ही बोली वो लिखावट में राजकीय कागज पत्र लिखे पढ़े जाँय। अधिकांश भारतनिवासी हिन्दीभाषी हैं यह तो सभापति महोदय ने अपनी प्रारम्भिक वक्तृता में ही इतिवृत और अंकों के साथ सिद्ध कर दिया है और संयुक्तप्रान्तीय प्रजा हिन्दी-भाषी हैं इसका सिद्ध करना मानो सूर्य्य को उँगली से बताना है। किन्तु इसमें दोष सरकार का यदि थोड़ा है पर हमारे ही भाइयों का दोष अधिक है। वह यह है कि अपनी निज सुविधा के लिये वकील मुहर्रिर, अर्जी नवीस, अमले व हाकिम सरकारी आज्ञा के होते हुए भी अपने प्रान्तीय केवल हिन्दी जानने वाले भाइयों के हानि लाभ की उपेक्षा करते हैं यह समस्त पढ़े लिखे वे लोग होते हैं जिनसे देश अपने हितसाधन की आशा रखता है अतः हम किसी तरह इन्हें इस दोष के निमित्त क्षम्य नहीं कह सकते। और जब देखते हैं कि हिन्दी न जानने वालों को भी सरकार स्थान प्रदान करती है तो प्रान्तीय सरकार भी सर्वथा इस दोष से बरी नहीं कही जासकती। गवर्नमेंट का धर्म्म है कि अपनी उन आज्ञाओं का पालन कठोरता के साथ ठीक ठीक अपने कर्म्मचारियों से करावे जिनके द्वारा अधिकांश प्रजा का सुख साधन होता है और कर्म्म-चारी वर्ग भी अपना कर्तव्य पालन करने से राजा प्रजा और ईश्वर के समीप दोषी न होंगे अतः मैं

विश्वास करता हूं जो आप लोग न्याय मर्य्यादा के साथ सरकार से लगातार अनरोध करते रहेंगे तो निस्सन्देह हमारी न्यायशीला सरकार नकल फैसला आदि तो अवश्य ही देगी पर शीघ्रही गवर्नमेंट गजट और कानूनों को भी हिन्दी में छापा करेगी, साथ ही चुंगी, प्रभृति मुहकमों में भी समस्त कागज हिन्दी लिपि में ही रखकर प्रजा की प्रेमभाजन होगी। इन्हीं थोड़े से शब्दों के साथ मैं इस महान उपयोगी प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ"

सभापति महाशय ने भी इस प्रस्ताव का समर्थन किया और कहा कि मुझे विश्वास है कि यह प्रस्ताव सब सज्जनों को प्रिय होगा। इस देश में जितने उपकारी महानुभाव हैं सब यही चाहेंगे कि देश की उन्नति में बाधा न पड़े। जो कार्य्य हो न्याययुक्त हो। यह स्पष्ट है कि मतादि के कारण द्वेष फैलता है। हमारा उद्देश्य अपने देशभाइयों की सेवा करना है। हम नागरी प्रचार का उद्योग करते हैं। इसका कुछ मुसल्मान भाइयों ने अदूरदर्शी लोगों के कहने से विरोध किया है। यह बात स्मरण रखनी चाहिये कि हम और मुसल्मान भाई दोनों को इसी देश में रहना है, दोनों इसके हितैषी हैं और दोनों को मिलकर प्रेम के साथ काम करना चाहिये। जो मनुष्य इसके विरुद्ध समझता है वह देश का प्रेमी नहीं है, वह भ्रान्ति में पड़ा है। दूसरी बात ध्यान देने की यह है कि फारसी अक्षर जानने वालों की अपेक्षा नागरी अक्षर जानने वाले कहीं अधिक हैं। जांच करने से यह जाना गया है कि एक उर्दू जानने वाले के साम्हने चार हिन्दी जानने वाले हैं। इस लिये देश में विद्याप्रचार और गरीब प्रजा के सुभीते के लिये यह आवश्यक है कि नागरी अक्षरों का अधिक प्रचार हो। हम यह नहीं चाहते कि उर्दू उठा दी जाय। हमारा यही कहना है कि उर्दू और हिन्दी दोनों का साथ साथ प्रचार हो; जिसको जिसमें सुभीता हो वह उसी अक्षर से काम ले। हमारे मुसलमान भाइयों को यह सोचना चाहिये कि जैसे हमारे हिन्दी प्रचार के उद्योग से उन्हे विरोध उत्पन्न हुआ है वैसे ही हम को भी उनके हमारे भाषा के अशुभ चाहने से दुःख हुआ है, हम तो उनकी भाषा और अक्षर के विरोधी नहीं हैं, हम तो उसकी उन्नति से प्रसन्न होते हैं, फिर वे हमारी भाषा और अक्षर के प्रचार के विरोधी क्यों हैं। यह एक प्रसिद्ध उपदेश है कि दूसरों के साथ वैसा ही बर्ताव करो जैसा तुम चाहते हो कि दूसरे तुम्हारे साथ बर्ताव करें। हम यह नहीं चाहते हैं कि उर्दू में डिग्री की नकल न मिले। हम केवल यही चाहते हैं कि जिन लोगों को उर्दू पढ़ने में कठिनता होती हो और जो चाहते हों कि हमें सब कागज हिन्दी में मिलें, उनकी इच्छा पूरी होने में बाधा नहीं पड़नी चाहिए। इसी लिये हमारी प्रार्थना है कि उर्दू और हिन्दी दोनों का प्रचार बना रहे। मुझे यह सब कहने की इसलिये आवश्यकता पड़ी है कि कोई यह न समझे कि हम विरोधभाव से कोई काम कर रहे हैं। हमारा उद्देश्य तो सब की सहायता और सब का हितचिंतन करना है।

इसके अनन्तर सभापति महाशय ने उपस्थित महाशयों से अत्यन्त चित्ताकर्षक भाषा में पैसा-फण्ड में सहायता देने की उत्तेजना दी। इस पर निम्न लिखित महाशयों ने अत्यन्त उदारतापूर्व्वक सहायता दी।

५००० पैसे श्रीयुत श्रीगोविन्दजी अग्रवाल–रायबरेली।
९६० ,, पण्डित श्यामबिहारी मिश्र, एम. ए., छत्रपुर।
६४० ,, बाबू सीताराम जी।
५१२ ,, श्रीयुत् बाबू नन्दकिशोर लाल, बेगूसराय मुंगेर।
३२० ,, श्रीयुत् पुत्तनलाल विद्यार्थी।
२६१ ,, पंडित रामसेवक पांडे मंत्री "सनातन धर्म सभा" बहराइच।
२०१ ,, बाबू गोपाललाल जी "इलाहाबाद बैंक" लखनऊ।

१५१ पैसे श्रीयुत नागेश्वर प्रसाद मंत्री "गणेश बिहार पुस्तकालय-बेगूसराय मुंगेर।
१२८ ,, वेदान्ती गोविन्दाचार्य जी, काशी।
१२८ ,, सहकारी सम्पादक "सम्राट" कालाकांकर।
१२८ ,, यंग बिहार पत्र, भागलपुर।
१२८ ,, कोतवाल साहब बनारस।
१२८ ,, पण्डित देवीदत्तजी उपदेशक टेम्परेंस संयुक्त प्रांत।
१२८ ,, पण्डित केवल रामभट्ट-मथुरिया टोला बिहार।
१२८ ,, पण्डित रामलोचन पांडे हिन्दी पण्डित ज़िला-स्कूल, भागलपुर।
१२८ ,, पण्डित पुरुषोत्तम भट्ट, अध्यक्ष "बिहार बन्धु प्रेस" बांकीपुर।
१०१ ,, "बनारस शान्ति सभा" खजुरी, काशी।
१०० ,, "स्वोन्नति सभा" काशी।
६४ ,, प्रोफेसर पाटणकर, काशी।
६४ ,, पण्डित विन्देश्वरी प्रसाद मालवीय बुकसेलर, मिर्ज़ापुर।
६४ ,, पण्डित बद्रीनाथजी वैद्य-मिर्जापुर।
६४ ,, पण्डित राजमणि मिश्र उपमंत्री "सनातन धर्म सभा" मगहर, बस्ती।
६४ ,, "सनातन धर्म सभा" मगहर, बस्ती।
२४ ,, पण्डित महादेव शरण पांडे बी० ए० बलुआ, गुटनी, बनारस।
३२९४ ,, फुटकर तथा गुप्तदान।

जोड़ १३१२८ पैसे।

निम्नलिखित महाशयों ने इस फंड में उनके नाम के आगे लिखे पैसों से सहायता देने की प्रतिज्ञा की।

६५००० पैसे-सेठ दामोदर दास राठी, ब्यावर।
१७०२४ ,, बाबू बटुक प्रसाद खत्री, काशी।
११००० ,, माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीय प्रयाग।
६४६४ पैसे बाबू गंगाप्रसाद गुप्त, काशी।
६४०० ,, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, काशी।
६४०० ,, सेठ जगन्नाथ झुंझनूवाले, कलकत्ता।
६४०० ,, राव गोपालदास, राव वैजनाथ दास, काशी।
५००० ,, महामहोपाध्याय पण्डित सुधाकर द्विवेदी।
५००० ,, पण्डित रुद्रदत्त, आगरा।
३२०० ,, बाबू बलदेवदास-भदैनी निवासी, काशी।
३२०० ,, बाबू दुर्गाप्रसाद, बी. ए., लकसा, काशी।
३२०० ,, पंडित विजयानन्द तिवाड़ी, भदैनी, काशी।
२५०१ ,, हचुवेट क्षत्रिय स्कूल-काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा।
२५०० ,, आर्य समाज, मिर्जापुर।
२०४८ ,, पण्डित कृष्णाराम बी. ए. काशी।
२०४८ ,, बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी. ए., काशी।
२०३२ ,, बाबू जुगल किशोर, काशी।
२००० ,, बाबू ज्वालाप्रसाद, डिप्टी कलेक्टर, मिर्जापुर।
१९१० ,, हिन्दू कालिज के विद्यार्थी-बाबू कालिदास माणिक, काशी।
१६०१ ,, आर्य समाज, खीरी।
१६०१ ,, श्री वैष्णव साधु सुधारिणी सभा, बड़ौदा।
१२५० ,, बाबू गणेशनारायण सोमाणी, जयपुर।
१२४८ ,, हरिश्चन्द्र स्कूल काशी के विद्यार्थी।
११११ ,, हिन्दी साहित्य सभा, कानपुर-पण्डित सूर्यप्रसाद मिश्र द्वारा।
११११ ,, श्रीप्रताप हिन्दू कालेज, श्रीनगर, काश्मीर।
११११ ,, सनातन धर्म सभा, जौनपुर-पण्डित सरयू प्रसाद मिश्र द्वारा।
१०२४ ,, श्रीभारतेन्दु नाटक मण्डली, काशी।
१०२१ ,, ठाकुर ललिताबक्ससिंह सीतापुर-पण्डित गंगाधर शास्त्री द्वारा।

१००२ पैसे प्रयाग आर्य समाज–पंडित राम जी लाल शर्म्मा द्वारा।

१००१ ,, नागरी नाट्यकलाप्रवर्तक मंडली, काशी–बाबू कृष्ण दास द्वारा।

१००१ ,, पंडित इन्द्रनारायण द्विवेदी, मंत्री, द्विजराज सभा, सरांय अकिल ज़िला इलाहाबाद।

१००१ ,, जैन पाठशाला, काशी।

१००१ ,, हिन्दू बोर्डिंग हाउस, प्रयाग— बाबू हीरालाल खन्ना द्वारा।

१००१ ,, धर्म समाज पाठशाला, अलीगढ़।

१००१ ,, पंडित मानिकलाल जोशी–बुलानाला–काशी।

१००१ ,, आर्य समाज, काशी–बाबू राधारमण गुप्त द्वारा।

१००१ ,, बाबू लक्ष्मीनारायण गुप्त–काशी।

१००१ ,, "अग्रवाल स्पोर्ट्स क्लब"–काशी।

१००१ ,, "एडवर्ड हिन्दी पुस्तकालय" हाथरस

१००१ ,, "क्वीन्स कालेज" के विद्यार्थीगण, काशी।

१००१ ,, पंडित रामनारायण मिश्र, बी० ए० काल–भैरव–काशी।

१००१ ,, श्री दिगम्बर जैन पाठशाला, काशी।

१००१ ,, श्रीयुत् सेठ गजानन रामकुमार खेमका नं० १३६ हेरिसन रोड कलकत्ता।

१००० ,, "मारवाड़ी प्रेस" नागपुर–अध्यक्ष सेठ रामनारायण राठी द्वारा।

१००० ,, राय साहब पंडित चन्द्रिका प्रसाद जी, अजमेर।

१००० ,, पंडित क्षेत्रपाल शर्मा "सुख संचारक कम्पनी", मथुरा।

१००० ,, बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन, प्रयाग।

१००० " बाबू पुरुषोत्तमदास, मिर्ज़ापुर।

१००० ,, पंडित महेन्द्रलाल गर्ग, मथुरा।

१००० ,, C. A. V. H. School, प्रयाग–बाबू मिश्रीलाल द्वारा।

१००० ,, पंडित बैजनाथ मिश्र बी. ए., आज़मगढ़।

१००० पैसे अग्रवाल समाज, काशी–बाबू वैद्यनाथ दास बी. ए. द्वारा।

१००० ,, बिहारी क्लब के विद्यार्थी बाबू अरुणजय सहाय वर्म्मा, ७–१ चैटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता।

९६० ,, बाबू सीताराम।

७४० ,, बाबू वैद्यनाथ गुप्त।

७०४ ,, क्षत्रिय मित्र।

७०४ ,, पंडित महादेव मालवीय, जौनपुर।

६४१ ,, पंडित दत्तात्रय काशीनाथ कर्मरकर–सेठ दामोदर दास राठी द्वारा।

६४० ,, आत्मानन्द जैन सभा, सिकंदराबाद (पंजाब)–बाबू जवाहिरलाल द्वारा।

६४० ,, ब्राह्मण सभा, कलकत्ता–मंत्री पंडित रामानन्द शर्म्मा द्वारा।

६४० ,, वीरभारत, कलकत्ता–पंडित रामानन्द शर्म्मा द्वारा।

६४० ,, पंडित सुदर्शन नारायण पांडे, पोस्ट–चौबेपुर जिला कानपुर।

५५५ ,, गोवर्धन सरांय छात्रसमिति, काशी–बाबू लक्ष्मीनारायण सिंह द्वारा।

५३२ ,, बाबू केशरीमल जी–कृष्णा मिल्स, ब्यावर

५०५ ,, बाबू जैरामदास जायसवाल, राजघाट, काशी।

५०१ ,, पंडित गणेशदीन त्रिपाठी, सरांय आकिल, ज़िला प्रयाग।

५०१ ,, सम्पादक इन्दु, सरांय गोवर्धन, काशी।

५०१ ,, पंडित केशवदेव शास्त्री, नवजीवन कार्यालय, काशी।

५०० ,, पंडित मुर्लीधर नागर, बुलानाला, काशी।

५०० ,, पंडित सत्यानन्द जोशी, प्रयाग।

५०० ,, महाशय धर्म्मपाल, लाहोर।

५०० ,, बाबू दामोदरदास जी खंडेलवाल, कलकत्ता।

४५१ ,, माणिक्य मण्डली, प्रियम्वदा आफिस, पुरानी गुदाम, गया।

३६५ पैसे अग्रवाल महाजनी पाठशाला काशी के विद्यार्थी।
३६५ ,, पंडित जगदेव उपाध्याय, बलिया।
३२१ ,, चुनार के सहायक।
३२१ ,, प्रधान भुँइहार ब्राह्मण सभा, काशी।
३२० ,, क्षत्रिय मित्र पत्र, काशी।
३२० ,, पण्डित घनश्याम शर्म्मा उपदेशक श्री संस्कृतोन्नति सभा इटावा, बेलनगंज, आगरा।
३२० ,, बाबू शिवशरणलाल।
३२० ,, बाबू मुरारीदास, ठठेरी बाज़ार, काशी।
३२० ,, बाबू विक्रमासिंह, ट्रेनिङ्ग स्कूल, पालामऊ।
३२० ,, दुर्गाकुण्ड सभा, काशी।
२०४ ,, महाराजा हाई स्कूल छत्रपुर के छात्रगण।
१५१ ,, पण्डित अम्बिकाप्रसाद कानूनगो, कोंढ ज़िला मिर्ज़ापुर।
१२८ ,, बाबू वैद्यनाथ दास, सुँड़िया, काशी।
१२८ ,, बाबू शुकदेव वर्म्मा, क्षत्रिय हाई स्कूल, काशी
१२८ ,, बाबू भगवानदास हालना, प्रयाग।
१२८ ,, कम्पोज़िटर वीरभारत, कलकत्ता।
१२८ ,, पण्डित सीताराम शर्म्मा पिलकिछा, जौनपुर
१०५ ,, पण्डित सिद्धेश्वर शर्म्मा, काशी।
१०४ ,, पण्डित महादेव शरण पांडे बी. ए., बलुआ गुटनी, सारन।
१०४ ,, पण्डित जानकीराम तिवारी, मेझियाँव, पालामऊ।
१०४ ,, बाबू गोपालराम, गहमर, ग़ाज़ीपुर।
१०४ ,, बाबू लक्ष्मीनारायण, औरङ्गाबाद, गया।
१०२ ,, नागरी प्रचारिणी सभा, गोरखपुर।
१०१ ,, बाबू राधामोहन गोकुलजी, कलकत्ता।
१०१ ,, बाबू राधारमण गुप्त, काशी।
१०१ ,, बाबू बटुकप्रसाद गुप्त, बूलानाला, काशी।
१०१ ,, बाबू गोपालदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।
१०१ ,, बाबू नन्दगोपाल, काशी।
१०१ ,, नागर यूनियन, काशी-पंडित कृष्णाराम मेहता द्वारा।

१०१ पैसे बाबू जगन्मोहन वर्म्मा कायस्थ पाठशाला, प्रयाग।
१०१ ,, बाबू अम्बिकाप्रसाद गुप्त।
१०१ ,, पं० दुर्गाशङ्कर, सिद्धमाता की गली, काशी।
१०१ ,, सब इन्सपेक्टर बलवन्तसिंह।
१०१ ,, टाउन स्कूल, शिवपुर, ज़िला बनारस।
१०१ ,, बाबू भगवान सहाय सब डिपुटी इन्सपेक्टर आफ स्कूलस, जौनपुर।
१०१ ,, सारस्वत खत्री हितकारिणी सभा, काशी
१०१ ,, व्यवस्थापक जैन पाठशाला भदैनी घाट, काशी।
१०१ ,, बाबू शिवप्रसाद रिखलाल साव, गौराबाद, शाहपुर।
१०१ ,, ओङ्कार प्रेस, प्रयाग।
१०० ,, बाबू लक्ष्मीचन्द गुप्त, काशी।
१०० ,, पण्डित रामप्रसाद मिश्र हिन्दी सहायक सभा, कानपुर।
१०० ,, पण्डित राधाकुमार, मान मन्दिर, काशी।
६४ ,, मुं० फतेहबहादुर खाँ डिपुटी इन्सपेक्टर आफ स्कूलस जौनपुर।
६४ ,, रीडिंग क्लब, दारानगर, काशी-बाबू सम्पूर्णानन्द द्वारा।
६४ ,, सारस्वत सभा, काशी।
६४ ,, काशी नागरीप्रचारिणी सभा के चपरासी
६४ ,, जी० सी० खत्री, बुलानाला, काशी।
६४ ,, लाला जगपतराय, वाटर वर्क्स, काशी।
६४ ,, पण्डित रामसुभग चौबे हेडमास्टर स्कूल, तारीघाट ग़ाज़ीपुर।
६४ ,, पं० ताराचन्द ओझा काशी वाले।
,, बाबू शिवकृष्ण, साक्षीविनायक, काशी।
६४ ,, बाबू राम सुदिष्ट राय ट्रेनिङ्ग स्कूल, पटना।
५२ ,, पण्डित प्रतापनारायण दूबे, जयनारायण स्कूल, काशी।
५० ,, बाबू भागवत प्रसाद, अन्नपूर्णागंज, काशी।
३२ ,, बाबू बाँकेबिहारी लाल, बुलानाला, काशी।
२४ ,, बाबू नन्दकिशोर राय, जिला स्कूल, आरा।

६ पैसे बाबू कवीन्द्रनारायण सिंह काशी।

२१२४१८ पैसे जोड़।

इस प्रकार पैसा-फण्ड में २२५५४६ पैसे अर्थात् ३५२४ ≈)॥ का चन्दा हुआ। जबकि पैसों की वर्षा चारों ओर से होरही थी—पण्डित श्यामविहारी मिश्र ने उपस्थित सज्जनों को यह सुखद समाचार सुनाया कि एक उदार महानुभाव ने जो अपना नाम प्रगट नहीं किया चाहते यह प्रतिज्ञा की है कि वे शीघ्रही काशी नागरी प्रचारिणी सभा का छः हज़ार का ऋण चुका देंगे। अन्त में यह चौथा प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

पांचवां प्रस्ताव।

इसके अनन्तर काशीनिवासी पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए० ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया।

"इस सम्मेलन को इस बात का दुःख है कि युनिवर्सिटीज़ कमिशन की सम्मति कालेज क्लासों में देशभाषाओं की पढ़ाई के पक्ष में होने पर भी अब तक इस ओर भारतवर्ष के विश्वविद्यालयों का पूरा पूरा ध्यान नहीं हुआ है। यह सम्मेलन इस बात पर दृढ़तापूर्वक सम्मति देता है कि कालेज क्लासों में देशभाषा की शिक्षा सब विद्यार्थियों के लिये बाध्य हो और विश्वविद्यालयों की प्रत्येक परीक्षा में इस विषय का ज्ञान आवश्यक माना जाय। यह सम्मेलन इस बात पर शोक प्रगट करता है कि कलकत्ते के प्रेसिडेंसी कालेज में हिन्दी के पढ़ाने का प्रबन्ध उठा दिया गया है और यह बंगाल की गवर्मेण्ट से प्रार्थना करता है कि उसका फिर शीघ्र ही प्रबन्ध किया जाय। यह सम्मेलन यह भी आशा करता है कि युक्त प्रान्त में रुड़की के एंजीनियरिङ्ग कालेज और कानपुर के एग्रिकल्चरल कालेज में परीक्षा पास करने के लिये जिस प्रकार उर्दू आवश्यकीय कर दी गई है उसी प्रकार हिन्दी को भी स्थान दिया जाय।"

इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए पण्डित रामनारायण मिश्र ने निम्न लिखित व्याख्यान दिया।

"सभापति महाशय और सज्जनो,

अङ्गरेज़ी गवर्नमेण्ट की राजनीति का सबसे कल्याणकारी अङ्ग शिक्षा का प्रचार है। अङ्गरेज़ी राज्य से पहिले पाठशालाओं और मकतबों द्वारा शिक्षा का प्रचार होता था, पर सर्वसाधारण में शिक्षा सम्बन्धी जागृति यह इसी राज्य का गौरव है। जब यह राज्य इस देश में स्थापित हुआ उस समय इस बात पर बहुत विवाद हुआ कि इस देश में प्राचीन रीति के अनुसार संस्कृत और अर्बी में ही शिक्षा दीजाय अथवा अङ्गरेज़ी भाषा में। जिस समय इस बात पर विचार हो रहा था लार्ड मेकाले ने एक बड़ा प्रभावशाली लेख लिखा था (Macaulays, Minute 1835)। अङ्गरेज़ी में शिक्षा देने के पक्ष में लिखते हुए आपने यह दिखलाया था कि भारत की देशी भाषाएं इस योग्य नहीं हैं कि इनके द्वारा उच्च शिक्षा दी जा सके। इस कारण यदि अङ्गरेज़ी भाषा के द्वारा शिक्षा देना स्थिर किया जाय तो अनेक सुशिक्षित भारतवासी ऐसे उत्पन्न हो जायँगे जो देशी भाषाओं में वैज्ञानिक ग्रन्थ लिख सकें और सर्वसाधारण में शिक्षा के प्रचार करने में सहायता दे सकें। यह बात सन् १८३५ की है। मैं इस सम्बन्ध में लार्ड मेकाले के शब्दों को ही जिनका तात्पर्य मैंने ऊपर दिया है आपको सुनादेता हूं।

"All parties seem to be agreed on one point, that the dialects commonly spoken among the natives of this part of India contain neither literary nor scientific information, and are, moreover, so poor and rude that, until they are enriched from some other quarter, it will not be easy to translate any valuable work into them. It seems

to be admitted on all sides that the intellectual improvement of those classes of the people who have the means of pursuing higher studies can at present be effected only by means of some language not vernacular amongst them.'

"I feel that it is impossible for us, with our limited means, to attempt to educate the body of the people. We must at present do our best to form a class who may be interpretors between us and the millions which we govern; a class of persons, Indian in blood and colour, but English in taste, in opinions, in morals and in intellect. *To that class we may leave it to refine the vernacular dialects of the country,* to enrich those dialects with terms of science borrowed from the western nomenclature, and to render them by degrees fit vehicles for conveying knowledge to the great mass of the population."

इसके पीछे ईस्ट इंडिया कम्पनी के संचालकों ने सन १८५४ ई० में एक आज्ञापत्र इस देश में शिक्षा के प्रचार के सम्बन्ध में भारत गवर्नमेण्ट के पास भेजा। यह आज्ञापत्र बड़े महत्व का है। हमारे देश में प्रारम्भिक शिक्षा का प्रचार और विश्वविद्यालयों का स्थापित होना इसी आज्ञापत्र का फल है। इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जो विश्वविद्यालय स्थापित हों उनमें अङ्गरेज़ी इत्यादि अन्य विषयों के अतिरिक्त देशी भाषाओं के लिये भी अध्यापक नियत किए जांय। इस आज्ञापत्र में यह भी लिखा है कि जो अध्यापक संस्कृत, फारसी और अरबी पढ़ावें वे इस बात का ध्यान रक्खें कि इन प्राचीन भाषाओं के व्याकरणों का प्रभाव देशी भाषाओं पर कहां तक पड़ा है जिसमें देशी भाषाएं उन्नत अवस्था को प्राप्त हों। इस आज्ञापत्र में यह भी सलाह दी गई है कि कालेजों के जो विद्यार्थी देशी भाषाओं में विद्वत्ता प्राप्त करें उनको छात्रवृति प्रदान की जायं। कम्पनी के संचालकों के इन आदेशों के अनुसार सन १८५७ में कलकत्ता, मद्रास और बम्बई में विश्वविद्यालय स्थापित किए गए। परन्तु पंजाब और इलाहाबाद के विश्वविद्यालय बहुत पीछे स्थापित हुए अर्थात् सन १८८२ और १८८७ ई० में। इन विश्वविद्यालयों के द्वारा इस देश में अङ्गरेज़ी विद्या का अद्भुत प्रचार हुआ। बी. ए., एम. ए. और अन्यान्य डिग्रियां स्थापित की गई और हमारे देश के अनेक विद्वानों ने अङ्गरेज़ी पठन पाठन में इतनी उन्नति की कि जिसको देखकर अङ्गरेज़ भी चकित हुए। परन्तु देशी भाषाओं की शिक्षा और उन्नति पर उचित ध्यान किसी विश्वविद्यालय ने भी नहीं दिया। यह सत्य है कि बङ्गला, गुजराती और मरहटी भाषाओं की उन्नति में उस समय भी युनिवर्सिटी के शिक्षाप्राप्त पुरुषों ने बहुत बड़ा हिस्सा लिया पर यह इन पुरुषों की अपनी चेष्टा का फल था न कि युनिवर्सिटी की शिक्षा प्रणाली का। इसका प्रमाण स्वर्गवासी श्रीरमेशचन्द्र दत्त के जीवन चरित्र से मिलता है। ये महानुभाव स्कूल में पढ़ने के समय ही से अङ्गरेज़ी भाषा में बड़े चतुर थे और अपनी शिक्षा समाप्त करने के बहुत दिनों पीछे तक इनको कभी ध्यान भी नहीं हुआ कि अपनी भाषा का कुछ उपकार करें। यदि ये श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय से न मिलते तो बङ्गला साहित्य उन अनेक अपूर्व ग्रन्थों से वंचित रहजाता जो इन्होंने लिखे। तात्पर्य यह है कि बंकिम और रमेश को अपनी भाषा में लिखने की प्रेरणा इन विश्वविद्यालयों से नहीं मिली यद्यपि अङ्गरेज़ी शिक्षा की ज्योति का प्रभाव इनके ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से पाया जाता है।

अस्तु, अनेक वर्षों तक यही अवस्था रही सन १८९९ ई० में लार्ड कर्जन की गवर्न्मेण्ट ने विश्व-

विद्यालयों के सुधार के लिये एक कमीशन बैठाई। इस कमीशन के सामने प्रायः जितने पुरुष उपस्थित हुए सबने मुक्तकंठ से इस बात को स्वीकार किया कि युनिवर्सिटियों में देशी भाषाओं पर पूरा ध्यान नहीं दिया जाता और अनेक बी. ए. एम, ए. उपाधिधारी अपनी मातृभाषा के साहित्य से अनभिज्ञ रह जाते हैं। इस कमीशन ने गवर्नमेन्ट को सलाह दी कि (१) एम. ए. परीक्षा में देशी भाषाएं भी शामिल की जांय, इन भाषाओं की पढ़ाई इस प्रकार से हो कि जिस से विद्यार्थी इन भाषाओं में पूरे विद्वान हों और विश्वविद्यालय का धन ऐसे अध्यापकों के नियत करने में लगाया जाय, जो इन भाषाओं को भली भांति पढ़ा सके। (२) बी. ए. में भी देशी भाषाओं में निबन्ध लिखवाए जांय (३) इस सिद्धान्त पर ध्यान रखा जाय कि अङ्गरेज़ी भाषा से जो अनुवाद परीक्षापत्रों में किया जाय वह देशी भाषा के व्याकरण की रीति से शुद्ध रहे और (४) साहित्य और विज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थों के भाषा में लिखने के लिये पारितोषिक दिए जायं। युनिवार्सिटीज़ कमिशन का उद्योग इस सम्बन्ध में बिलकुल निष्फल नहीं हुआ। मद्रास युनिवर्सिटी ने तामिल, तेलगू, कनारी और मलयालम में एम. ए. परीक्षा देने की आज्ञा दी। बी. ए. में भी अन्य विषयों के साथ ऊपर लिखी भाषाओं के अतिरिक्त उर्दू को भी जगह मिली। जो विद्यार्थी इन भाषाओं को पढ़ते हैं उनको प्रत्येक भाषा के साहित्य के इतिहास, भाषातत्व, शास्त्र के सिद्धान्तों (Principles of Comparative Philology) का जानना भी आवश्यक है। बम्बई के विश्वविद्यालय में विद्यार्थी मराठी, गुजराती और कनारी में एम० ए० हो सकते हैं पर उन्हें अङ्गरेज़ी साहित्य भी साथ ही पढ़ना पड़ता है। कलकत्ता युनिवर्सिटी में अङ्गरेज़ी में जो एम० ए० परीक्षा देते हैं उन्हें एक निबन्ध किसी देशी भाषा में भी लिखना पड़ता है। बस इन तीन विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त अन्य किसी विश्वविद्यालय ने कुछ नहीं किया। इन तीनों ने भी जितना चाहिए उतना देशी भाषाओं के उन्नति के लिए नहीं किया। साहित्य और वैज्ञानिक ग्रन्थों के लिए पारितोषिक ये तीन विश्वविद्यालय भी न दे सके। हिन्दी के अभाग्य से जिन तीन विश्वविद्यालयों ने कुछ किया भी उनमें हिन्दीभाषा-भाषियों की संख्या अधिक नहीं है। एक तो कलकत्ता विश्वविद्यालय ने मद्रास और बम्बई की नाईं दिल खोलकर देशी भाषाओं को स्थान तक नहीं दिया, तिसपर जो दो एक कालेजों में हिन्दी के अध्यापक नियत किए थे वे भी हटा दिए गए। बिहार में सब हिन्दीभाषाभाषी हैं। इसका विस्तार भी इतना बड़ा है कि यह एक स्वतन्त्र प्रान्त बन सकता है। इसके विद्यार्थी कलकत्ता युनिवर्सिटी की परिक्षाएं देते हैं। फिर कोई कारण नहीं है कि हिन्दी-साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिये कलकत्ता युनिवर्सिटी की ओर से प्रबन्ध न हो। पर हम को खेद विशेष कर इलाहाबाद और पंजाब के विश्वविद्यालयों पर है। मद्रास के मुसलमान विद्यार्थी यद्यपि उनकी मातृभाषा उर्दू नहीं है आतिश, ग़ालिब और नासिख़ के ग्रन्थ पढ़कर बी. ए. की परीक्षा पास कर सकते हैं पर जिन प्रान्तों में वह भाषा जिन में इन लेखकों ने अपने अमूल्य ग्रन्थ लिखे हैं मुसलमानों में बोली जाती है उस प्रान्त के लोग उसमें परीक्षा देने से वंचित किए जायं इससे बढ़कर खेद की बात और क्या हो सकती है। आश्चर्य का विषय है कि इन प्रान्तों के मुसलमान सज्जनों का ध्यान इस ओर नहीं गया।

हिन्दी का तो कुछ पूछना ही नहीं। कहा जाता है कि हिन्दी-साहित्य में ऐसी पुस्तकें ही नहीं मिलतीं कि जो युनिवर्सिटी परीक्षाओं के लिये पाठ्य पुस्तकें हो सकें। बम्बई विश्वविद्यालय में स्वर्गवासी रानडे ने जब गुजराती और मरहटी को युनिवर्सिटी में पढ़ाए जाने का आन्दोलन किया था उनको भी यही जवाब दिया गया था। इस पर रानडे महोदय ने सैकड़ों ऐसी मराठी पुस्तकों की सूची दी कि जो अब तक की

परीक्षा में पाठ्य पुस्तकें नियत की जा सकती थीं। मुझे आशा है कि महामान्य महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी अपने व्याख्यान में हिन्दी-साहित्य पर जो यह आक्षेप किया जाता है कि इस में पढ़ाने के योग्य उपयुक्त पुस्तकें नहीं हैं इसका उत्तर सप्रमाण देंगे। सूरदास, तुलसीदास, केशव, बिहारी के ग्रन्थ बहुत अच्छी तरह से एम. ए. तक की परीक्षा में रक्खे जा सकते हैं। क्या इसमें कोई सन्देह कर सकता है कि हिन्दीभाषा-भाषी विद्यार्थियों के लिये जो अङ्गरेज़ी में एम. ए. की परीक्षा देते हैं Chaucer (चासर) की अङ्गरेज़ी जानने के बदले चन्द की हिन्दी जानना अधिक लाभदायक है। जिन्हें अङ्गरेज़ी स्कूलों का कुछ भी अनुभव है वे जानते हैं कि हमारे बालक एक पत्र भी हिन्दी में शुद्ध नहीं लिख सकते। मैं ने स्वयं कई क्लास के क्लास देखे हैं कि जिनका एक भी विद्यार्थी शुद्ध हिन्दी नहीं लिख सकता। क्या कभी आप आशा कर सकते हैं कि ये विद्यार्थी और इनकी संख्या बहुत है, कभी मातृ-भाषा की सेवा करने में समर्थ होंगे? इसलिये हमारा धर्म है कि हम विश्व-विद्यालयों का ध्यान इस ओर दिलाएं और उनको बतलाएं कि जब से ये जारी हुए हैं उस समय से लेकर सन १८९९ की कमीशन के समय तक हम लोगों को भरोसा दिलाया गया है कि देशी-भाषाओं में भी उच्च शिक्षा दी जायगी परन्तु इस ओर पूरा ध्यान नहीं दिया गया। मेरी सम्मतिमें जब से B.A. पढ़ाई जाय उस समय से बी.ए. तक हिन्दी या उर्दू की शिक्षा बाध्य होनी चाहिए। एम. ए. में भी हिन्दी-साहित्य और भाषा में परीक्षा होनी चाहिए और इस विषय का पढ़ना विद्यार्थियों की इच्छा पर छोड़ना चाहिए जैसा कि मद्रास में तामिल इत्यादि हैं। हिन्दी और उर्दू में अपर प्राइमरी से लेकर M. A. तक पत्र और निबन्ध लिखवाए जायं और अङ्गरेज़ी पाठ्य पुस्तकों में से जो प्रश्न भावार्थ लिखने के लिये परीक्षा में पूछे जाते हैं उनमें से कुछ प्रश्नों का उत्तर हिन्दी में भी लिखने की आज्ञा दी जाय।

इस सम्मेलन को इस विषय की ओर विश्व-विद्यालयों का ध्यान दिलाना चाहिए। मेरा विश्वास है कि भाषा-साहित्य-भंडार को भरने के लिये इससे अच्छा दूसरा उपाय नहीं है कि हमारे अङ्गरेज़ी पढ़े लिखे यदि इस ओर ध्यान दें। मेरा विश्वास है कि हिन्दीभाषा-भाषी अङ्गरेज़ी पढ़े लोगों में अनेक गुप्त रमेशचन्द्र विद्यमान हैं कि जिन में केवल अपने कर्तव्य पालन की योग्यता लाने की आवश्यकता है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि आप इस प्रस्ताव को पास करेंगे कि इस सम्मेलन को इस बात का दुःख है कि युनिवर्सिटीज़ कमीशन की सम्मति कालेज क्लासों में देश भाषाओं की पढ़ाई के पक्ष में होने पर भी अब तक इस ओर भारतवर्ष के विश्वविद्यालयों का पूरा पूरा ध्यान नहीं हुआ है। यह सम्मेलन इस बात पर दृढ़तापूर्वक सम्मति देता है कि कालेज क्लासों में देशभाषा की शिक्षा सब विद्यार्थियों के लिए बाध्य हो और विश्वविद्यालय की प्रत्येक परिक्षा में इस विषय का ज्ञान आवश्यक माना जाय। यह सम्मेलन इस बात पर शोक प्रगट करता है कि कलकत्ते के प्रेसिडेन्सी कालेज में हिन्दी के पढ़ाने का प्रबन्ध उठा दिया गया है और वह बङ्गाल की गवर्नमेन्ट से प्रार्थना करता है कि उनका फिर शीघ्र ही प्रबन्ध किया जाय। यह सम्मेलन यह भी आशा करता है कि युक्त प्रान्त में रुड़की के इंजिनियारिङ्ग कालेज और कानपुर के एग्रिकलचरल कालेज में परीक्षा पास करने के लिए जिस प्रकार उर्दू आवश्यकीय कर दी गई है उसी प्रकार हिन्दी को भी स्थान दिया जाय।"

इस प्रस्ताव का अनुमोदन काशी निवासी महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी ने किया और समर्थन कलकत्ते के बा० राजेन्द्र प्रसाद एम० ए० तथा सभापति श्रीयुक्त माननीय पं० मदनमोहन मालवीय बी० ए० एल० एल० बी० ने किया और सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

छठाँ प्रस्ताव।

बाबू श्यामसुन्दर दास बी० ए० ने छठाँ प्रस्ताव उपस्थित किया जो इस प्रकार था —

"भिन्न भिन्न प्रान्तों के स्कूलों और पाठशालाओं में हिन्दी पढ़ाने के लिये जो पुस्तकें नियत की जाती हैं उनका चुनाव अधिक सन्तोषजनक बनाने के लिये यह सम्मेलन सम्मति देता है कि उन प्रान्तों की टेक्स्ट बुक कमेटियों में जहां हिन्दी की पढ़ाई होती है हिन्दी की प्रधान सभाओं को अपना एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाय। यह सम्मेलन प्रार्थना करता है कि काशी की नागरीप्रचारिणी सभा को संयुक्त प्रदेश की टेक्स्ट बुक कमेटी के लिये अपना एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाय।

इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए बाबू श्यामसुन्दर दास ने निम्नलिखित आशय की वक्तृता दी—
सभापति महाशय और सज्जनगण,

जिस प्रस्ताव को आपलोगों के सन्मुख उपस्थित करने का भार मुझे सौंपा गया है वह यद्यपि स्थूल दृष्टि से देखा जाय तो अत्यन्त साधारण विदित होगा परन्तु यदि उस पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाय तो वह बड़े महत्व का जान पड़ेगा, यहां तक कि हमारी हिन्दी की भविष्यत सफलता और उन्नति का बहुत कुछ अंश उसके अनुसार कार्य होने पर निर्भर है। जो आज बालक हैं, विद्योपार्जन कर रहे हैं, वेही आगे चल कर हिन्दी के लेखक होंगे, उन्हीं की कार्यप्रणाली, उन्हीं के उद्योग, उन्हीं की विद्वत्ता पर हिन्दी का भविष्यत निर्भर रहेगा। अतएव हमारा यह परम कर्तव्य है कि हम इस बात पर पूर्ण विचार करें कि जिस प्रकार की उन्हें शिक्षा दी जा रही है, जैसी पुस्तकें उन्हें पढ़ाई जा रही हैं, वे कहां तक उपयुक्त हैं।

शिक्षा का प्रबन्ध करना विशेष कर हमारी गवर्न्मेंट के हाथ में है। जो दो चार स्कूल या कालेज गवर्न्मेंट की सहायता नहीं लेते उन में भी प्रायः गवर्न्मेंट के नियमों का अनुकरण किया जाता है। ऐसी अवस्था में हमारा परम कर्तव्य गवर्न्मेंट की प्रणाली पर विचार करना और अपनी सम्मति के अनुसार उसका सुधार करना है। शिक्षाप्रणाली के सम्बन्ध में कुछ कहने का प्रयोजन इस प्रस्ताव का नहीं है। अतएव उस विषय में कुछ निवेदन करके आप लोगों को कष्ट नहीं दूंगा, परन्तु हिन्दी पाठ्यपुस्तकों के विषय में अपने विचार प्रगट करके इस प्रस्ताव को उपस्थित करने का मैं साहस करता हूं। हिन्दी की विशेष पढ़ाई मध्य प्रदेश, विहार, संयुक्त प्रदेश और कुछ अंश में पंजाब में होती है। मद्रास और बम्बई प्रांतों में तो इसका नाम भी कहीं नहीं है। राजपुताने और मध्य भारत का सम्बन्ध संयुक्त प्रदेश के शिक्षा विभाग के साथ है। रहा बंगाल, सो उसमें अन्यप्रांतवासियों में हिन्दी का कुछ प्रचार है। इसलिये हमको मध्य प्रदेश, बिहार, संयुक्त प्रांत और पंजाब की हिन्दी पाठ्य पुस्तकों पर विचार करना चाहिये।

प्रारम्भ से लेकर कुछ काल पूर्व तक पाठ्य पुस्तकों के नियत करने का भार शिक्षा विभाग के अधिकारी पर रहता था। इस अवस्था में हिन्दी को विशेष हानि पहुंचती थी, इसका कारण यह था कि इस विभाग के अधिकारी अंग्रेज जाति के होते हैं जो हिन्दी से उतना परिचय नहीं रख सकते जितना कि उस भाषाभाषी विद्वानों को होना सम्भव है। इसका परिणाम यह होता था कि वे अधिकारी इस कार्य में अपने अधीनस्थ अफसरों से सम्मति लेते थे। वे प्रायः अन्य महाशयों की बनाई हुई पुस्तकों को अनुपयुक्त बता कर अच्छी पुस्तकें बनाने का भार अत्यन्त उदारतापूर्वक अपने ऊपर

ले लेते थे जिस से शिक्षा विभाग उनका कृतज्ञ होता था और लेखक महाशय को विशेष धनलाभ होता था। इस अवस्था में कैसी पुस्तकें चुनी जा सकती हैं इसे आप लोग स्वयं समझ सकते हैं। मेरे कहने का यह तात्पर्य नहीं है कि जितनी पुस्तकें इस काल में बनी वे सब रद्दी थीं, इन में से कई पुस्तकें निस्सन्देह उत्तम थीं परन्तु उनका अधिकांश अवश्य निन्दनीय होता था। धीरे धीरे इस प्रणाली की पोल खुलने लगी और गवर्न्मेंट का ध्यान इस ओर गया। अन्त में यह निश्चय किया गया कि इन पाठ्य पुस्तकों को चुन कर उनके नियत किये जाने की सिफारिश करने का भार एक कमेटी को दिया जाय जिसके सभासद गवर्न्मेंट स्वयं नियत करे। परन्तु दुःख के साथ यह कहना पड़ता है कि इनके सभासदों में हिन्दी के गण्यमान्य विद्वानों को स्थान मिलने में सदा कठिनता उपस्थित रहती थी। अस्तु किसी प्रकार भिन्न भिन्न प्रांतों में ये कमेटियां नियत की गईं। इन बड़ी कमेटियों ने भिन्न भिन्न विषयों की अनेक प्रकार की पुस्तकों पर विचार करने का भार छोटी कमेटियों को सौंपा। बस अब क्या था। प्रकाशकों की बन पड़ी। वे छोटी कमेटियों के सभासदों से जा मिले और उन्हीं से पुस्तकें बनवाने लगे। अनेक अवस्थाओं में पुस्तकें और लोगों ने बनाई और उन्हें दुहरा कर या इधर उधर देख भाल कर ग्रन्थकर्ता सभासदों में से कोई बन गए। किसी किसी अवस्था में उन्हों ने उन्हें पसन्द करकेही अपना काम किया। आपलोगों को यह जान कर आश्चर्य होगा कि कहीं कहीं तो हिन्दी के परम पूजनीय, श्रद्धास्पद, शिरोमणि विद्वानों के नाम से पुस्तकें छापी गईं जिनका उन बिचारे विद्वानों को अपने जीवन काल में कभी स्वप्न भी न आया था। इस सम्बन्ध में हिन्दी के दो एक सेवकों ने ऐसा गर्हित कार्य किया है कि जिसके विषय में चुप रहना ही उचित जान पड़ता है। निदान यह बात यहां तक बढ़ी कि हिन्दी के मृत विद्वानों की बनाई हुई उर्दू पुस्तकें तक प्रकाशित हुईं। परन्तु इन सब बातों के रहते हुए भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि कमेटी के पूर्व की अवस्था से कमेटी की स्थिति की अवस्था संतोषजनक थी। लार्ड कर्जन ने जब विश्वविद्यालयों के सुधार की ओर ध्यान दिया तो साथही ये कमेटियां भी उनके बिचारक्षेत्र के अन्तर्गत आईं। इन में भी सुधार किया गया। सभासदों की संख्या कम की गई और नियमों में भी कुछ परिवर्तन किए गए। इसी समय यह भी पाया गया कि भाषा की पाठ्य पुस्तकें ठीक नहीं हैं, उन में परिवर्तन होना चाहिये, वे नवीन शिक्षा-पद्धति के अनुसार बनाई जायं। निश्चय होतेही पुस्तक छापनेवाले दौड़ पड़े। विलायत की बड़ी बड़ी कम्पनियों ने भी पुस्तकें बनवाईं। आपको यह जान कर आश्चर्य होगा कि पुस्तकें सब अंग्रेजी में बनीं। अन्त में जब वे स्वीकृत हो चुकीं तो उनका अनुवाद हिन्दी या उर्दू में किया गया और ये अनुवादित ग्रंथ हमारे बालकों को पढ़ने के लिये दिए गए। आप लोगों से इस बात के कहने की आवश्यकता नहीं है कि अनुवाद अनुवादही होगा, उसका रंग ढंग, बनावट मुहाविरा सब असल भाषा का बहुत कुछ रहेगा। ऐसी अवस्था में भाषा के पढ़ने से जो लाभ उसके मर्मों को जानने से हो सकता है उस से हमारे बालक बंचित रहने लगे। बिहार प्रांत के लिये मैकमिलन कम्पनी की बनवाई हुई पुस्तकें स्वीकार हुई थीं। उनका हिन्दी अनुवाद देखने ही योग्य था। मुझे एक समय इन पुस्तकों के पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ था। मैं दृढ़तापूर्वक कह सकता हूं कि इन पुस्तकों ने हिन्दी की जान पर छुरी चलाई थी। ऐसा जान पड़ता है कि इनका अनुवाद किसी बंगाली महाशय ने जो हिन्दी से बहुत साधारण परिचय रखते होंगे किया था और जो दृश्य हिन्दी से अनभिज्ञ बंगाली महाशय की हिन्दी बात चीत सुनने का आप लोगों को कभी दृष्टिगोचर हुआ होगा वह इन पुस्तकों के पढ़ने से लोगों को घर बैठे देख पड़ता था। हिन्दी व्या-

करण का तो इन पुस्तकों में गलाही घोट दिया गया था। अस्तु अब इस समय की अवस्था पर विचार कीजिये।

हमारे संयुक्त प्रांत में कुछ काल पहिले लाटसाहब को यह धुन समाई कि हिन्दी उर्दू दो भाषाओं का वर्तमान रहना ठीक नहीं है। एक ही भाषा हो चाहे अक्षर दो रहें तो कोई हानि नहीं। बस फिर क्या था हां में हां मिलाने वाले और जी हुजूर करने वालों की कमी न थी। चट पट पुस्तकें तय्यार हो गईं और स्कूल में पढ़ाई जाने लगीं। हमारे देशवासी विद्वानों की सम्मति है कि एक भाषा करने के लिये एक लिपि का पहिले होना नितांत आवश्यक है पर लाटसाहब ने छत से मकान बनाने की नीति का अवलम्बन किया है। गत मनुष्यगणना की संयुक्त प्रदेश की रिपोर्ट में काशीनागरी प्रचारिणी सभा का उल्लेख करते हुए उसके वैज्ञानिक कोश बनवाने पर उपहासस्वरूप मनुष्यगणना के अधीश्वर ने इस कार्य को घोड़े के आगे गाड़ी जोतने के समान बताया था। कदाचित लाटसाहब के इस उद्देश्य पर उनकी सम्मति ली जाती और वह मनुष्यगणना वाली सम्मति से मिलाई जाती तो निस्संदेह कौतूहलजनक होती। अस्तु राष्ट्र भाषा की उपयोगिता इस उलटी रीति से मानने के लिये भी राष्ट्र भाषा के पक्षपाती उक्त लाटसाहब के अनुगृहीत होंगे पर सिद्धान्त का कार्यरूप जैसा था फल भी वैसा ही हुआ। यह उद्योग दोनों भाषाओं के लिये अत्यन्त हानिकारक था। पहिले तो ये पुस्तकें अंग्रेजी पुस्तकों से अनुवादित हुई थीं फिर ऐसे शब्दों की खोज में जो दोनों भाषाओं में साधारणतः प्रचलित हों बालकों के शब्द-भंडार की सीमा बहुत ही संकुचित हो गई। परिणाम यह हुआ कि परीक्षकों को परीक्षा लेना कठिन हो गया। उन्हें पुस्तकों में कोई बात ही ऐसी न मिलने लगी जिसे लड़का भली भांति न जानता हो। चलो सोचा गया था कि दो की जगह एक भाषा हो जायगी परिणाम यह हुआ कि बालकों के सीखने योग्य कोई बात ही पुस्तक में न रह गई। यदि ये पुस्तकें बहुत दिनों तक प्रचलित रहतीं तो काल पाकर हमारे बालक सर्वोच्च शिक्षा पाकर भी सूर तुलसी और बिहारी को लैटिन और ग्रीक सा कठिन समझ कर पुस्तकालयों की शोभा बढ़ाने के लिये उन्हें छोड़ बैठते। संतोष और आनन्द की बात यही है कि गवर्न्मेंट ने बहुत शीघ्र इस दुरवस्था का परिज्ञान प्राप्त कर लिया और उसके सुधार का उपाय किया। भला यह भी कभी सम्भव था कि भाषा भी गवर्न्मेंट की आज्ञा से बन जाय। लार्ड कर्जन हमें स्टैंडर्ड टाइम दे गए। लाट लाटूश ने हमें स्टैंडर्ड भाषा देने का उद्योग किया। यदि वे स्टैंडर्ड लिपि देने का उद्योग करते तो हम उनके अवश्य उपकृत होते। अस्तु हमें आशा है कि अब जो पुस्तकें बनने वाली हैं वे संतोषजनक होंगी और हमें उनके विपक्ष में कुछ कहने का अवसर न मिलेगा।

महाशयो, इस स्थान पर मैं आपको एक समाचार सुनाये बिना नहीं रह सकता। अभी थोड़े दिनों की बात है कि हमारे संयुक्त प्रदेश के एक उच्च अधिकारी के मन में यह बात समाई कि हिन्दी में ऐसी पुस्तकें लिखी जायं जो अत्यन्त सरल भाषा में हों। इस बिचार में कोई बात आपत्ति की न थी परन्तु जब आप यह जानेंगे कि वह सरल भाषा कैसी है तो आप इस का मर्म समझेंगे। जो लोग पढ़े लिखे हैं बनावटी भाषा बोलते और लिखते हैं। अतएव सरल भाषा शुद्ध भाषा वही है जो गांवों में बोली जाती है जहां विद्या की प्रखर किरणों ने सभ्यता का रूप बदल कर भाषा के शुद्ध प्राकृतिक रूप में परिवर्तन नहीं कर दिया है। इसलिये सरल भाषा का अर्थ हुआ हमलोगों के अनुसार गँवारी भाषा का, भद्दीभाषा का! आश्चर्य यही है कि इन महाशय ने इन पुस्तकों के लिखने में यह भी प्रस्ताव नहीं किया कि इस सरल भाषा की पुस्तक में वैसे ही "सरल व्याकरण" के नियमों का भी पालन किया जाय। अस्तु एक पुस्तक भी बन गई और उसमें ग्रन्थकर्ता महाशय ने इस सरल व्याकरण के अभाव

की भी पूर्ति करके हिन्दी की शोभा बढ़ाई। इस पर दो चार अंग्रेज विद्वानों ने उस पुस्तक की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। यद्यपि हिन्दी के विद्वानों ने उसका घोर विरोध किया तथा कई समाचार पत्रों ने इस पुस्तक की बड़ी बड़ी समालोचनाएं भी छापीं पर सुनता कौन है ? पुस्तक पढ़ाने के लिये नियत हो गई और वह भी एक ऐसी उत्तम पुस्तक के स्थान पर जो हिन्दी के एक परम पूजनीय विद्वान की लिखी हुई थी। अब हमारे बालक भद्दी गँवारी, भोजपुरी हिन्दी को पढ़ कर हमारी भाषा का उपकार और अपनी विद्वत्ता की उन्नति करेंगे। महाशय मैंने पुस्तक की भाषा के विषय में ही इतना कहा है। उसकी अन्य बातों पर अपने विचार प्रगट नहीं किए हैं और न उसकी आवश्यकता ही है। यदि आप एक गँवारू गृहस्थी का दृश्य घर बैठे देखा चाहते हैं तो आपके लिये इससे बढ़ कर दूसरी पुस्तक नहीं हो सकती। ऐसे ऐसे उदाहरणों से तो हमें कभी कभी नैराश्य आ घेरता है और गवर्न्मेंट के कार्यों पर दुःख होता है।

बिहार की दशा भी शोचनीय है। वहां तो यह भी प्रस्ताव हुआ है कि प्रत्येक ज़िले में उसी ज़िले की भाषा में लिखी हुई पुस्तकें पढ़ाई जायें, पर आनन्द का विषय है कि अभी तक यह प्रस्ताव कार्यरूप में परिणत नहीं हुआ है। मध्य प्रदेश की पुस्तकें भी वैसी नहीं हैं जैसी होनी चाहिएँ। इस प्रांत में विद्या का अभी विशेष प्रचार नहीं हुआ है और वहां की टेक्स्टबुक कमेटी की अवस्था अभी तक शोचनीय है। पंजाब में हिन्दी की जो अवस्था है उसे न जानना ही अच्छा है। वहां की हिन्दी पाठ्य पुस्तकों को देख कर रोए बिना नहीं रहा जाता। हिन्दी की ऐसी दुर्गति आप को अन्यत्र कहीं देखने में न आवेगी। यहां उर्दू देवी का पूरा साम्राज्य है, हिन्दी भी उसकी छाया से प्रतिबिम्बित हो कर अपने मनोहर रूप में परिवर्तन कर बैठी है। यद्यपि यहां आर्य समाज ने हिन्दी के प्रचार का सराहनीय उद्योग किया है पर हिन्दी के विद्वानों की यहां बहुत कमी है। यही कारण इस अवस्था का है। आज कल यहां उर्दू और गुरमुखी लिपि में प्रतिद्वन्दिता मची हुई है। देखा चाहिये इसका क्या परिणाम होता है।

महाशयो, यह सब कहने से मेरा तात्पर्य यही है कि हिन्दी की पाठ्य पुस्तकें कहीं भी अच्छी नहीं हैं और इस अवस्था में कुछ संतोषजनक परिवर्तन भी होता नहीं देख पड़ता है। यह अवस्था मेरी समझ में तब तक वर्तमान रहेगी जब तक इन कमेटियों में हिन्दी के ऐसे गण्य मान्य विद्वान् न सम्मिलित किए जायंगे जो स्वतंत्रतापूर्वक अपनी सम्मति दे सकें और जिन्हें अपने अधिकारी को अप्रसन्न करने का भय उचित मार्ग के पथिक बनने में बाधक न हो तथा जो स्वार्थ को भूल कर भी अपने पास न फटकने दें। इस लिये यह सम्मेलन प्रस्ताव करता है कि जिन जिन प्रांतों में स्कूलों और पाठशालाओं में हिन्दी पढ़ने के लिये जो पुस्तकें नियत की जाती हैं उनका चुनाव अधिक संतोषजनक बनाने के लिये उन प्रांतों की टेक्सबुक कमेटियों में जहां हिन्दी की पढ़ाई होती है हिन्दी की प्रधान सभाओं को अपना एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाय।

यहां पर इस प्रस्ताव के एक अंश पर मैं आप का विशेष ध्यान दिलाया चाहता हूं। सम्मेलन प्रार्थना करता है कि सभाओं को प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाय। यह न हो कि गवर्न्मेंट अपनी तरफ से किसी को कमेटी का सभासद नियत कर के यह कहे कि ये महाशय अमुक सभा के सभासद या पदाधिकारी हैं अतएव वे उसके प्रतिनिधि हैं। प्रतिनिधि चुनने का अधिकार स्वयं सभाओं को ही हो। कदाचित् इस बात के कहने की आवश्यकता नहीं है कि संयुक्त प्रान्त में हिन्दी की प्रधान सभा काशी की नागरी प्रचारिणी सभा है अतएव यह सम्मेलन प्रार्थना करता है कि इस सभा को इस प्रांत की कमेटी में अपना एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया जाय।

महाशयो, मुझे अवसर मिलता और पहिले से यह ज्ञात होता कि इस प्रस्ताव पर निवेदन करने की मुझे आज्ञा होगी तो मैं भिन्न भिन्न प्रांतो में प्रचलित हिन्दी पाठ्य पुस्तकों को आप लोगों के सन्मुख उपस्थित करता परन्तु एक तो मैं पुस्तकों के उपस्थित न होने से उन्हें आप को दिखाने और उनके अंश पढ़ कर सुनाने में असमर्थ हूं दूसरे मैंने आगेही आप लोगों का अधिक समय लेलिया है। अतएव अब विशेष कुछ न कह कर मैं आप लोगों से प्रार्थना करूंगा कि आप लोग इस प्रस्ताव को स्वीकार करें कि "भिन्न भिन्न प्रांतो के स्कूलों और पाठशालों में हिन्दी पढ़ाने के लिये जो पुस्तकें नियत की जाती हैं उनका चुनाव अधिक संतोषजनक बनाने के लिये यह सम्मेलन सम्मति देता है कि उन प्रांतों की टेक्स्टबुक कमेटियों में जहां हिन्दी की पढ़ाई होती है हिन्दी की प्रधान सभाओं को अपना एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाय। यह सम्मेलन प्रार्थना करता है कि काशी की नागरी प्रचारिणी सभा को संयुक्त प्रदेश की टेक्स्टबुक कमेटी के लिये अपना एक प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाय।"

इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए पण्डित सूर्यनारायण दीक्षित एम. ए. एल. एल. बी. ने निम्नलिखित आशय की वक्तृता दी।

'माननीय सभापति महाशय और सभ्य महोदयगण,

मुझे खेद है कि मुझे आप से क्षमा मांग कर आगे बढ़ना होगा बात यह है कि मैं एक ऐसे स्थान से आ रहा हूँ जहाँ हिन्दी का इतना आदर नहीं है जितना कि होना चाहिये इसलिये मेरे मुँह से जो वाक्य निकलेंगे उनमें बहुत से उर्दू अल्फाज़ (माफ कीजिये शब्द) भरे होंगे और यह उर्दू फार्सी के शब्द आना मुमकिन है कि आपको भला न लगे परन्तु इस कठिनाई में भी एक फायदा है आप से क्षमा मांगते हुए भी मैं कुछ महाशयों को बाधित कर रहा हूँ; यह जो उस तरफ उर्दू जानने वाले शार्टहैण्ड रिपोरटर लोग बैठे हैं इनको मेरे कथन के नोट लेने में बड़ी आसानी होगी आप चाहे मेरे ऊपर खफा हों लेकिन यह सज्जन जरूर मेरे मश्कूर होंगे। अच्छा साहेब अब मामले की बात सुनिये।

जिस प्रस्ताव का मैं अनुमोदन करने के लिये आप के सामने आया हूं उसको मेरे बड़े दोस्त बा० श्यामसुन्दर दास जी बड़ी योग्यता के साथ उपस्थित कर चुके हैं। उन्होंने इतना कहा है कि मेरे कहने को कुछ छोड़ाही नहीं है, फिर भी कहनाही पड़ेगा न कहूँगा तो आप की आज्ञा भङ्ग करने का अपराधी होऊंगा।

टेक्स्टबुक कमेटी हमारी पाठशालाओं के लिये किताबें चुनती है। हमारे छोटे २ बच्चे इन्हीं किताबों से अपनी आरम्भिक शिक्षा पाते हैं और यही शिक्षा उनके भावी आचरण की जड़ होती है इस लिये यह तो मानीही हुई बात है कि इन किताबों को बड़ी होशियारी के साथ चुनना चाहिये। और इस होशियारी को वही काम में ला सकता है जो इस भाषा को अच्छी तरह जानता हो जिस में कि यह किताबें लिखी गई हों। अब आपही बतलाइये कि यह प्रस्ताव उचित है या नहीं। प्रस्ताव चाहता है कि टेक्स्टबुक कमेटी में हिन्दी का जानने वाला भी एक मेम्बर होना चाहिये। इस में कौन सी बड़ी तर्क की आवश्यकता है?

ऐसा न होनेही से तो यह देखने में आता है कि कुपढ़ लोगों से अपनी हिन्दी का ज्ञान प्राप्त करने वाले हिन्दी की पाठ्य पुस्तकों के लिये कभी२ भद्दी और ग्रामीण पुस्तकें चुन देते हैं। लखनऊ कमिश्नरी के रहने वालों को बनारस की देहात, देहात भी नहीं, किसी तहसील के एक कोने में पड़े हुए छोटे से गांव, की बोली में किसी की रामकहानी सुनाई जाती है, मेरे कहने का यह मतलब नहीं है कि देहात की बोली की क़द्रही न की जावै। उसकी क़द्र बहुत होनी चाहिये लेकिन अपने स्थान पर और उसका स्थान भाषाओं के अजायब घर, या लिंग्विस्टिकसर्वे आव डायाले-

कटूस में है. हमारे मदरसों की दरसी किताबों में नहीं। आप देखते हैं कि कैसी २ पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं। इतिहास तिमिरनाशक और राजा शिव प्रसाद के गुटकों के स्थान में रामकहानी!!! हमारे परम मित्र बाबू श्यामसुन्दर दास ने भी समय की चाल देख कर ऐसाही किया। आपने राजा लक्ष्मणसिंह की शकुन्तला का स्कूलों के लिये सम्पादन किया। जितनी कविता थी, वह सब की सब निकाल डाली। मानों अच्छे २ पदार्थ अपने लिये निकाल लिये और बचा खुचा, रद्दी नीरस अंश, बच्चों को दे दिया। यदि इस प्रस्ताव में की हुई प्रार्थना मंजूर करली जावै तो ऐसा न होस केगा, मदरसों में खराब किताबें स्थान न पासकेंगी और हमारे बालकों की सुशिक्षा में बाधा न पड़ेगी। मैं इन अलफाज़ के साथ इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूँ"

सभापति महाशय ने भी इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा कि जो अच्छी पाठ्य पुस्तकें नहीं चुनी जातीं इस में गवर्न्मेण्ट का दोष नहीं है वरन यह दोष हमारी हिन्दी और उर्दू की सब कमेटियों का है। इसका यही कारण है कि अब तक यही विचार हो रहा था कि भाषा किस ढंग की हो। अब इस विषय के सिद्धान्त एक प्रकार से स्थिर हो चुके हैं इस लिये आशा है कि गवर्न्मेण्ट हमारी प्रार्थना पर उचित ध्यान देगी।

इसके अनन्तर यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

इस प्रस्ताव की स्वीकृति के अनन्तर इस दिन का कार्य समाप्त हुआ।

[तीसरा दिन]

यह आशा की गई थी कि सम्मेलन का कार्य दो दिन में समाप्त हो जायगा परन्तु बहुत कुछ उद्योग करने पर भी यह न हो सका। अतएव तीसरे दिन बुधवार ता. १२ अक्तूबर १९१० को १२½ बजे सम्मेलन का कार्य पुनः प्रारम्भ हुआ। पहिले मंगलगान हुआ।

सातवाँ प्रस्ताव।

इसके अनन्तर कलकत्ते के बाबू राधामोहन गोकुल जी ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया और कहा—

"माननीय सभापति महाशय और विज्ञ सज्जनो,

मैं उचित समझता हूं कि आपकी विषय निर्वाचक समिति ने जो प्रस्ताव मुझे सौंपा है पहिले उसे पढ़ दूं। वह यह है—

"इस सम्मेलन को इस बात पर विशेष सन्तोष होता है कि भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रान्तों में हिन्दी को राष्ट्रभाषा और नागरी को राष्ट्र लिपि बनाने के पक्ष में मत पुष्ट हो रहा है और इस सदुद्योग की सिद्धि के लिये अनेक साहित्यसम्मेलन यत्नवान हो रहे हैं। यह सम्मेलन उन सब को हृदय से धन्यवाद देता है। इस कार्य्य में विशेष सफलता प्राप्त करने के लिये इस सम्मेलन की सम्मति में यह उचित जान पड़ता है कि बंगला, मराठी, गुजराती, उर्दू और हिन्दी साहित्य सम्मेलनों के प्रतिनिधियों का एक संघ शीघ्र ही कहीं मिले और राष्ट्रभाषा तथा राष्ट्रलिपि के सम्बन्ध में विशेष रूप से विचार करे।"

"यह सम्मेलन आशा करता है कि कलकत्ते की एक लिपि-विस्तार परिषद् और प्रयाग की नागरी-प्रवर्धिनी सभा इसका प्रबन्ध प्रयाग में बड़े दिनों की छुट्टी के समय करेंगी। इन दोनों सभाओं को यह सूचना दी जाय कि इस कार्य्य के लिये यदि आवश्यक हो तो यह सम्मेलन ५००) रु० की सहायता देगा।"

आप देखते हैं कि इस प्रस्ताव के दो प्रधान अङ्ग हैं प्रथम तो यह है कि "हिन्दी को राष्ट्र भाषा और नागरी को राष्ट्र लिपि बनाने के पक्ष में मत पुष्ट हो रहा है और इसकी सिद्धि के लिये अनेक साहित्य सम्मेलन यत्नवान हो रहे हैं" पर बन्धुगण यह बात कि 'बनाने के पक्ष में मत पुष्ट हो रहा है' ठीक नहीं। राष्ट्र भाषा बनाने से नहीं बनती, भाषा के गुण उसकी सहज सर्वव्यापिनी शक्ति उसे राष्ट्र

भाषा बनाती हैं और हिंदी निस्सन्देह राष्ट्र भाषा है इसको मान लेनाही बस है । देखिये कि कलकत्ते में चीनी व बंगाली जब बात करते हैं तो हिन्दी में, जहां जब कभी दो पृथक प्रान्त के लोग मिलते हैं और अंगरेजी नहीं जानते होते तो उन्हें हिन्दी काही आश्रय लेकर अपने मनोभावों को प्रकट करना पड़ता है। विदेशी भारत में आकर किसी प्रान्त विशेष की भाषा पहिले नहीं जान सकता, हिन्दी सेही उसे सब प्रान्तों के लोगों से काम चलाना पड़ता है और उसी से उसका काम चलता है। पुनः सब प्रान्तों की भाषाएँ संस्कृत सेही बनी हैं तो भी अति घनिष्ठ और निकट सम्बन्ध हिंदी का है । सब से बड़ा प्रमाण इस बात का उसकी लिपि है। नागरी लिपि ठीक संस्कृत लिपि है जिस पर सब प्रान्तवासियों को बराबर स्वत्व व प्रेम है । यह बंग, पञ्जाबी आदि की भांति बिकृत अक्षरों में नहीं लिखी जाती। पुनः हिन्दी की सरल सीधी परिभाषा आप लोगों के सामने मैं यों करूंगा कि हिन्दी एक नायिका है। इसका प्राण संस्कृत है, तन प्राकृत है, प्रचलित बोल चाल के रंग ढंग इसके सुहावने वस्त्र व बिदेशीय भाषाओं से आए हुए शब्द व काव्य इसके अलंकार हैं । पृथक पृथक प्रान्तों के मुखों की उच्चारण लटक इसकी अनुहार को बदल देती है, पर मूल में परिवर्तन नहीं हो सकता इसी से हिन्दी सब प्रान्तों को सीखने में , जानने में, बोलने में अन्य प्रान्तीय भाषाओं से कहीं सुगम है। पारसी तो स्वयं संस्कृत की बेटी होने से इसमें कोई परिवर्तन प्रतीत कराही नहीं सकती। इसकी लिपि इसकी विभक्तियां, इसके प्रत्यय, प्राकृत जानने वालों को कहना न होगा सभी प्राकृत से सीधे आये हैं या संस्कृत से। पुनः सम्पूर्ण भारतनिवासियों की धर्म्म पुस्तकें संस्कृत वा प्राकृत अथवा प्राकृत के किसी विकृत रूप मेही हैं जिनका आधार संस्कृत है। इस से सबकोही हिन्दी का परिचय थोड़ा बहुत स्वभाव सेही हो जाता है। इस दशा में हिन्दी राष्ट्र भाषा है। इसके बनाने की आवश्यकता नहीं है हां हठ त्याग कर इसे राष्ट्र भाषा मान लेने की आवश्यकता है। साथही यह बात परम आवश्यक है कि इसके अन्तर्गत वर्तमान समय के साहित्य में जो कमी है उसको पूरा करके इसे सर्वप्रिय बनाने का और भी अच्छा अवसर दिया जाय। इसकी लिपि के प्रचार से देश में नाना प्रकार की भूलों और अनर्थों को निर्मूल किया जाय।

मैं आप महोदयों का अधिक समय न लेकर इसकी लिपि के सम्बन्ध में दो चार बातें कहूँगा और फिर इस प्रस्ताव के दूसरे अंग पर एक शब्द कह कर समाप्त करूंगा । इसकी वर्णावली में किसी तर्कवेत्ता को इसी तरह दोष ढूंढने का अवसर नहीं मिलता जैसा गानेवालों को। यह जितनी मधुर है उतनी ही सतर्कगठित भी है।

जगत्प्रसिद्ध मूल तीन स्वरों को क्रम से आ—इ—उ उत्तरोत्तर स्थान देते हुए आदि में यथावत लिखकर इनके योगों में क्रम का विचार रक्खा है और कोई स्वर इसमें ऐसा नहीं छूटा कि जिससे किसी बात के लिखने वा पीछे यथावत पढ़ने में आपत्ति हो 'य' और व अर्ध स्वर की बनावट मूर्ख भी उच्चारण करके समझ सकता है। इ अ=य और व्यञ्जनों में भी कण्ठ से ओष्ठपर्यन्त स्थानक्रम से पाते हैं और उच्चारणक्रम भी भ्रष्ट नहीं हो सकता। अन्य भाषाओं सी न स्वरों व व्यञ्जनों की खिचड़ी है न किसी वर्ण की कमी है। जो किसी विदेशीय भाषा के उच्चारण की लटक का ध्यान रखना चाहें तो भी सुगमता से दो तीन चिन्हों को स्थापित करके कर सकते हैं। इससे यह लिपि न केवल भारतवर्ष के लिये वरन भूमण्डल भर के वास्ते महान उपयोगी है।

अब दूसरा भाग इस प्रस्ताव का इस सर्वहितकारिणी मनुष्य मात्र की कल्याणकारिणी नागरी लिपि के सम्बन्ध में है और हम लोगों की प्रबल इच्छा होनी चाहिये कि आगामी प्रयाग प्रदर्शनी महोत्सव के अवसर पर जब कि न केवल सारे

भारत केही विद्वान एकत्र होंगे वरन् भूमण्डल के सभी स्थानों के चुने चुने महाशय पदार्पण करेंगे नागरी लिपि के प्रचार का बिचार किया जाय और यदि आवश्यकता हो तो हमलोग सम्मेलन फण्ड से कम से कम ५००) की आर्थिक सहायता भी दें क्योंकि इस सम्मेलन का एक मुख्य उद्देश नागरी लिपि की महानता का प्रकटीकरण भी है।

वर्तमान में कलकत्ते में एक लिपि विस्तार परिषद मौजूद है और प्रयाग की नागरी प्रवर्धिनी सभा सहर्ष इस काम के भार को ले सकती है और जहां तक मैं जानता हूँ वह इसको भार न समझ कर प्राणवत प्यार करती हुई शिरोधार्य करेगी तो क्यों न इस सम्मेलनस्थ सत्पुरुष इस सम्बन्ध में अभी से उद्योग करें। पर उद्योगशील तभी हो सकते हैं कि जब निश्चय हो जाय अतः यह प्रस्ताव आप के सन्मुख उपस्थित कर के आशा करता हूँ आप लोग इस पर विचार करके निश्चय करेंगे।

कलकत्ता निवासी प्रोफ़ेसर हेमचन्द्र सर्कार एम. ए. ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए इस आशय की बङ्गला में वक्तृता दी—

प्रिय भातृवृन्द, माननीय सभापति महाशयेर आदेश आपनादेर सन्मुखे उपस्थित होईबार ये अधिकारप्राप्त होईया छे तज्जन्य आमि कृतज्ञ। राष्ट्र लिपि ओ राष्ट्र भाषा सम्बन्धे ये मन्तव्य अनुमोदन करिब ताहा दुइ भागे विभक्त करा जाइते पारे। प्रथमतः भारतवर्षीय भिन्न भिन्न वासी मध्ये ऐक्य ओ सहानुभूति उत्पत्ति एवं परस्परेर मनोभाव ओ सिद्धान्त अवगतिर जन्य, प्रत्येक प्रदेशेर मातृभाषा ओ लिपिर कोन प्रकार व्याघात ना करिया जाहाते आर एकटि अतिरिक्त राष्ट्र भाषा ओ लिपि प्रचलन द्वारा एक प्रान्तवासीर सहित अपर प्रान्त वासीर मनोभाव ज्ञापन ओ व्यावहारिक कार्य सम्पादनेर सुबिधा हय ताहार विशेष चेष्टा। एइ राष्ट्र लिपि चाइते देवनागरी एवं एइ राष्ट्र भाषा चाइते हिन्दी हय ए सम्बन्धे मत परिपुष्ट हइया छे एवं अनेक प्रान्तीय साहित्य सम्मेलन ए विषये यत्नवान हइयाछेन।

द्वितीयतः एइ राष्ट्र लिपि ओ राष्ट्र भाषा सम्बन्धे विशेष रूपे विचार करिवार जन्य एक लिपि विस्तार परिषदेर उद्योगे जाहाते शीघ्र कोन स्थाने बङ्गला, मरहाटी, गुजराती, उर्दू, ओ, हिन्दी साहित्य सम्मेलनेर प्रतिनिधि बर्गेर एक संघेर अधिवेशन हय इहा एइ हिन्दी सम्मेलनेर अभिमत।

मोक्षदातृ वाराणसीधामे प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन उपलक्षे सर्व तीर्थ भारतेर विभिन्न प्रान्त होइते आमरा एकत्रित हइया छि आमरा सकलेइ साहित्यसेवी वा साहित्यानुरागी साहित्य शब्देर व्युत्पत्ति होइतेइ एकत्रित होइवार कारण सहजे उपलब्ध होइवे। "सहितं" शब्द हइते साहित्य शब्देर उत्पत्ति। जाहा विच्छिन्न के एक करे ये खाने ऐक्य से खाने आपन प्रतिष्ठा स्थापन करे, ताहाइ साहित्य। साहित्येर उद्देश्य केवल भावे भावे, भाषाय, ग्रंथे ग्रंथे मिलन नहे, मानुषेर सहित मानुषेर, अतीतेर सहित वर्तमानेर। दूरेर सहित निकटेर अत्यन्त अन्तरंग योग साधनम।

"हे भारत! आर्य नवीन वरषे शुन ए कबिर गान।
एनोछ मोदेर मनेर भकति,
एनोछ मोदेर धर्म्मेर मति,
एनोछ मोदेर प्रान"।

विभिन्न प्रान्तेरे मातृ भाषा अक्षुन्न राखिया याहाते ऐक्य ओ सहानुभूति जन्मे एवम् परस्परेर मनोभाव ज्ञापन ओ व्यावहारिक कार्य सम्पादन सहज हय तज्जन्य राष्ट्रभाषा ओ राष्ट्र लिपि प्रबलतर प्रयोजनीयता एई प्रस्ताव गृहीत हइयाछे। एई क्षण देखा जाबुक बिभिन्न प्रान्तेर हिन्दूदेर मध्ये ऐक्य ओ सहानुभूति आछे कि ना?

आपनारा एई कएक दिवस प्रातःकाले दुर्गाबाड़ीगमन करिया अथवा सायंकाले बिश्वेश्वर ओ अन्नपूर्णार आरति दर्शन करिया अनुभव करिया

थाकिवेन जे राजपूत मराठी गुजराती युक्त प्रान्त-वासी पंजाबी बिहारी वा बंगाली हिन्दूमात्रेइ कि रूप एकइ धर्म्म भावे प्रणोदितः हन । तंहरा सकले बलेन " तुमि विश्वेर सम्राट, तुमि विश्वेर पिता माता, तुमि सर्वमय, बुदबुदेर न्याय, तोमारि अमृत-मय चरण समुद्र विलीन होये अमृतोपम पूजा-पतेः पूजा अभूम, वेर स्वाहा "–अमृत सागरे मग्न हइबे, अमृत लाभ करिवे, तोमारि सन्तान तोमार अंके उठिया चिरदिनेर जन्य त्रिताप ज्वाला निर्वांशा करिवे "।

आमादेर भाव ओ अनुभूति एखन एकि प्रकार तखन अमादेर भाषार मध्ये एतदूर व्यवधान केनो थाकिवे ? अवश्य, मातृ गर्भ हइते भूमिष्ठ होइया मातृ स्तन्य पानेर सङ्गत जे मातृ भाषार आस्वा-दन करियाछे ताहार प्रति अनुराग स्वाभाविक। एइ साहित्य सम्मिलन हइते प्रत्येक प्रान्तेर मातृ भाषा जा अवसथात ते तहराइ भवराइ नहन मातृ भाषार प्रति अनुरागेर वशवर्त्ती हइया माराठी बोलिते पारेन से छत्रपति शीवाजीर भाषा राष्ट्र भाषा हउक गुजराती बोलिते पारेन जे स्वयं श्रीकृष्ण ये देशे सम्राट छिलेन, से देशेर भाषा जन साधा-रणेर भाषा हइवेना केन ? बंगाली बोलिते पारेन जे तांहार मातृ भाषा एकई रूप 'भावेर भाषा सौन्दर्य्येर भाषा, रसेर भाषा अपरदिके सेइ रूप युक्तिर्भाषार विभक्ति एवं राजनीति, समाज नीति, आर्य्य नीति कृषिवाणिज्य, विज्ञान दर्शन प्रभृति सर्व विषयेर भाषा सुत्तराम् बंगलाइ राष्ट्र भाषा हओया कर्त्तव्य । हिन्दी भाषी, विहारी पंजाबी, राजपूत, घो युक्त प्रान्तवासी बोलिवेन जे हिन्दी भाषीर संख्या अन्यान्य प्रान्तीय भाषार संख्या अपेक्षा अधिक आपनादेर स्वागत कारिणी सभार सभापति राय शिवप्रसाद देखाइयाछेन हिन्दी भाषीर संख्या चार कोटी पंचास लक्ष एवं अति सहजेइ सकले हिन्दी भाषाय कथोपकथन शिक्षा करिते पारेन सुतराम् हिन्दी राष्ट्र भाषा हइवार अधिकार सर्वापेक्षा अधिक—

इहार उत्तरे बंगला, मराठी, गुजराती, अथवा उर्दू भाषी बोलिते पारेन जे आमार अनुरागी संख्या क्रमशः वर्द्धित हइबे एवं आमरेइ भाषा क्रमे राष्ट्र भाषा हइबे किन्तु " भविष्यते जहा हईवे " " एवं वर्तमाने जहा आछे " इहार मध्ये अनेक व्यवधान । माद्राज प्रान्तीय तेलगू–तामील भाषा छाड़िया दिले भारतवर्षेर अन्यान्य प्रान्तेर प्राय सकलेइ हिन्दी ते कथनोपकथन करेन वा अति सहजे शिक्षा करिते पारेन । जे भाषा एइ रुपे राष्ट्र भाषार दिके अग्रसर हइयाछे, ताहाकेइ राष्ट्र भाषाय परिणत करिते चेष्टा करा आतार कर्त्तव्य कार्य्य।

एइ लक्षणविवेच्य ये हिन्दी वर्त्तमान आकारे राष्ट्र भाषा बलिया गृहीत हइवार सम्पूर्ण उपयुक्त कि ना ? माननीय सभापति महाशय, " तद्भव वो तत्स " एइ दुइटी कथा द्वारा देखाइया छेन ये भाषार पुष्टि दुइप्रकारे हय हिन्दी गुजराती, महा-राष्ट्री ओ बंगला भाषार शब्दगुलि तद्भव "।

कारण एइ सकल भाषार जननी संस्कृत भाषा-सकलेरइ उत्पत्ति संस्कृत हइते हइयाछे एवं एखन-इहा ओ पुष्टि हइतेछे; अर्बी पार्शी प्रभृति भाषा हइते अनेक शब्द हिन्दी ओ बांगला ते प्रवेश करियाछे, किन्तु " तद्भव " शब्देर न्याय क्रमशः नूतन शब्देर उत्पत्ति करिया भाषार पुष्टि साधन करिते–पारे

ताइ—अन्ये हिन्दीते ये सकल अर्वी पाशी शब्द प्रवेश करियाछे ताहादिगके तत्सः शब्द बला जाइते पारे—"तद्भव" शब्दके सूतो परिविल्य विकार शुशील पुष्पेर सहित, एवं "तत्सहः शब्दके पुष्पाधारे रक्षित क्षणिक सुगन्धि पुष्पेर सहित तुलना करा जाय।

हिन्दीके राष्ट्र भाषाय सम्पूर्ण रुपे परिणत करिते हइले "तद्भव ओ तत्सह" एइ उभय विध शब्देर आश्रय ग्रहण करिते हइबे एक दिके एरुप अर्वी पाशी ओ इहा देर समिश्रणे उत्पन्न उर्दू शब्द परिहार करिले चलिवेना, अपर दिके सेइरूप महाराष्ट्र गुजराती ओ बांगला प्रभृति संस्कृत प्रसूत भाषा हइते प्रयोजनीय शब्द अधिक परिमाणे ग्रहण करिते हइबे। आमार यत दूर स्मरण हय कलिकातार विश्वविद्यालयेर भूत भव्य वाइसचान्सेलर माननीय सर गुरुदास बन्दोपाध्याय महाशयेर एइ रूप अभिमत—

"अन्यान्य प्रान्तीय भाषार साहाय्य ग्रहण पूर्व आपना दिगके आरो एकटि कार्य्य सम्बन्धे निवेदन करितेछि आमि आपनदेर सहित ये भाषाय कथा वलितेछि इहा कलिकाता ओ नवद्वीप वासीर बांगला आमादेर मध्ये ओ उत्तर बंगेर सहित पूर्व बंगेर, पश्चिम बंगेर सहित, दक्षिण बंगेर भाषार पार्थक्य आछे। आपना देर उर्दू प्रसवित लखनौ भाषार सहित उर्दू हिन्दी मिश्रित प्रयागेर भाषार एवं हिन्दी बाहुल वाराणसी भाषार पारथक्य देखते छि—आमरा ये रुप दक्षिण पश्चिम बांगला अर्थात् कलिकत्ता नवद्वीपेर भाषाय सभा समितिते कथोपकथन करि आपनादिगेर बोध हय सेरुप एकटी कथोपकथनेर भाषा संभवतः प्रयागी भाषा स्वीकार करिते हइवे। पुस्तकेर भाषाओ आमरा समग्र बंगे एकटि मात्रइ करिया लइयाछि—आमरा लिखिते हइलेइ—मृत्युञ्जय पूर्विक प्राणेर भाषाय ना लिखिया विद्यासागर बंकिमचंदी हेमचन्द्र रविन्द्र नाथी भाषाय लिखि। आपनादिगकेओ सेइरुप कविवर तुलसीदासी हरिश्चन्द्री भाषाते बोध हय रुचिकर मनमोहनी भाषाय परिणत करिते हइबे खास हिन्दी ओ खासउर्दू मिशाइया एक नूतन लिखित भाषार सृष्टि करिते हइबे एइ रुपे एकटि कथित एवं एकटि लिखित भाषार सृष्टि हइले आशाकरि नवबले बलवती चेष्टाय भगिनी हिन्दी गरीयसीप्रतिष्ठा भगिनी, बंगला मराठी एवं गुजराती हइते ओ प्रयोजनीय भाव एवं भाषार साहाय्य ग्रहण करिआ संस्कृत मातार सहित भाव भाषा ओ उच्चारणेर अधिकतर पारिवारिक सौसादृश्य स्थापन करतः ताहार आनन्द वर्द्धित करिवेन।

बोधहय देवनागर अक्षर के राष्ट्रलिपि स्वीकार करार पक्षे कोनोउ मतभेद नाइ—वरं सुनियाछि उर्दूते जेरुप जाल करिवार सुविधा देवनागरे से रुप कोनेओ सुयोग नाइ—फरासि, इटालियान, स्पानीश, पुर्तुगीज़ प्रभृति लाटिन संभूत भाषा येरूप एक रोमान अक्षरे लिखित हय, से रूप संस्कृत प्रसूत हिन्दी मर्हठी गुजराती ओ बांगला प्रभृति भाषा ओ देवनागरी अक्षरे लिखित हइया ओ भारतेर विभिन्न प्रान्त वासीर मनोभाव ज्ञापन ओ व्यवहारिक कार्य्य सम्पादनेर साहाय्य करिवे। माननीय श्रीयुक्त सारदाचरण मित्र महाशय एक लिपि विस्तार परिषद् स्थापनेर द्वारा विशेष उद्योगी हइया सकलेर कृतज्ञता भाजन हइया छेन। एक राष्ट्रलिपि ओ एक राष्ट्रभाषा प्रचलनेर द्वारा

आपनारा " भारतेर विभिन्नप्रान्ते परस्परेर मध्ये जे सहानुभूति उत्पत्तिर जन्य चेष्टा करिते छेन, " एनहे काहिनी एनहे स्वपन, आसिवे से दिन आसिवे " ।

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम् ।
प्रियं च नानृतं ब्रूयात् एष धर्म्म सनातनः ॥

भगवान मनुर एइ उक्ति स्मरण करिया—आमार जाहा वक्तव्य आपनादिगके निवेदन करिआछि । प्रयागे शीघ्रइ ये सम्मिलन हइवे ताहाते एइ विषय सम्बन्धे विशेष विचार हइवे सुतरां आमार अधिक बला निष्प्रयोजन । यजुर्वेदीय त्रिसुपर्ण मन्त्र वक्तृतार शेषे योग करिते इच्छा करि " यश्चमेतुमाम् । मधुमेतुमाम् । विश्वमेव मधुमेतुमाम् । यास्ते सोम प्रजा वत्सोभि सोऽहं । दुष्पश्नोहं दुरुध्यह । यास्ते सोम प्राणास्तां जुहोमि—

इस प्रस्ताव का समर्थन काशी के प्रोफ़ेसर मि एन् पाटंकर एम० ए० ने निम्नलिखित वाक्यों में किया—

" सभापति महाशय और बन्धुजनो,

मराठी भाषा के सम्बन्ध में हिन्दी भाषा के प्रचार के अनुकूल व्याख्यान देने का श्रीमती नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से मुझसे अनुरोध किया गया है और सम्मिलन के समय हिन्दी भाषा में ही हो सके तो, व्याख्यान या लेख दिया जाय, ऐसी इच्छा प्रकट की गई । इस कार्य्य के प्रारम्भ करने के पूर्व एक दो बातें मुझको स्पष्ट करनी आवश्यक हैं । उनकी ओर ध्यान देनेकी सभ्यजन कृपा करें ।

प्रथम, जिस भाषा के पक्ष से यह विषय मुझको मण्डित करना है उस मराठी भाषा का मेरा परिचय विद्वानो का सा नहीं है क्यों कि मराठी भाषा का पूर्ण स्वरूप ध्यान में लाके उसकी चर्चा करने योग्य विद्वता मैंने कमाई नहीं है, इतना तो मुझे स्वीकार करना चाहिये कि मराठी मेरी मातृभाषा हैं और उसके आदि से आजतक जो प्रसिद्ध ग्रन्थ हो गए हैं उनमें से बहुतेरे मेरी दृष्टि में आ चुके हैं व उनके विषयों की चर्चा की अपेक्षा उनके शब्दों की ओर मेरा ध्यान अधिक रहा है इससे मुझको इस विषय में अधिक अधिकार पहुंचता नहीं । दक्षिण में मराठी मे प्रथम श्रेणी के विद्वान अनेक हैं उनके यहां पर न होने से मैंने इस कार्य्य को अपने ऊपर लेने की ढिठाई की है । अधिकार की न्यूनता के अनुरूप मेरे व्याख्यान में जो दोष हों, उनका सुधार मेरे देशबन्धु कर लेयें ऐसी मैं आशा करता हूं ।

द्वितीय, विद्यमान सभ्यगणों से मेरी और एक विनती यह है, कि मेरी मातृभाषा मराठी है और हिन्दी का परिचय मैंने विद्वानो की रीति से किया नहीं, केवल सामान्य लोक व्यवहार से सुन सुन कर जो हिन्दी का स्वरूप मेरे चित्तपट पर उतर आया है, वैसी हिन्दी काम में लाकर मैं कुछ वक्तृता कर सकूंगा । अर्थात् मेरी हिन्दी भाषा भिन्न भिन्न संसर्गों से विचित्र मालूम होगी क्योंकि मालवे में मेरा कुछ काल व्यतीत हुआ उसमें मालवीय भाषा से मेरा परिचय हुआ । गुजराती मेरे सुनने में बहुत सी आई । पञ्जाबी भाषा मेरे परिचय के पञ्जाबी गृहस्थों के मुख से सुनने से कुछ उसका भी संसर्ग मेरे चित्त पर रहा है तथा मध्य हिन्दुस्तान के ऊपर के प्रदेशों की हिन्दी से लेकर, मथुरा वृन्दावन की व्रज, लखनऊ की उर्दू, काशी में प्रचलित नागरिक व ग्रामीण हिन्दी व वस्ती यहां पर अधिक होने से

बङ्गला, ऐसी अनेकःभाषा हैं व हिन्दी के अनेक स्वरूप, अंशतःअक्षरों में आने से मेरे मुखसे जो हिन्दी निकल सकेगी वह यहां की स्वच्छ नागरिक हिन्दी से बहुत ही विलक्षण होगी। यह अपरिहार्य है कि कुछ उर्दू शब्द, कुछ हिन्दी, कुछ मराठी, कुछ गुजराती, कुछ पञ्जाबी और कुछ बङ्गला, ऐसे ही सबके संस्कार की बनी हुई मेरी हिन्दी एक खिचड़ी सरीखी समझी जावेगी। परन्तु मैं आशा करता हूं कि उस खिचड़ी में अपने प्रेम का मसाला मिला कर आप उसको स्वादिष्ट कर लेवें गे। इतनी प्रस्तावना करके में आपकी आज्ञानुसार विषय का उपक्रम करता हूं।

१ हिन्दी का लक्षण।

हिन्दी भाषा के प्रचार के विचार में यह विषय अवश्य मालूम होना चाहिये कि इस भाषा का लक्षण स्वरूप क्या है। मराठी, गुजराती, सिंधी, पञ्जाबी, बङ्गला, उर्दू, इत्यादि भाषाओं से इस भाषा का क्या भेद है, कि जिससे इसका स्वरूप परिच्छिन्न हो जावेगा। मराठी और हिन्दी के विशिष्ट सम्बन्ध की चर्चा मैं आगे करनेवाला हूं। प्रथम इतना ही मुझको बताना है कि ऊपर कही हुई सब भाषाओं व हिन्दी भाषा इन सबों का सम्बन्ध क्या और कैसा है।

इस कार्य्य में हिन्दी शब्द की व्युत्पत्ति का यही मूलाधार है। हिन्दी शब्द कभी कभी "हिन्छी" ऐसा मेरे सुनने में आया है। "हिन्दी" यह केवल "हिंदुई" शब्द की संधि होकर भिन्न शब्द के समान शब्द हुआ है। "ई" प्रत्यय से उस देश की या उन लोगों की भाषा, ऐसा अर्थ निकलता है। अरबी, फारसी, इत्यादि प्रयोग में हिन्दी, पञ्जाबी इत्यादि शब्द सहज बनकर आ सकते हैं जिससे यह सहज में ध्यान में आवेगा कि हिन्दी नाम हिन्द की भाषा अथवा हिन्दू लोगों की भाषा। यह शब्द इस रूप से प्रचार में आनेका प्रकट करना यही मालूम होता है कि पहिले मुसल्मानी राजा के समय मुसल्मानों की जो प्रचलित भाषा थी उसका और हिन्दू लोगों की भाषा का जो भेद रहा उसमें हिन्दुओं की भाषा हिन्दुई ऐसी कहलाई होगी। हिन्द यह शब्द वायव्य लोगोंने अर्थात् सिन्धु नद के पश्चिमके लोगों ने, पूर्व किनारे के देशों के लिये प्रचलित किया उसी प्रकार से हिंदुई शब्द उनकी भाषा के लिये पश्चिमात्य वायवीय मुसल्मानों की तरफ से प्रचलित हो गया, इसमें कुछ सन्देह नहीं। पुरातन शब्द "भाषा" "बोली" है मगर "हिन्दी" ऐसी भाषा का नाम किसी अत्यन्त प्राचीन यानी मुसल्मानी पातशाहत के पूर्व की भाषा से लगा हुआ मिलेगा ऐसा मेरे विचार से संभवनीय नहीं ठहरता। पुरातन ग्रन्थों की उपलब्धि तथा अवलोकन किया जाय तो इसकी पुष्टि हो जावेगी ऐसी पूरी आशा है।

२ प्राकृत व हिन्दी।

इस विषय में दूसरी चर्चा ऐसी उपयुक्त है कि ऊपर बताई हुई हिन्दी भाषा कौनसी और कहां मुख्यतः प्रचलित थी या सब हिन्दुओं की, सर्व आर्य्य देश में प्रचलित भाषा ही हिन्दी कहलाई, इसके निर्णय करने के लिये दो प्रमाण विद्यमान हैं। एक प्राकृत भाषाओं का विस्तार तथा दूसरा हिन्दी भाषा के ग्रन्थ।

प्राकृत नाम से पुरातन काल में कई एक भाषाएं प्रसिद्ध थीं जो वैयाकरणादि विद्वानो ने भिन्न २

नामों से बतलाए हैं । आदि में सुविदिनि प्राकृत वो पाली भाषा थी कि जिसमें बौद्ध धर्म के लेख व ग्रन्थ उपलब्ध हैं पाली के पीछे किसी विद्वान के मत से महाराष्ट्री, किसी के मत से शौरसेनी, किसी के मत में महाराष्ट्री की मूलभूत अपभ्रंश नाम भाषा हो गई । और एक सुप्रसिद्ध प्राकृत मागधी नाम से प्रसिद्ध है अर्थात् इनमें "हिन्दी" ऐसा नाम नहीं, न तो पंजाबी, बङ्गला या इतर नाम ही हैं केवल मराठी नाम का मूल रूप महाराष्ट्री ऐसा इन शब्दों से व्यक्त है। विद्वानों के शोध में ऐसा निर्णय हुआ है कि मराठी भाषा, पूर्वी राजपुतानी और अर्धमागधी इन्हीं प्राकृतों में से जो उत्तर काल में भिन्न हो गई उनसे उत्पन्न हुई। इसमें मुख्य यह बात स्पष्ट है कि मराठी से पुरातन नाम किसी अर्वाचीन भाषा का नहीं है तो भी हिन्दू नाम से आर्य लोगों की जो पुरातन भाषाएं प्रचलित रहीं उनमें मुसल्मानों का जिस भाषा से अत्यन्त निकट सम्बन्ध रहा वह भाषा हिन्दूई कहलाई ऐसा कहना मुझे युक्त है । हिन्दुस्तान में मुसल्मानों का मुख्य स्थान आरम्भ में हस्तिनापुर हुआ वहां ही इस हिन्दी भाषा का नाम प्रथम सार्वत्रिक प्रचलित हुआ । यह कहना साधारण समझा जावेगा अर्थात् दिल्ली से आगे वा दिल्ली के चारों ओर हमलोगों की मूल भाषा के स्वरूप को हिन्दी नाम मिला व जो भाषा हिन्दूओं के मुख से मुसल्मानी पातशाहत जारी होने के वक्त दिल्ली में सुनने में आई वही हिन्दी भाषा इस नाम से प्रचलित हुई ऐसा अनुमान निर्बाध हो सकेगा अर्थात् जो प्राकृत भाषा हमलोग उस देश में व्यवहार में लाते थे वही मूल हिन्दी भाषा है । उसका स्वरूप काल विशेष में भिन्न भिन्न हुआ है । ईसा सन् के प्रथम सहस्र वर्षों के पूर्व की या बारह तेरह शताब्दियों के पूर्व की भाषा पुरातन हिन्दी वा अगाड़ी की अर्वाचीन हिन्दी ऐसा कहने में कुछ हानि नहीं और इससे भी स्पष्ट चन्द कवि का पृथ्वीराजरासो नामक ग्रन्थ यह अर्वाचीन हिन्दी का आद्य ग्रन्थ समझना चाहिए और हिन्दी संसार में ऐसाही समझा जाता है, यह मेरी धारणा है। इससे पूर्व के ग्रन्थ मुझको मालूम नहीं; व इस ग्रन्थ में हिन्दी का स्वरूप स्पष्ट हुआ है कि जिससे पंजाबी आदि इतर भाषाओं के स्वरूप से इसका भेद निश्चित हो सकता है।

३ हिन्दी के भेद व प्रचलित अन्य प्राकृत भाषाएं ।

ऊपर की हिन्दी भाषा को हिन्दी कहा अब हिन्दी भाषा के कई स्वरूप हैं। मथुरा की हिन्दी, राजपुताने की हिन्दी, बनारस की हिन्दी व एक प्रबल भेद जो हिन्दुस्तानी या उर्दू नाम से प्रचलित है। इस प्रकार ऐसे हिन्दी के कई भेद हैं।

वर्षों के पहिले, बम्बई के एक मराठी ग्रन्थकार ने उस वक्त की मराठी के तीस भेद वर्णन किये हैं ऐसे ही इस हिन्दी नामक भाषा के दस बीस कोस के फ़ासिले पर अनन्त रूप प्रचलित हैं जिसके सामान्य स्वरूप पश्चिमी हिन्दी व पूर्वी हिन्दी इन नामों में अन्तर्भूत किए जाते हैं।

तो भी यह ठीक दीख सकता है कि हिन्दी यह इतनी व्यापक होके भी आत्म स्वरूप से पंजाबी, बङ्गला, मराठी, गुजराती व सिन्धी भाषाओं से भिन्न है । इन अर्वाचीन भाषाओं का

हिन्दी के स्वरूप से कैसा भेद है सो मान लो। मैं इस उपमा से बतलाऊंगा। एक बिम्बभूत आकृति मध्य में शार्यों के भेद से आकृति के रूप में भी अन्तर दृष्टिगोचर होगा। इसी प्रकार हिन्दी भाषा का रूप इन अर्वाचीन भाषाओं में दृष्टिगोचर होगा, यह हिन्दी भाषा राष्ट्रिय भाषा है ऐसा कहने को वह एक बड़ा ही आधार है जिसमें हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय करो यह कहना पुनरुक्ति है कि जो राष्ट्रिय है उसको राष्ट्रिय करो ये वाक्य में पुनरुक्ति से अन्य चमत्कार नहीं है।

४ हिन्दी व मराठी।

मुझको मराठी भाषा की ओर से प्रकृत विषय का विचार करना है मैं आपको सप्रमाण बता सकता हूं कि मराठी का आद्य स्वरूप हिन्दी के पुरातन या अर्वाचीन स्वरूप से बहुत भिन्न नहीं है। जिससे जैसा मैंने अभी कहा कि हिन्दी के स्वरूप से सब ऊपर कही हुई भिन्न २ भाषाएं निकली वैसी मराठी भी निकली है यह मालूम हो जावेगा यहां पर एक विवाद पैदा होता है सो यह कि, मराठी नाम का अभिमान रखने वाले कहेंगे कि मराठी हिन्दी से नहीं निकली। हिन्दी ही मराठी से निकली होगी या मराठी और हिन्दी का कुछ सम्बन्ध नहीं। मराठी महाराष्ट्री से निकली, उसको हिन्दी ऐसा हीन नाम नहीं देना चाहिए। अब यह झगड़ा केवल नाम ही का है और इससे कुछ तात्पर्य्य नहीं। मराठी के पक्षपात से मैं कहूं तो यही कह सकूंगा, कि जिस हिन्दी भाषा का स्वरूप मूल मराठी से मिलता है जो कि मैंने कहा है कि उस हिन्दी को चाहे मराठी कहो चाहे हिन्दी कहो मेरे सिद्धान्त से सप्रमाण स्पष्ट होगा कि हिन्दी नामक जो देशीय भाषा प्रसिद्ध है वही मराठी भाषा के मूल स्वरूप का विम्ब है। दुर्दैव से इसका पुरातन काल में आर्य्यजनों का दिया हुआ नाम न रहके प्रत्युत वहिर्देश के लोगों का दिया हुआ हिन्दी नाम प्रचलित हुआ इसको पहिले-ही मराठी कहे होते तो कुछ भी प्रमाद न हो सकता क्योंकि यह महराष्ट्री ही है कि जिसको हिन्दी नाम दिया गया इस बात का एक प्रमाण तो यह है मराठी के आद्य स्वरूप के शब्द तथा हिन्दी के पुरातन और अर्वाचीन शब्दों में इतना सादृश्य है कि ये दो भाषाएं मूल में एक ही रही होंगीं ऐसा अनुमान होता है दूसरा प्रमाण यह है कि पुरातन प्राकृत वैयाकरणों ने अपनी उक्ति से महाराष्ट्री का स्वरूप सर्वव्यापी दिखा दिया है।

संस्कृत नाटकों में शौरसेनी भाषा का मुख्य प्रयोग है शौरसेनी के बररुची, चंड, वाल्मीकि आदि वैयाकरण शौरसेनी के कुछ भेद बता के अन्त में "शेष महाराष्ट्री वत्" ऐसा कहते गये शौरसेनी यह मथुरा प्रान्त की मूल भाषा है इसका स्वरूप महाराष्ट्री से मिलता रहा कुछ भेद तो अवश्य थे इतना इसमें सिद्ध होता है। जिस समय हिन्दी शब्द प्रचार में आये उस समय दिल्ली के हिन्दू लोगों की भाषा शौरसेनी थी या महाराष्ट्री इसका निर्णय जब हो जायगा तब यह विवाद मिट जायगा। मराठी के पक्षपात से मैं कहूंगा कि यह भाषा मराठी ही थी परन्तु मराठी नाम से साधारण हिन्दू देश की भाषा का अर्थ एकदम प्रकट हो जाय सो तो कठिन है हिन्दी के बोलने वाले को यह ज्ञात नहीं है कि मूल भाषा कहां से निकली इसी कारण हिन्दी व

मराठी कोई दो भाषाएं हैं ऐसा भ्रम हुआ है तथा मराठों को हमारी पुरातन बोली है इससे हिन्दी भिन्न है ऐसा भ्रम हुआ है, अब जो मैं आपको बताऊं कि हिन्दी यही हमारी मराठी भाषा का मूल स्वरूप है, तो आप भी शायद अपनी भाषा का हिन्दी यह जो ऊपर से प्राप्त हुआ नाम वर्तते हैं सो दुरभिमान छोड़ के इसको महाराष्ट्री कहेंगे क्योंकि सच तो यह है कि हिन्दी नाम में कुछ भी विशिष्ट अर्थ नही है जिससे अपना पुरातन ऐतिहासिक सत्य बन्धुत्व सम्बन्ध सिद्ध हो।

५ मराठी का मूल रूप ।

अब मैं आप को दिखलाता हूं कि मराठी का मूलरूप हिन्दी से भिन्न नहीं है दो तीन वर्षों के पहिले मराठी में एक पुस्तक प्रकाशित की थी उसमें हिन्दी भाषा के विद्यमान या उपलश्य ऐसे शुद्ध मराठी शब्द की सूची दिखाई है वे शब्द सर्व सामान्य मनुष्य जाति की मूलावस्था में, की समाज घटना, घ व्यवहार व गृह्य सम्बन्ध, धर्माचार विषयों के मराठी शब्द ऐसे एकत्रित कियेगए हैं कि जिन भाषाओं के ऐसे शब्द एक रूप हैं उन भाषाओं का भिन्न नाम होना अशक्य है । ऐसा स्पष्ट दीख पड़ेगा कि जो शब्द मैंने संग्रह किया वे इन विषयों के हैं। जैसे खेती, हवा पानी, काल मान, जातिवृत्ति, वृक्षवनस्पति, तज्जन्यद्रव्य, खानिज द्रव्य माप, संख्यागणित, सामाजिक सम्बन्ध, तिर्यग्जाति, कृमि कीटक, वेश सामान्य खाद्य पेय, भूमि रूपवर्णन, वसति औजार, हथियार, रंगरूप, अङ्ग विकार, देह रिस्तेदारी या बिरादरी, पदवी वाचक शब्द, अपशब्द, सर्वनाम अव्यय शब्द, विशेषण शब्द इत्यादि । इससे यह विदित होगा, कि इन विषयों पर जो लोक एकही रूप के शब्द व्यवहार में लाते हैं उनकी भाषा बल्कि उनका स्वतः का मूल तथा उत्पत्ति स्थान भिन्न नही हो सकते हैं। यह संग्रह दो ढाई सौ शब्दों का है। यह पुस्तक विद्वानों में वितरित की गई है (एक प्रति नागरीप्रचारिणी सभा के सेक्रेटरी साहब को मैंने अभी दी है) व उसपर कई एक विद्वानों ने मेरा सिद्धान्त बिलकुल मान लिया है। सरकार ने यह पुस्तक पाठशालाओं की लाइब्रेरी में संग्रह के लिये मंजूर किया है। इस समय उक्त पुस्तक के प्रशंसा के बताने की इच्छा नहीं है इस लिये क्षमा की प्रार्थना है किन्तु उसका सारांश जो यहां बतलाया जाता है उतने ही से सन्तोष कीजिए इसका सार यह है कि जो आप उन शब्दों को जान लेवेंगे तो आपको मालूम हो जायगा कि मेरी भाषा मूल में एकही है व वह मराठी है और तब स्पष्ट विदित हो जावेगा कि हिन्दी नाम का आपको अभिमान न रखना चाहिये और मुझे भी इस सिद्धान्त के मान लेने में कोई आपत्ति न रहेंगी कि हिन्दी यही मेरी मातृभाषा है उसका सत्य नाम महाराष्ट्री है।

शोध लगानेवाले लोगों के अभिप्राय से शौरसेनीक महाराष्ट्री भाषा पुरातन है क्यों कि महाराष्ट्री के प्रयोग उत्तरोत्तर पद्य में रह गए व शौरसेनीके गद्य में चकित रहें इससे यह प्रकट है कि महाराष्ट्री शौरसेनी का केवल आदि स्वरूप है जिससे भी आपकी हिन्दी को महाराष्ट्री कहने में कोई बाधा नही है। हिन्दी नाम को छोड़ के महाराष्ट्री ही उस भाषा का नाम रखना उचित है तौ भी यह आपके मर्जी के स्वाभिमान की व ऐक्यो-

नुष्य की बात है जैसा ठीक समझ पड़े वैसा कीजिये।

६ उसके उदाहरण।

ऊपर कहे हुए शब्दों का महत्व बतलाने के लिये मैं एक दो नूतन उपलब्ध उदाहरण देता हूं।

हिन्दी शब्द "पहिलौठा" प्रथम पुत्र (प्रसव) प्राकृत में इसका महाराष्ट्री स्वरूप "पुढिल्ल उत्तऊ" यह है, इसका संस्कृत "प्रथमः पुत्रः" ऐसा है। यहां इतनी सूचना देनी अवश्य है कि प्राकृत भाषा संस्कृत भाषा से नहीं निकली है। प्राकृत यह सामान्य जनकी नित्य प्रचलित भाषा का नाम है। हर एक भाषा में, हर एक काल में प्राकृत व संस्कृत ऐसे दो स्वरूप रहते हैं। विद्वानो की भाषा सदा संस्कृत रहती है। व्यवहार में अज्ञानजनकी भाषा प्राकृत रहती है, इसके विस्तार करने की जरूरत नहीं। परन्तु "पुढिल्ल उतऊ" यह महाराष्ट्री का आदि रूप है। "पुढिल्ल" पुढ़ इल्ल, इसमें पुढ़ व संस्कृत पृथम शब्द में "पृथ" इनका एकत्य है, मगर हिन्दी "पहिलौटा" यह महाराष्ट्री का शब्द है। मराठी में विद्यमान पृयोग में पृथम पृसूति प्राप्त हुई स्त्री को "पहिलट" "करीण" कहते हैं। "करीण" पृत्यय छोड़ के "पहिलट" और पहिलौटा एकही शब्द है इसका मूलार्थ हिन्दी में पृथम पुत्र और मराठी में प्रथम संतति का पृसंग या अवस्था विशेष है। हिन्दी में यह भी अर्थ होगा, मगर मरठी में पुत्र शब्द का विशिष्ट लिङ्गक अर्थ किसी को विदित नहीं है। इस शब्द में सामान्य सनतान का ही अर्थ हम समझते हैं इससे सिद्ध है कि हिन्दी में यह शब्द पुरातन काल से है वही मराठी में विद्यमान है। यह शब्द ऐसा है कि इसकी सक्रान्ति एक देश से दूसरे देश में होने की वाह्य कारणों की आवश्यकता नहीं है केवल एक ही भाषा व्यवहार करने वालों का देशान्तर होने से पृचलित भाषा भी संक्रात हुई है। यही तत्व निकला।

हिन्दी शब्द बत्ती। पंजाबी तरह से उच्चारण करने में जश् की जगह चट् करने की बहुत प्रवृत्ति है। वहन कहने से उच्चारण सुनने में पहन आवेगा। पंजाबी तरह से वत्ती का उच्चारण पत्ती होता है। मुल्तान की तरफ़ से मारवाड़ का महाराष्ट्री से प्राचीन सम्बन्ध था वह पंजाब से लगा हुआ रहा। पत्ती शब्द मराठी में चला आया मगर मराठी के और अपभ्रंश के रहने से इसमें भी अपभ्रंश हो गया बिच्छू को मराठी में "विंचू" पच को पंच, उच्च को उंच, मिति को मिन्त, वच्छरा को बांसरूं, ऐसे ही व्यंजन की जगह अनुस्वार होता है पत्ती शब्द का पन्ती ऐसा उच्चारण है पन्ती नाम कपड़े की बत्ती शब्द मूल रूप हिन्दी व मराठी में जब और अपभ्रंश हो के गया तब हिन्दी का शब्द पुरातन समझना चाहिये वह मराठी में रहने से मराठी, उस भाषा से भिन्न न समझा जाना चाहिये ऐसे आज भी मैं २५ तीस शब्द नये बताऊँ मगर उनका निर्वाचन विस्तार भय से न करूंगा। फ़क़त् उन शब्दों का भाषा पचार के विषय में संग्रहस्थान ध्यान में लाने से मूल में वे सब शब्द एक ही जगह के व एक ही जन समाज के हैं यह देख लिया जाय जैसा कि ग्वाल के धंधे के जोरण, मक्खण ऐसे शब्द। मराठी विरजण, माखणों, धर्म कर्म में उज्ञापन (उद्यापन) मानता (पंजाबी मानदा) (बँगला की तरह पर अकार का ओ सरीखा उच्चारण होने से मामदा,

मन्दा, भोन्दा ऐसे ही मराठी मावंदें अर्थ भी मूल से कुछ भिन्न व विस्तृत हो गया। स्वंयपाक विषय हिन्दी आधान, मराठी आखण; हिन्दी पोत (ना) मराठी पोते (रें); हिन्दी तिनका मराठी ठिणगी, हिन्दी पड़ी (अंभ्रिः सं;) मराठी इड़ी विड़ी (मुसकाची) अलंकारः–हिन्दी कंगनी (कंकन सं) मराठी कंकणी, इतर विषय–हिन्दी अंगूठा, मराठी अंगठा; हिन्दी पड़ोस (प्रतिवेशाः सं,) मराठी परूस; हिन्दी मनौती, मराठी मवुती, मनोती, हिन्दी पहिय, (पथिक सं,) मराठी पहि (पाहुला) इत्यादि। फिर भी यही विनती है जिन विषयों के ये शब्द उद्धृत किए गए हैं वे विषय ऐसे हैं कि जिनका प्रचार केवल साधारणजनसमाज की आद्य अवस्था में बन जाता है। ऐसे अकृत्रिम प्रचार के शब्द का सारूप्य उन समाजों का सात्म्य सिद्ध करेगा यह मेरा पूर्ण विश्वास है।

८ पुरातन ग्रन्थों की उपलब्धि।

मराठी के पुरातन ग्रन्थों में ज्ञानेश्वरी से पुरातन भाषा का महा ग्रन्थ नहीं है। यह बारह सौ शक के उपरान्त का है इसके पहिले के मराठी के प्राकृत ग्रन्थ उत्तर हिन्दुस्तान में भले ही मिलेंगे दक्षिण में नहीं मिलेंगे। मराठी का प्राकृत से सम्बन्ध समझने के लिये बम्बई के विश्वविद्यालय में रामरा के अध्ययनार्ह ग्रन्थों में गौड़वहादि केवल प्राकृत ग्रन्थ दिए हैं, मगर उनमें यह त्रुटि है कि हिन्दी के तेरहवें शतक के पूर्व के महाग्रन्थ मराठी भाषा के यथार्थ परिज्ञान होने के लिये शामिल नहीं किये गये। आज नहीं तो भविष्य में अविरात् इसका विचार विश्वविद्यालय को करना पड़ेगा ऐसा मेरा विचार है। मैं आशा करता हूं कि मेरे महाराष्ट्र भाई इसका विचार अवश्य करेंगे।

९ मराठी की व्याप्ति।

मराठी भाषा का विस्तार सिन्धी, पञ्जाबी, गुजराती, बङ्गला, उड़िया, कानाडी, तामिल मल्याल पर्य्यन्त है। हिन्दी का विस्तार सिन्धी, पंजाबी, बंगाली उड़िया, गुजराती इनकी सीमा तक है। मध्य हिन्दुस्तान बहुत सा हिन्द का है। मध्य व पश्चिम दक्खण मराठी का है। मराठी व हिन्दी कोनों का अतिशय मिलाप नर्मदा तीरके आस पास है। गुजराती व मराठी, का बहुत ही निकट सम्बन्ध है व बहुत सा रूप एकही समझा जावेगा। एवंच प्रचलित मराठी व प्रचलित हिन्दी इन दोनों में हिन्दुस्तान देशका सबही मध्य बट गया है। इसकी हद्द उत्तर में पंजाब व हिमालय, पूर्व में बंगाल, दक्षिणमें कटक से नीचे मद्रास व कर्नाटक व मलाबार, पश्चिम में गुजरात व सिन्धगुजरात भिन्न न समझीजाय तो सिवाय कुल देश इन्हीं का ही हुआ।

इसके आद्य नाम महाराष्ट्रीका अनुवाद किया तो हिन्दी नाम उत्तर महाराष्ट्री का व मराठी नाम दक्षिण महाराष्ट्री का ऐसे ही स्वरूप व्यक्त होवेंगे।

१० महाराष्ट्री व अर्वाचीन प्रचलित भाषा।

अब कदाचित ऐसा प्रसंग उपस्थित होवेगा कि बंगला, पंजाबी या गुजराती, इन भाषाओं के बोलने वाले ऐसाही सिद्धान्त अपनी अपनी भाषाओं के बारेमें कर सकेंगे कि हिन्दी नाम निराधार है। व अर्थ शून्य है, जिस भाषा को यह नाम दिया

गया वह मूल बंगला ही है या पंजाबी ही है इत्यादि। इसका उत्तर यह है कि यह विरोध नहीं है। केवल पुरातन नाम महाराष्ट्री है उसीके भिन्न भिन्न रूपके नाम पंजाबी, बंगाली, सिन्धी इत्यादि हैं। इन सभोंका समिष्ट रूप से पुरातन काल में " हिन्दी " यह नाम भ्रम से लगाया गया मगर महाराष्ट्री यही ग्रन्थाधार से इस सरुमष्टि भाषा का नाम है यह अपनी अपनी भाषा के शब्दों की व्युत्पत्ति देखने से पूरा ध्यान में जच सकेगा। अब रहा झगड़ा उर्दू का।

११ उर्दू।

उर्दूकी व्युत्पत्ति दोनों समाजों में प्रचलित भाषा हिन्दू और मुसलमान दोनों की भाषा। उर्दू को हिन्दुस्तानी भी कहते हैं। उर्दूको हिन्दी नाम न देनेका आक्षेप यही है कि उसमें फ़ारसी व अरबी ऐसे विदेशी शब्द व्यवहार किये जाते हैं। उर्दूके पक्षमें मैं यह कह सकताहूंकि इस भाषा में के फ़ारसी शब्द संस्कृत के परकीय न होने से हिन्दी में भी मिल सकते हैं। केवल अरबी शब्द बहुत परकीय मालूम होंगे। ये बहुत न हों तो उर्दू शब्दों से हिन्दी का भांडार भर लिया जाय इसमें कुछ अड़चन नहीं मालूम होगी। बल्किकुछ शब्द मैं इसी प्रसंग में बता सकूंगा कि जो उर्दूमें प्रचलित हैं और संस्कृत से बहुत दूर तक नहीं गए; केवल अपभ्रंस के नियमानुसार प्राकृत रूपके ही हैं। असल फारसी संद शब्द भाषाके कुल संस्कृत धातुओंसे सम्बन्ध है ऐसा अंदाज है। उर्दूका उदाहरण यह है। उर्दू शब्द—चूंके, बल्कि, बल्द, शायद, चूं, शब्द किम् शब्द का अपभ्रंस है, जिसकी जगह चकार का शकार व सकार होके शूं या सूं शब्द गुजरात में प्रचलित हो गया। " बल्कि " यह केवल संस्कृत शब्द है, अपरं किम् (और क्या) अवरं, किं, वरंकी वरकि बलकि बल्कि, ऐसी इसकी सिद्धि है। वल्द यह शब्द वृद्ध शब्दके इतना समीप है, कि यह मूलमें वृद्ध ही मालूम होता है। शायद यह संस्कृत अस्धातुके विधि लिङ् प्रथमपुरुष का एक वचन स्यात् यह ही है। इसमें मुझको कुछ भी शंका नहीं है। अरबी छोड़के उर्दू भाषा हिन्दीको परकीय मालूम न होनी चाहिये। यह शब्द व्युत्पत्ति शास्त्र से सिद्ध हो सकेगी। फारसी व संस्कृत दोनों का अभ्यास जिन्होंने किया है उनको दुख्तर, खोदा, अहुर, इत्यादि का दुहितर, स्वतः (ईश्वर स्वतंत्र है) असुर इत्यादि शब्दों से साम्य-ध्यान में आता ही है किंबहुना " लफ़ज " शब्द जोयकार की जगह पर नकार आने से हुआ होगा तो लपू धातु से दूर नहीं है॥

१२ हिन्दी का महाराष्ट्री पन।

अस्तु न मैंने अपनी शक्तिके अनुसार बता दिया कि हिन्दी यह नाम एक धोखे में उत्पन्न हुआ। महाराष्ट्री यही नाम इस भाषा का है। इसके नाम के प्रचार में दोष नहीं है और इणापत्ति अधिक है, परन्तु इसको मराठी नाम दियाजाय यह मैं कदापि नहीं चाहता हूं। महाराष्ट्री यही नाम चाहता हूं और इसके प्रचार कराने का अधिकार जिनका है उनके सामने फिर भी उस बातको मैं पेश करूँगा परन्तु मराठी का रूपान्तर मूल महाराष्ट्री से बहुत प्रकारों से हुआ है। उसमें बंगाल, गुजरात व उक हिन्दी का मिलान बहुत है। इसके

मूल शब्द हिन्दी के हैं । वर्णोच्चार गुजराती ढंग का है, उनमें भी अकार का उच्चार अनेकशः बंगला ओं सरीखा है। ऐसी मराठी यह भाषा वाह्याकार में स्वतंत्र है। परन्तु मराठी, बंगला, पंजाबी, गुजराती, सिन्धी अथवा प्राकृतीय सब भाषाएं मूलमें महाराष्ट्री के ही स्वरूप को धारण करती हैं इसमें सन्देह नहीं। महाराष्ट्री यह राष्ट्रीय भाषा ही है। इसके नाम को ही केवल जाहिर करने से उसका राष्ट्रीयत्व सिद्ध है। बल्कि उसका महाराष्ट्रीयत्व सिद्ध करनेको महाराष्ट्री यही नाम उपयुक्त होगा। मैंने कहा ही है कि मराठी यह नाम में महाराष्ट्री से अलग रखना चाहता हूँ ।

शब्द व्युत्पत्ति शास्त्र से, सब प्रान्तों में अपनी अपनी भाषा का मूलान्वेषण करने से, इस विषय में कितनी सहायता होगी । यह मैं प्रकट कर चुका हूं। यह महाराष्ट्रीय भाषा का स्वरूप सब ओर से जब प्रकट होगा, तब इसका समष्टि रूप पूरा दृष्टिगोचर होगा यह यत्न मेरे देश भाई करें यही मेरी प्रार्थना है।

१३ मराठी में हिन्दी का प्रचार।

अब इस विषय का मराठी की ओर से अवशिष्ट अङ्ग रहा है उसका विचार करता हूं । मुसल्मानों को वसती के विस्तृत होने से व मुसल्मानी राज्यधिकार जारी रहने से, उर्दू फारसी का दक्षिण में प्रचार शुरू हुआ । उसमें शब्द संग्रह बहुत हुआ, मगर वह सर्वसाधारण में प्रचलित हुई केवल राज काज ही में रही किन्तु इस उत्तर भाषा की विभक्तरूप, क्रिया पद के रूप इत्यादि प्रत्यान्त रूपके प्रकारका परिचय, मराठी भाषा बोलने वालों में थोड़ा बहुत हो रहा।

कुछ शब्द लाघव तथा बलीदानि के हेतु लिये गए जैसे, तेरी, मेरी, चाड, वे, आवे, जावे, वृद्ध बचन, जैसे, " सोवेगा सो पावेगा " " बाप मरेगा बैल वटेगा " इत्यादि वचनों का आपान से संग्रह होता है। व्यवहार में मुसल्मानी बस्ती के सांनिध्य होने से कई जगह भाषा भी थोड़ी प्रचार में है । बड़े बड़े स्थानों में यह परिचय अधिक है। गांवों में व्यवहार कम हैं। तो भी एक दिशा से हिन्दी भाषा, मराठी देश में, कल्पना से ऊपर प्रचलित है व ऐसा प्रचार सर्व हिन्दुस्तान में है ऐसा अनुमान किया जा सकता है । मुसल्मानी भाषा प्रचार में अधिक होने से, हमारे देशमें जो ईश्वर प्रेरित धर्मोपदेशक हो गए, उनमें जिसने हिन्दी का उपयोग नहीं किया ऐसा क्वचित ही कोई होगा। इनमें प्रथम दर्जेके संत एकनाथ, तुकाराम, अमृतराय, सोहिरोवा, रामदास, इनके हिन्दी पद्य प्रसिद्ध हैं। क्वचित कवियों ने स्फुट प्रयोग किए हैं जैसे मारोपंत कवि की " उर्मी पकड़ो लियो हका घे विसला भितर भाग जावेगा " पाठशाला के विद्यार्थियों को परिचित है। इसके सिवाय हमारे हरिकीर्तन करनेवाले हरिदास लोग, हिन्दी का बहुत उपयोग करते हैं । कबीर, मानपुरी, मीराबाई, तुलसीदास, सूरदास इत्यादिकों के पद मराठी बोलनेवालोंको बहुतेरे परिचित हैं। गवैये तो हिन्दी ही भाषा के गीत गाते हैं। जिसमे कि सुलभ रचना की भाषा कुछ अंशमें समझ आ जाती है। मुसल्माम फकीरों का भी इस पक्षसे कुछ उपकार है, कि अन्धे सुलभ सवाल उनके मुखसे श्रवण होते हैं।

तात्पर्य्य यह है कि मराठी देशके हृदय स्थान

जो पूना सतारा है वहां भी हिन्दी का इस तरह से बहुत प्रवेश है। जिससे मैं समझता हूं कि हिन्दी कुछ परकीय भाषा सी मालूम न होवेगी।

१४ मराठी देशमें हिन्दी का भविष्य प्रचार।

अब इतना ही विचार रहा कि हिन्दीका प्रचार या विस्तार कितना व किस तरहसे होना चाहिए। आजकल पाठशालाओं में अभ्यास के भेद व विस्तार पहिले ही बहुत हो रहे हैं; इसमें हिन्दी का प्रवेश करना कुछ श्रम अधिक लेगा मगर किसी और से अभ्यास कम करके इसके लिये भी जगह खाली रखनी पड़ेगी। क्यों कि हिन्दी की राष्ट्रीय उपयुक्ततामें अब कुछ शंका अवशिष्ट न रही। क्रम व विस्तार का बिचार विद्यमान शिक्षण क्रम पर रहेगा। वह मराठी पाठशालाओं में हो इतना हो रक्खा जाय तो ग्रन्थ पठन की स्फूर्ति होने से; विद्यार्थी लोग पश्चात् स्वयं ही पठन करने लगेंगे। ऐसा कोई उपाय देश कालानुरूप होना चाहिए और होनेमें दिक्कत नहीं पड़ेगी ऐसी मेरी आशा है॥

१५ नागरी लिपि।

हिन्दी के राष्ट्रियत्व के प्रश्न की चर्चा हो गई अब देवनागरी लिपि के आप विस्तरकेलिएकथन करूंगा। हिन्दी व मराठी की लिपि एक ही है मराठीकी ओर से कुछ कहना नहीं चाहिए कि मराठी देश में वही ही प्रचलित की जावे। मराठी लिपिका मोड़ी नाम एक भिन्न स्वरूप है। इसके अक्षर बंगाली कैथी, गुजराती से बहुत मिलते हैं। मगर लिपि एक होने से व्यवहार में सुविधा होगी इसलिये बालबोध नाम नागरी का ही प्रचार सार्वत्रिक होना युक्त मालूम होता है।

१६ उपसंहार।

मैंने आपका बहुत समय लिया और आपको श्रम दिया है, मगर हिन्दी का महाराष्ट्रीयत्व सिद्ध करना कि जो सत्य व अबाधित है यह मैंने अपना कर्त्तव्य समझ लिया है और अपनी बुद्धिके अनुसार आपके आगे सादर समर्पण किया। अब मैं उपसंहार करता हूं केवल इतनी ही एक बात मुझे स्पष्ट स्पष्ट कहनी चाहिए; कि इस चर्चा से ऐसा समझा जाय कि मेरी अर्वाचीन मातृ भाषा मराठी पर मेरा कुछ न्यून प्रेम है। हमारी मराठी देशकी मराठी भाषा परिपक्व; गंभीर व अपने प्रचलित विषयों से पूर्ण है। केवल आधुनिक शास्त्र विशेष के शब्द उसमें नूतन बन रहे हैं जो सभी प्राकृतीय भाषाओं में बनकर परस्परोपकार हो रहे हैं परन्तु मूलावस्था में हमारी आधुनिक मराठी भाषा इतनी भरी पूरी है, कि भाषाके ग्रन्थोंसे जो किसीको शान्ति व सनातन सुख मिलना शक्य होगा। तो वह मराठी ग्रन्थों से पूरे प्रकार से हो सकेगा ऐसा मुझको प्रबल विश्वास है मराठी शब्द मेरे श्रवणको अत्यन्त मधुर लगते हैं और लगते रहेंगे। तौ भी हिन्दी कि जिसको फिरभी मैं महाराष्ट्रीय भाषा कहूंगा, इसका स्वरूप परिचित करके उसके श्री ग्रन्थोंके शब्द स्वरूप व उनके अर्थामृत का आस्वाद लेनेसे उनमें अपनी मातृभाषा ही और शुद्ध अवस्था को प्राप्त हुई देखकर मुझको अधिक संतोष होवेगा।

इसके ऊपर जो मैं बहुत ही भारी फल समझता हूं वह यह है, कि आप मेरे भाइयों, जो मुझको किसी परदेशी आदमी के प्रमान समझते

होंगे; वे मेरी भाषा व आपकी भाषा एक है। व आप के पास उसका मूल शुद्ध स्वरूप बिम्बभूत है व मेरे मराठी भाइयों! यह समझ कर एक भावसे स्वकीय समापास उसीका प्रतिबिम्ब स्वरूप सब मराठी भाइयों को न समझेंगे व दक्षिण और उत्तर का बन्धुभाव से परस्पर ऐक्य करनेमे कभी न्यूनता न करेंगे अंत में यही मेरी बहुत प्रार्थना है।

इस प्रस्ताव का समर्थन ब्यावर के सेठ दामोदरदास राठी ने भी किया और कहा कि हमारे देश की दशा एक चिड़ियाखाने के समान है जिसमें भिन्न भिन्न जात की चिड़ियां अपनी अपनी भाषा में बोलती हैं और यद्यपि वे एक दूसरे को भली भांति नहीं समझतीं तथापि उनका निवास स्थान एकही देश है। यदि हमारी यह इच्छा है कि इस देश के भिन्न भिन्न प्रदेशों के वासी एक दूसरे की बात को समझ सकें तो हमारे लिये उक्तराष्ट्र भाषा का होना नितांत आवश्यक है। अन्त में इस सम्बन्ध में विशेष युक्तियुक्त प्रमाण देते हुए उन्होने कहा कि इस कार्य में बड़े बड़े विद्वानों का अतुलनीय परिश्रम हो रहा है जिससे इस कार्य के सिद्ध होने में कोई संदेह नहीं है।

इसके अनन्तर लाहोर के महाशय धर्म्मपाल ने भी एक सारगर्भित व्याख्यान द्वारा इस प्रस्ताव का समर्थन किया। उनके कहने का शारांश यह है-

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि जिस देश में एक साधारण (राष्ट्र) भाषा नहीं है वह देश वास्तविक उन्नति नहीं कर सक्ता। एक देश में जहां की भाषा एक नहीं है परस्पर विचारा और मनोभावों का परिचय नहीं हो सकता इसलिये वहां उन्नति के मार्ग में अनेक कठिनाइयां हैं। चिड़ियों और जानवरों में भी एक भाषा का प्रचार है। जहां उनके किस्म में भेद होता है वहां भाषा में भी भेद होता है। पर यह दुःख की बात है कि मनुष्य की एक किस्म होने पर भी भिन्न भिन्न प्रान्तों में वे भिन्न भिन्न भाषाएं बोलते हैं। आजकल हमलोग अँगरेजी के द्वारा अपने भावों और विचारों को परस्पर एक दूसरे पर प्रगट करते हैं। यदि हमारे देश की एक भाषा होजाय तो हमारा देश पुनः प्राचीन आर्यावर्त हो जाय। जब तक भावों और विचारों का देश में विशेष प्रचार न होगा सर्व साधारण की उन्नति न होगी क्योंकि यही लोग जाति के आधार हैं। अँग्रेजी फरासीसी या लैटिन आदि भाषाएं हमारे देश की राष्ट्र भाषा नहीं बनसकतीं यदि कोई इस आसन पर शुशोभित हो सकती है तो वह हिन्दीही है। पंजाबी लोग बड़े सीधेसादे हैं अतएव उनकी भाषा भी वैसीही है। जहां आप चाकू, हाथ, कान, लिखदा, कीचड बोलते हैं वे काचू, हथ्थ, कन्न, लिखदा, और चिक्कड कहते हैं। पंजाबी भाषा में आर्य भाषा, तथा संस्कृत भाषा के शब्द तोड़ फोड़ कर रक्खे गए हैं। पंजाब में उर्दू को तोड़ फोड़ कर आर्य भाषा में मिलाने का उद्योग किया जा रहा है। आर्य समाज के उर्दू पत्रों में आर्य भाषा के शब्द फारसी या उर्दू के शब्दों की अपेक्षा अधिक पसंद किए जाते हैं। इसलिये चारो ओर यह शिकायत हो रही है कि आर्यसमाजी उर्दू का नाश कर रहे हैं, परन्तु वास्तव में वे राष्ट्र भाषा बनानेका उद्योग कर रहे हैं। मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि विदेशी शब्द छोड़ दिए जायं। अपनी भाषा के भंडार को भरने के लिये हमें विदेशी भाषाओं से शब्द लेने

चाहिये, हां, उन्हें अपने ढंग पर ठीक करलेना चाहिये, इससे हमारी भाषा दिनोदिन प्रौढ़ होती जायगी और वह समय आकर सब प्रकार के भावों के प्रगट करने में समर्थ होगी।

अन्त में यह प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ

आठवां प्रस्ताव।

राय साहब पंडित चन्द्रिकाप्रसाद त्रिपाठी ने आठवां प्रस्ताव जो इस प्रकार है उपस्थित किया।

"इस सम्मेलन के विचार में सर्कारी स्टाम्पों और सिक्कों में नागरी अक्षरों का प्रयोग होना आवश्यक और लाभदायी है और यह सम्मेलन गवर्मेण्ट से प्रार्थना करता है कि वह इस विषय पर विचार कर नए बननेवाले सिक्कों और स्टाम्पों पर उनके मूल्य तथा सम्राट का नाम नागरी अक्षरोंमें अंकित किये जाने की आज्ञा दे उन्होंने कहाः—

प्रिय सज्जनो!

अब मुझको एक बार फिर आपके सन्मुख भाषण करने का सौभाग्य मिला है और जिस विषय पर मैं अब बोलता हूं वह ऐसा है कि उसको सब जन पसंद करेंगे, केवल हमारे सभासदही नहीं किंतु बाहर के भी, मुझको पूर्ण आशा है कि हमारी दयालु सर्कार भी इसे सहर्ष स्वीकार करेगी वह प्रस्ताव इन शब्दों में है:—

"सम्मेलन के विचार में सर्कारी स्टाम्पों और सिक्कों में नागरी अक्षरों का प्रयोग होना आवश्यक और लाभदायी है, अतः यह सम्मेलन गवर्नमेंट से प्रार्थना करता है कि वह इस विषय पर विचार कर नये बनने वाले सिक्कों और स्टाम्पों पर उनके मूल्य तथा सम्राटका नाम नागरी अक्षरोंमें अंकित किये जाने की आज्ञा दे।

प्रिय महाशयो, आपको विदित है कि हमारे देशवासी विशेष कर ग्रामीण जन हमारे राजराजेश्वर के नाम को नहीं जानते हैं, मेरी समझ में सर्कार भी इसको आवश्यक समझगी कि सम्पूर्ण प्रजागण अपने शाहंशाह का नाम अच्छी तरह से जानें। इस ज्ञानको सर्वत्र प्रजा में फैलाने के लिये कोई ऐसा सरल वसीला नहीं है जैसे कि सिक्के और स्टाम्प हैं। ये दोनों संपूर्ण प्रजा के हाथों में नित्य आते जाते हैं और इस ज्ञान को पूरी रीति से सर्वत्र प्रकाशित कर देंगे। इस विचार से मैं पूर्ण आशा करता हूं कि हमारी दयालुसरकार इस प्रार्थना को अवश्य स्वीकार करलेगी।

मेरी अल्प बुद्धि में दोष हम लोगोंही का है जो इतने समय तक हमने सर्कार को इस विषय में सूचना नहीं दी। बृटिश राज्य ने सिक्कों पर देश भाषाओं का रखना इस देश में शुरू सेही आवश्यक माना है। क्योंकि ईस्टइंडियाकम्पनी के सिक्कों पर हिन्दी उर्दू बंगला वगैरह के लेख पाये जाते हैं, कोर्टफीके स्टाम्पों पर भी अकसर रकम हिंदी में पाई जाती है। अब भी जो सन् १९०७ ई० से सर्कार ने निकल धातु की एकअन्नी चलाई है उसपर अंग्रेजी के साथ हिंदी, बंगला, उर्दू और तेलगू अक्षरों में मूल्य अंकित है।

मुसलमान बादशाहों में मुइज्जुदीन महम्मद-बिन साम (सन् ११९३ ई०) से लेकर महम्मद आदिलशाह (सन् १५५३ ई०) तक के सिक्कों पर बादशाहों के नाम वगैरः हिंदी में रहते थे जैसा कि *Edward homas* साहब ने *the chrmicbs the Pathan Kings of Delhi* नामक पुस्तक में दिखाया है। उन बादशाहों के असली सिक्के भी

मेरे पास और अनेक अजायब घरों में तथा अन्य सज्जनों के पास मौजूद हैं उनपर हिंदी अक्षर साफ़ देखने में आते हैं।

मैं आशा करता हूं कि गवर्नमेंट हमारे इस मंतव्य को बड़ी खुशी से स्वीकार करेगी क्योंकि यह विचार गवर्नमेंट और प्रजा दोनों के लिये आवश्यक और लाभदायक है।

आगरे के पंडित रुद्रदत्त ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहाः—

मैं इस समय कोई विस्तृतवक्तृता देने के अभिप्राय से आप लोगों की सेवा में उपस्थित नहीं हुआ हूं वरन् इस समय मेरा निवेदन यही है कि हिन्दी भाषामें प्राचीनकालसे भी अन्यान्य भाषाओं (अर्थात् भिन्न भिन्न प्रान्त और देशों का) सम्मेलन होता चला आया है परन्तु इस मेल जोलसे हमारी भाषा का नाम और रूप न कभी पहिले बदला और न अब बदल सक्ता देखिये इस पद्य में कितनी भाषाओं का समावेश कवि ने किया है।

" मारग में कतगंकतकान्ह कहा यह चाल कुचाल तैं टानी। मांगै छै दान तमारो छै कान्ह जी इंका हृदां की नथं बात जानी। छन्दी विछन्दी गुमानी गुमानदा अक्खेंदा थिक्खेंदा जिन्द जहानीं। मोहि संग टनगन करत फिरत कम-महिकन्म सिखवत कसरत ठानी॥"

इस पद्य में बैसवाड़ी पंजाबी और गुजराती आदि प्रान्तिक भाषाओं के मिलजाने पर भी रचना सौन्दर्य्य और हिन्दीपना विनष्ट नहीं हुआ है ऐसेही हिन्दी के जिन निबन्धों में फारसी वा अंग्रेजी शब्दों का समावेश हो जाना है उनको किसी अन्य भाषा का लेख या निबन्ध कहना सरासर भूल और भ्रम है क्योंकि हिन्दी भाषा की सौभाग्यवती सीमा को संकुचित करना कदापि उचित नहीं है।

सभ्यवृन्द! इस समय मैं जिस प्रस्ताव को पुष्ट करने के वास्ते आपके समक्ष उपस्थित हुआ हूं वह प्रस्ताव मुद्रा विषयक है अर्थात् हमारे राजराजेश्वर प्रजा पालक पंचमजार्ज के नाम से जो नवीन मुद्रा प्रस्तुत होने वाली है यह सम्मेलन चाहता है कि उन मुद्राओं में "एक रुपया" यह शब्द नागराक्षरों में अङ्कित रहै क्योंकि मुगल सम्राटों की मुद्राओं में भी नागराक्षरों और हिन्दी भाषा का समावेश पाया जाता है।

इस परमावश्यक प्रस्ताव का अनुमोदन करने में मैं इतना अवश्य कहूंगा कि सौभाग्य से हम उत्पन्न नहीं हुए कि जहां की प्रजा अपने राजा के राजत्व को विध्वंस करके सब राज्य को स्वयं हजम कर लिया करती है। हम लोग ईश्वर की कृपा से ऐसे देश में उत्पन्न हुए हैं कि जहां की प्रजा अपने राजा को ईश्वरवत् मानती है राजा के दर्शन और उसके नाम कीर्त्तन को देव दर्शन और देवकीर्त्तन समझती है अतएव भारत की नवीन मुद्रा में केवल "एक रुपया" ही नागराक्षरों में न रहना चाहिये वरन् राजराजेश्वर का नाम भी नागराक्षरों अङ्कित करना उचित है।

भारत वर्ष एक ऐसा विस्तृत भूमि भाग है कि जिसमें अनेक स्वतंत्र भाषा और अक्षर प्रचलित हैं मन्द्राज प्रान्तके एक भाग में अरवी (*Arui but hot arbi*) भाषा बोली जाती है जिसके विषय में यही कहा जाता है कि यह भाषा किसी दूसरी भाषा से नहीं निकली जान पड़ती। यह स्वतंत्र

भाषा है एकबार मुझे कलकत्ते से दक्षिण हैदराबाद को आने का अवसर प्राप्त हुआ था, जब मैं वालटेर स्टेशन पर पहुंचा तो वहां एक मनुष्य को उच्चस्वर से यह वाक्य उच्चारण करते सुना, पिछली रात्रि का समय था मैं कुछ जंभित अवस्था में ग्रस्त था इस्से उसके हाथकी ओर मेरी दृष्टि न गयी अतएव मैंने हिंदी भाषा में पुंछा कि क्या कहता है तब उसने उत्तर दिया कि "यशवेडवन्धम्" अब तो मैं और घबड़ाया कि हे परमेश्वर! क्या मैं किसी दूसरे द्वीप में आगया परन्तु मेरी यह घबड़ाहट स्वल्पही काल में निवृत्त हो गयी जब अगले स्टेशन पर वैसीही भाषा वाले एक सज्जन मेरे पास आके बैठे तो मैंने उन से नागराक्षरों में संस्कृत वाक्य लिखके अनेक बातें पूंछी और वह भी नागराक्षर और संस्कृत वाक्यों में स्पष्ट उत्तर देते रहे इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि नवीन मुद्राओं पर नागराक्षरों में राजराजेश्वर के नामका अङ्कित रहना समस्त प्रान्तो के वास्ते लाभकारी है और भाषा तथा फारसी अक्षरों में रहने से केवल पंजाब्य वालेही पढ़ सकेंगे अन्य सब बंचित रहजायंगे अतएव मैं अनुमोदन करता हूं कि मुद्रापर नागराक्षर अवश्य रहने चाहिये । और वह सर्व सम्मति से स्वीकार हुआ तथा यह भी निश्चय हुआ कि सभापति महाशय सम्मेलन की ओर से भारत गवर्नमेंट के पास एक तार इसी समय दें कि इस निश्चय के अनुकूल प्रार्थना करें।

नवां प्रस्ताव।

प्रयाग के पंडित मन्नन द्विवेदी बी. ए. ने नवां प्रस्ताव जो उपस्थित किया।

माननीय सभापतिजी और सज्जन गण!

मैं सहर्ष, सादर तथा सविनय आपके सन्मुख प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन का नवां प्रस्ताव उपस्थित करता हूं। प्रस्ताव इस प्रकार है।

"यह सम्मेलन युक्त प्रान्तकी प्रान्तीय कान्फ्रेंसों तथा भार्गव, भूमिहार, राजपूत, ब्राह्मण आदि जातीय कान्फ्रेंसों के नेताओं से प्रार्थना करता है कि वे लोग अपनी २ कान्फ्रेंसों का काम हिन्दी भाषा में करें और अपनी जाति में हिन्दी का ब्यौवहार बढ़ाकर इस प्रकार हिन्दी के राष्ट्र भाषा बनाने में सहायता दें।

यह सम्मेलन देशी जमींदारों और व्यापारियों से प्रार्थना करता है कि वे अपने कागज पत्र हिन्दी भाषा और नागरी अक्षरों में रक्खें और अपना सब व्यवहार उसी भाषा और लिपि में किया करें।"

प्रस्ताव के प्रथम भाग में युक्तप्रान्त कीं भिन्न कान्फ्रेंसों के नेताओं से प्रार्थना की जाती है, कि वे अपनी अपनी सभाओं से कार्रवाई हिन्दी भाषा में करें। हिन्दीमें कार्रवाई करनेसे न केवल हमारी दुखिनी मातृ भाषा हिन्दी के राष्ट्र भाषा बनने में सहायता होगी बल्कि जिस उद्देश्य से वे कान्फ्रेंस होती हैं उसकी भी बहुत कुछ पूर्ति होगी।

इन कान्फ्रेंसों की कार्रवाई एक विदेशी भाषा में होने का परिणाम यह हुआ है कि हमारे अधिकांश भाई इनका नाम तक भी नहीं जानते हैं।

सज्जनगणः—

आप जानते हैं कि किसी विदेशी भाषा का पण्डित होना कितना कठिन है। इस बात के समर्थन के लिये मैं एक योरोपीय विद्वान का दृष्टांत देता हूं। मैकडानल्ड साहब संस्कृत के एक बड़े

विद्वान् समझे जाते हैं । आपने अपनी पुस्तक "संस्कृत साहित्य का इतिहास" (*History of the Sanskrit literature*) में लिखा है कि भरत ने रामचन्द्रजी का सुनहला जूता (*Golden Shoe*) लेकर तपस्या किया। एक साधारण हिन्दू बालक भी जानता है कि भरत ने श्रीरामचन्द्रजी का चरण पादुका लेकर तपस्या की थी न कि सुनहला जूता।

ऐसे ही और भी दृष्टान्त दिये जा सकते हैं । मेरा मतलब परम श्रद्धास्पद विदेशी विद्वानों का दूषण दिखलाना नहीं है । उपर्य्युक्त बातों से मैं सिर्फ यही दिखलाना चाहता हूं कि किसी भी विदेशी भाषा का उपयुक्त ज्ञान लाभ करना बड़ा कठिन है।

आप जानते हैं कि योरोपीय लोग हमसे अधिक परिश्रमी और धनवान् होते हैं। जब उनको हमारी मृतक भाषा (जो बोली नहीं जाती है) संस्कृत के पण्डित होने में इतनी कठिनाई पड़ती है तो हमको अंग्रेजों की सजीव भाषा अंग्रेजी में पाण्डित्य लाभ करने में कितनी अधिक कठिनाई पड़ेगी। सजीव भाषा के नियम तथा शब्दों के अर्थ बदला करते हैं, इसलिये उसमें योग्यता उत्पादन करना एक विदेशी के लिये प्रायः असम्भव सा है।

यही कारण है कि प्रायः दो सौ वर्ष हमको अंगरेजों के साथ रहते हो गये किन्तु हम मे एक भी ऐसा अंगरेजी विद्वान् नहीं हुआ जिसका नाम शेक्सपीयर, मिल्टन, बर्क और मेकाले के नाम के साथ लिया जा सके।

बंग भाषा के प्रातस्मरणीय कवि माइकल मधुसूदनदत्त बहुत दिनों तक बंगला से सर्वथा अनभिज्ञ थे किन्तु अंगरेजी से उनको बड़ा प्रेम था। बालक मधुसूदन की अंगरेजी कवितायें इंगलैंड के पत्रों में प्रकाशित होती थी । दत्त महाशय को जगतविख्यात कवि होने की उत्कट लालसा थी और उनको आशा थी कि अंगरेजी से यह काम सिद्ध हो जायगा । किन्तु अन्त में उनको अपनी भूल मालूम हुई। जिस प्रकार लड़का जब प्रचण्ड धूप में दौड़ते दौड़ते थक जाता है तो क्षुधा, पिपासा से अपनी रक्षा करने के लिये माता की गोद की शरण लेता है वैसे ही मधुसूदन जी ने अपनी सर्वोपरि लालसा, अपने जीवन के एक मात्र मनोर्थ की पूर्ति के लिये मातृ भाषा बंगला की शरण ली और "मेघनाद वध" ने उनका नाम अमर कर दिया।

ऐसी दशा में हम अपने कान्फ्रेंसों की कार्य्वाई एक ऐसी भाषा में क्यों करें जिससे हमारा जन समुदाय सर्वथा अनभिज्ञ है और जिसमें हमारे शिक्षित लोग भी अधूरे हैं।

कान्फ्रेंसों की कार्य्वाई ही अंगरेजी में करने के प्रतिकूल एक और भी बात है । विदेशी भाषा के शब्द, उसके भाव तथा दृष्टान्त हमारे हृदय पर वह प्रभाव नहीं डाल सकते हैं जो मातृ भाषा के चिरपरिचित तथा हृदयग्राही वाक्य तथा उदाहरण।

सज्जनगण !

क्या नेल्सन या वेलिंगटन के नाम आपके हृदय को उतना आकर्षित कर सकते हैं जितना राम, कृष्ण, गौतम और वशिष्ठ के ? क्या फ्लारेन्स नाईटैंगिल का उदाहरण हमारे करोड़ों भाईयों को उतना मुग्ध कर सकता है जितना सीता और सावित्री के चरित्र ? हर्ष की बात है कि कान्यकुब्ज

तथा भूमिहार आदि कान्फ्रेंसें अब भी अपनी कार्रवाई हिन्दी में करती हैं। आशा है कि दूसरी कान्फ्रेंसें भी शीघ्र इनका अनुकरण करने लगेंगी।

प्रस्ताव के दूसरे भाग में सेठ साहूकार तथा जमीदारों से प्रार्थना की जाती है कि वे हिन्दी भाषा और नागरी लिपि का व्यवहार करें। आप जानते हैं कि ये लोग इस समय या तो फारसी लिपि का व्यवहार करते हैं या महाजनी लिपि का फारसी लिपि के अगणित अवगुणों के कहने की मुझ में शक्ति नहीं है। शायद शेष भगवान् भी उनको भली भांति न कह सकें। महाजनी के लिये इतना कहना काफी है कि दोनों मे वह फारसी ही लिपी की छोटी बहिन।

क्या हमारे सेठ साहूकार तथा जमींदार इस बीसवीं शताब्दी में भी हिन्दी और नागरी को अपनाकर अपना तथा मातृ भाषा का कल्याण नहीं करेंगे?

आगरे के पण्डित केदारनाथ भट्ट एम. ए. ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा—

इस प्रस्ताव के विषय में एक बात बहुत साफ दीख पड़ती है वह यह है कि इसके अंतर्गत मंतव्य को हमलोग ही कार्य रूप में परिणत कर सकते हैं। इसके बारे में हमें दूसरों की इच्छा पर ही निर्भर नहीं रहना है। हमारी जितनी जातीय कान्फ्रेंसें हैं उनमें से प्रायः सब में हिंदी हितैषियों का अच्छा प्रभाव है, वे लोग कोशिश करें तो आसानी से हिन्दी या नागरी का प्रचार कर सकते हैं। हमारी राजनैतिक सभासमितियों में हमारे मुख्य सभापति का पूरा प्रभाव है और आशा है कि उनके प्रयत्न से हमें सफलता होगी।

राय बहादुर लाला बैजनाथ साहब वैश्य कान्फ्रेंस में और हमारे सुकवि राय देवीप्रसाद कायस्थ कन्फ्रेंस में, हिन्दी को उचित आदर दिलवा सकते हैं। हमें इसके विषय में इन लोगों से प्रार्थना करनी चाहिये और इन सज्जनों को भी इसमें पूरा पूरा उद्योग कर हमारी सहायता करनी चाहिये।

पटने के रा। पूरनचन्द्र ने इनका प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—

हिन्दी की यथोचित उन्नति केवल गवर्नमेण्ट से प्रार्थना करके चुप बैठ रहने से ही नहीं होगी और न इसकी उन्नति गवर्नमेण्ट की केवल दया पर निर्भर है। हम लोग जब तक इसकी उन्नति की ओर ध्यान नहीं देंगे तब तक इसकी यथोचित उन्नति नहीं हो सकेगी। बिहार प्रान्त में जो उर्दू को उठाकर कैथी का प्रचार किया गया है, उसका भी मूल कारण कोई हिन्दी प्रेमी हैं। बिहारबन्धु के साथ एक छोटी सी पुस्तिका (*Pamphlet*) सन् १८८० के पहिले वितरण की गई थी, जिसका नाम था "कचहरियों में नागरी क्यों जारी होनी चाहिये"। कुछ लोगों ने उस पर बहुत से लोगों का हस्ताक्षर कराकर बंगाल गवर्नमेण्ट के पास भेज दिया था। और बंगाल गवर्नमेण्ट ने उस पर पटने के कमिश्नर से कैफियत तलब की थी। आप जानते हैं कि कमिश्नर लोग कैफियत अपने हाथ से लिखते नहीं हैं। अपने मातहतों को कैफियत का मसौदा (*Draft*) तैयार करने को कहते हैं। उस समय एक हिन्दी प्रेमी महाशय जो अंग्रेजी में बी. ए. थे कमिश्नरी आफिस में वर्त्तमान थे।

(इनका नाम बाबू व्रजनन्दनसिंह है और अब बांकीपुर में वकालत करते हैं) उन्होंने कैफियत का मसौदा तैयार किया जिसमें उर्दू को उठाने और कैथी प्रचार के लिये जोर दिया गया था । उक्त मसौदे को कमिश्नर साहब को दिखलाया गया और उनके पसन्द करने पर उसको साफ करके गवर्नमेंगट में भेज दिया गया । उसी पर उर्दू उठा दी गई और कैथी का प्रचार हुआ । उक्त महाशय हिन्दी के पक्ष में भी लिखने, किन्तु यह सोच कर कि हिन्दी को जानने वाले बहुत कम लोग मिलेंगे और उससे यदि काम न चल सका तो सारा उद्योग निष्फल चला जायगा और कैथी को अच्छी तरह से लिखने पढ़ने वाले लोग बहुतायतसे मिलेंगे । बस इन्हीं सब बातों को विचार कर कैथीके प्रचार के लिये उन्होंने जोर दिया था । और भगवान् की ऐसी कृपा हुई कि उनका उद्योग सुफल हुआ । यदि उस समय ऐसा उद्योग नहीं करते तो आज दिन बिहार में कैथी का भी प्रचार नहीं पाया जाता ।

अब यदि संयुक्त प्रान्तकी कचहरियों के अमलो में से भी कुछ लोग हिन्दी प्रचार में उद्योगी होते तो इसके प्रचार में बहुत सहायता मिल सकती है केवल गवर्नमेंगट ही से रोने से काम नहीं चलने का, हमलोगों के सम्मिलित उद्योग की अत्यन्त आवश्यका है ।

अब यह कहा जाता है कि बंगला मराठी इत्यादि इसकी छोटी बहनें उन्नति के शिखर पर चढ़ गई हैं और हिन्दी बिचारी जो सबकी बड़ी बहन कही जाती है उन्नति के मार्गमें सबसे पीछे पड़ी हुई है । इसका भी मुख्य कारण इसका राज दरबार में प्रचार का अभाव ही है । मेरी समझमें यह ठीक नहीं है। यह हो सकता है कि और कारणों में से एक यह भी कारण हो । किन्तु मुख्य या केवल मात्र यही कारण इसके अवनति का नहीं है। जब हम बंगला और मराठी की ओर ध्यान देते हैं, तब मुझे यही ज्ञान होता है कि उक्त लिपि का आदर किसान से लेकर जमींदार तक, महाजन से लेकर रंक तक, बड़े बड़े व्यापारियों से लेकर छोटे छोटे दुकानदारों तक अपने अपने घरों में समान रूपसे करते हैं और तब राजदरबार में भी यह आदर पाती है और यह सब कारण उसकी उन्नति का है । किन्तु हिन्दी की दशा इसके बिलकुल विपरीत है । इसका विचार थोड़े से ब्राह्मणों और लेखकों के और कोई भी आदर सत्कार नहीं देता । यह दशकरोड़ मनुष्यों की माता होकर भी द्वार द्वार ठोकरें खाती फिरती है । कोई जमींदार इसे अपने घर घुसने नहीं देता; किसान अपने दरवाजे पर चढ़ने नहीं देता, महाजन व्यापारी और सब तरहके दुकानदार इसको अपने पास फटकने नहीं देते । तब यह बिचारी जाये कहां, सबलोग इसे घृणा की दृष्टि से देखते हैं । यह बिचारी भिखारी बनी इधर उधर मारी मारी फिरती है । तब जब कि इसकी दशा भिखारी की सी है तब राजदरबार में यह क्योंकर आदर पा सकती है । कहीं भी भिखारियों का आदर राज दरबार में होता नहीं देखा गया है । जब हमलोग इसको अपनी माता समझेंगे, अपने अपने घरोंमें आदर देंगे; उस समय इसको राजदरबारमें आदर पानेमें जरा भी देर नहीं लगेगी । इस लिये हमलोगों को इसको आदरणीय बनाने के लिये तन मन धन

से उद्योग करना चाहिये। महाजनलोग अपने यहां से महाजनी और मुण्डा लिपि को मार भगावें और सबलोग इस बिचारी गरीबनी हिन्दी का समान रूपसे आदर करने लगे तो इसकी यथार्थ उन्नति होनेमें जरा भी देर न लगे। इसके लिये हमलोगों को उद्योगी होना चाहिये, केवल यहां आकर दो तीन रोज वक्तृताबाजी ही कर लेनेसे इसकी उन्नति नहीं होगी। हम लोगों को चाहिये कि यहां से जाने के बाद भी इसकी उन्नति की ओर सदा दत्त चित्त रहें। महाजनों और व्यापारियोंको समझावें, जमीदारों और किसानों को समझावें कि सब लोग इसका समान रूपसे आदर सत्कार करें। तभी इसकी उन्नति होनी सम्भव है। केवल कोरी बातों से कुछ नहीं होने का। यदि हमलोग इसे अपने यहां आदर न देकर केवल गवर्नमेण्ट से इसके प्रचार के लिये प्रार्थना करें तो गवर्नमेण्ट के यह पूछने पर कि आपलोगों ने इसको आदर देने का क्या उद्योग किया है उस समय हम लोगों को निरुत्तर होकर हास्यास्पद होना पड़ेगा।

दूसरा कारण इसकी उन्नति के रोक का मुझे इसकी लेख शैली का दूषण भी प्रतीत होता है। इसके विषय में कुछ बिलम्ब और कुछ अड़चलें भी होती है, और इसी कारण से लोग इसके प्रचार में उद्योगी होते नहीं देखे जाते हैं। हमारे बिहार प्रान्त में कैथी के प्रचार के बाद सन् १८०२ के लगभग एक वर्ष तक यह कचहरियों में जारी भी रही थी। मगर जब देखा गया कि इसके लिखावट में बिलम्ब और बहुतसी अड़चलें होती हैं, तब यह उठा दी गई। अंग्रेजी भाषा में लिखने और पढ़ने के दो प्रकार के भिन्न भिन्न अक्षर हैं। यदि पढ़ने के अक्षर उक्त भाषा में लिखने में व्यवहृत किये जायें तो काम चलने में बहुत सी अड़चलें उपस्थित होती है। सब काम अति बिलम्ब से होने लगे। किन्तु लिखने और पढ़ने के दो प्रकार के भिन्न भिन्न अक्षरों के व्यवहार से सब काम सुगमता पूर्वक हुए जाते हैं, किसी प्रकार की अड़चल नहीं होने पाती है। यदि आप सब लोग सोच समझकर इसकी लेखशैली को दुरुस्त कर सकें तो इसकी उन्नति का मार्ग सुगम हो जावे।

महाजन, व्यापारी, जमीदार और किसान यदि इसको अपने यहां स्थान देना चाहें तो जहां तक मैं समझता हूं लेखक ही नही मिलेंगे, फिर सब अपने अपने घरों में क्योंकर इसे जगह दे सकते हैं। लेखक ज़भी मिलेंगे जब इसमें काम होने लगेगा। एक के अभाव में एक रुके हुए हैं। मेरी अल्प बुद्धिमें ऐसा आता है कि पुस्तकों के लिखने और छापे के कामों में नागरी लिपि का व्यवहार किया जाये और लिखनेमें कैथी अक्षर (जो नागरी अक्षरों से प्रायः मिलते जुलते हुए हैं) व्यवहार किया जाय तो इस समय बहुत ही सुगमता पूर्वक काम चल सकता है। मगर इसपर आप सब लोगों को भली भांति विचार करना चाहिये और आप लोगों के सम्मिलित बिचार से जो निश्चय पावे वही ठीक समझा जावे।

एक बात मैं कहना भूल गया। महाजन लोग जो अपने यहां सदा से महाजनी और मुण्डा में चिट्ठी पत्री लिखने आते हैं वे लोग भी किसी अड़चल के काममें जिसका महाजनी में सुगमता पूर्वक पढ़ा जाना सम्भव नही जंचता है उस बात को वे लोग अक्सर करके नागरी ही लिपिमें लिख

भेजते हैं। तिसपर भी बही खाता नागरी लिपिमें लिखने में वे लोग आगा पीछा करते हैं। इसका मूल कारण लिखने वालों का नहीं मिलना तथा लिखने में विलम्ब का होना ही प्रतीत होता है। मैंने जहां तक देखा है, क्या माड़वाड़ी क्या महाजनी, क्या कैथी के ज्ञाता नागरी पढ़ना थोड़ा बहुत सभी जानते हैं केवल आप लोगों के उद्योग की देरी है। इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

दसवां प्रस्ताव।

इस प्रस्ताव को काशी के बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी. ए. एल. एल. बी. ने किया और कहा—

श्रीमान् सभापति और सभ्य महोदय गण—

जो प्रस्ताव आपलोगों की सेवा में उपस्थित करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है वह यह है:—

"यह सम्मेलन इस बात पर अत्यन्त हर्ष प्रगट करता है कि श्रीमान् बड़ौदा नरेश ने अपने राज्य के स्कूलों में हिन्दी का पढ़ना बाध्य कर, हिन्दी भाषा में उत्तम पुस्तकों के छपवाने का प्रबंध कर और अनेक अन्य उपायों का अवलम्बन कर अपने राज्य में हिन्दी भाषा को आदर का स्थान दिया है। इन कार्य्यों के लिये यह सम्मेलन श्रीमान् को हृदय से धन्यवाद देती है।"

इस सम्बन्ध में कुछ निवेदन करने के पूर्व मैं आपलोगों के सन्मुख वह पत्र पढ़ देना उचित मानता हूं जो श्रीमान् बड़ौदा नरेश के एजुकेशनल इन्स्पेक्टर के आफिस से आया है।

एज्युकेशल इंस्पेक्टर आफिस,
बड़ौदा।
ता० ३—१०—१०।

श्रीमन्मान्यवर श्रीमती नागरी प्रचारणी सभा काशी के मंत्री महोदय।

विद्वद्वर्य महाशय!

आपका तार ता० ३० सितम्बर का मिला यह पढ़ कर अत्यन्त हर्ष हुआ कि श्रीमती नागरी प्रचारिणी सभा बनारस के हाल में हिन्दी कान्फ्रेंस (सम्मेलन) श्रीयुत आनरेबल पण्डित मदनमोहन मालवीय जी की अध्यक्षता में १०-११ अक्टूबर सन् १९१० को होने वाली है। आपने जो कृपा पूर्वक मुझे निमन्त्रित किया है उसके लिये मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हुआ निवेदन करता हूं कि उत्तरीय हिन्द के विपरीत बड़ौदा में दशहरा की केवल दो ही दिन की छुट्टी होती है अधिक नहीं, इस, तथा कई एक अनेक आवश्यकीय कारणों से मैं इस हिन्दी सम्मेलन में उपस्थित नहीं हो सकूंगा जिसके लिये आपसे क्षमा का प्रार्थी हूं।

मैंने आपका तार श्रीमान् मिनिस्टिर आफ एज्युकेशन बड़ौदा स्टेट को भी दिखाया है और उन्होंने मुझे बड़ी प्रसन्नता से आज्ञा दी है कि मैं आपको आपके तथा आपकी सभा के अपूर्व श्रम के लिये जो यह हिन्दी भाषा के लिये कर रही है उनका सन्तोष प्रगट करूं वहां बड़ौदा राज्य में जो हिन्दी के प्रचारार्थ काम हुआ है उसका सारांश जना दूं।

१—विदित हो कि १७ सितम्बर १९१० ई० को बड़ौदा राज्य के सम्पूर्ण वरनेक्यूलर स्कूलों की ५वीं तथा ६ठी श्रेणियों में हिन्दी भाषा शिक्षण लाज़मी (औद्देशिक) कर दिया गया है जिन स्कूलों की संख्या २५०० है।

२—बड़ौदा राज्य के मुख्य एङ्गलो वर्नेक्यूलर

स्कूलों की पहिली, दूसरी, तीसरी और चौथी श्रेणि में भी हिन्दी शिक्षण लाजमी किया गया है और १० अण्डर ग्रेज्युएट्स हिन्दी शिक्षक (उत्तरीय हिन्द के) नियत किये गये हैं।

३—बड़ौदा मेल ट्रेनिंग कालेज की मध्यम और उत्तम पद की श्रेणियों में हिन्दी शिक्षण एक वर्ष से लाज़मी किया जा चुका है।

४—जापान के (*Count Okuma*) की जगद्विख्यात अंगरेजी पुस्तक "*Fifty years of New Japan.*" की दो बड़ी भारी जिल्दों का हिन्दी अनुवाद कराकर प्रकाशित करने की आज्ञा श्रीमत् महाराजा साहेब ने बड़ी कृपा से दे दी है। इस हिन्दी अनुवाद के प्रकाशित होने पर हिन्दी साहित्य में वृद्धि होगी यह पूर्ण आशा है।

५—आज्ञा पत्रिका बड़ौदा, (जो कि राज्य का गजेट है) इसमें धारा (*Law*) सम्बन्धी लेख सदैव नागरी लिपि में प्रकाशित होते हैं।

६—हिन्दी की उत्तम और उपयोगी पुस्तकों के प्रकाशकों के उत्तेजनार्थ उचित सहायता दी जाती है।

आप इस (*Information*) को हिन्दी कान्फ्रेंस में अथवा जहां उचित समझें उपयोग में ला सकते है।

आपका आज्ञाकारी, सेवक।

प्रियवर—

केवल इस पत्रके शुभ समाचार को सुनने ही से भली भांति विदित होता है कि हमारे सर्वमान्य गायकवाड़ महोदयने हमारे उद्देश्यों की पूर्ति तथा अपनी प्रजा और राज्यके कल्याण में कितना योग दिया है। आप लोगों को भली भांति विदित है कि संसार के बहुत से सार्वजनिक कार्य्य राजाके योग देने ही से सिद्ध होते हैं—राजाका यह मुख्य कर्त्तव्य है कि जो प्रजा उसकी शरण में ईश्वर ने रख दी है वह उसकी भलाई के ऊपर पूर्णरीति से ध्यान करे और उस ओर काम करे। हमारे बड़ोदाधीश ने अपने छोटे से राज्य में जो जो उन्नतियां थोड़े दिनों में की हैं वह आप लोगों पर प्रायः विदित है। मैं उनको यहां वर्णन करके आप लोगों का समय नहीं लेना चाहता। कई बातें तो उन्हों ने ऐसी कर दिखाई हैं जिनका अनुकरण अन्य बड़े बड़े राज्याधीशो को करना उचित है। अन्य राज्यों की प्रजा कितने प्रकार के सुधारोंके निमित्त अपने शासकों निरन्तर निवेदन कर रही है परन्तु उस ओर ध्यान नहीं दिया जाता और वे आविष्कार इस राम राज्य में स्वयं हो रहे हैं। धन्य हैं वहां की प्रजा और धन्य हैं वे नरेश। यदि ऐसे उद्योग हमारी नीति परायण और न्यायशीला गवर्नमेण्ट भी करती तो हिन्दी की उन्नति होने तथा उसके द्वारा भारत की दुखिया प्रजा का उद्धार होने में संदेह ही क्या था। मुझे तो विश्वास है कि हमारी गवर्नमेण्ट बड़ोदा राज्य से इस विषय में उदाहरण लेकर इस ओर ध्यान देगी और यश की भागी होगी। ऐसे शुभ कार्य्य के लिये हम जितना धन्यवाद उक्त महाराज को दें थोड़ा है। ईश्वर से प्रार्थना है कि ऐसी ही सुबुद्धि अन्य राजाओं महाराजाओं को देकर उसकी प्रजा का कल्याण करे।

इस प्रस्ताव का अनुमोदन काशी निवासी रायशिवप्रसाद् ने किया और वह सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

ग्यारहवां प्रस्ताव।

इस प्रस्ताव को बाबू राधामोहन गोकुल जी ने उपस्थित करते हुए कहा।

श्रीमान् सभापति महोदय व बन्धुवर्ग !

आह्लाद का विषय है कि हमारे देशीय नृपति गण भी नागरी गुननागरी की सेवा से जो लाभ हो सकता है उसे पूरी तरह अनुभव कर रहे हैं। हाल ही में बीकानेर नरेश ने भी अपनी राजधानी में नव स्थापित नागरी प्रचारणी सभा के साथ सहानुभूति प्रकट की है और मुझे आशा होती है कि वहां सारा दफतर शीघ्रही नागरी अक्षरों में हो जायगा। श्री मान् महाराज बड़ोदा, ग्वालियर प्रभृति अनेक उन राजाओं ने भी जिनकी प्राचीन भाषा ठीक नहीं है हिन्दी भाषाको विशेषतः व लिपिको साधारणतः स्थान प्रदान करना अपनी प्रजा के हीत का कारण समझा है। देशी हिन्दू प्रजा के शाशकों में हिन्दी लिपि के लाभों का ज्ञान न हो यह उनके वास्ते प्रशंशनीय नही होसकता है। समय थोड़ा है अतः इतनेही शब्दो के साथ उन उन राजा, महाराजा, रईसों, जगीरदारों को जिन्हो ने अपने यहां हिन्दी लिपि को या लिपि व भाषा दोनों को स्थान प्रदान दिया है धन्यबाद देने और अन्य श्रीमन्तो से प्रार्थना करने के निमित्त कि वह अपने अपने राज्यों में जहांतक जल्दी सम्भव हो हिन्दी भाषा को स्थान प्रदान कर प्रजाके एक महान् दुःख का अन्त करें। यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं और आशा करता हूं आपलोग इससे सहमत होंगे। प्रस्ताव यह है—

यह सम्मेलन उन सब नृपतिगणों को हृदय से धन्यबाद देता है जिन्होंने अपने राज्य में हिन्दी भाषा और नागरी अक्षरों का पूर्ण प्रचार किया है और प्रार्थना करता है कि अन्य नृपतिगण भी उस ओर ध्यान देकर अपने अपने राज्यों में शीघ्र ही इसका प्रचार करेंगे।

इस प्रस्ताव का अनुमोदन काशी निवासी बाबू गंगाप्रसाद गुप्त ने इन शब्दों में किया—

माननीय सभापति महाशय और सज्जन गण !

मैं बड़ेहर्ष के साथ उन भारतीय नरेशों को धन्यवाद करता हूं जिन्होंने सर्वगुणागरी नागरी को अपने राज्यों में प्रचलित किया है। सभापति महोदय ने अपने प्रारम्भिक व्याख्यान में बहुत ठीक कहा है कि नागरी के प्रचार और हिन्दी भाषा की उन्नति के लिये राजा का आश्रय मिलना अति आवश्यक है। हम पर न्यायशीला ब्रिटिश गवर्नमेण्ट राज्य करती हैं, हमारी मातृ भाषा और देवाक्षर के प्रचार के लिये गवर्नमेण्ट की सहायता का जितना प्रयोजन है देशी नरेशों की सहायता उससे कम जरूरत नहीं है। प्रजा बहुत सी बातों की इच्छा करने पर भी राजा के आश्रय बिना पूरी तरह सफल मनोरथ नहीं हो सकती। ऐसी अवस्था में जिन विचारशील देशी नरेशों ने अपने राज्यों में इतर भाषाओं के स्थान में हिन्दी भाषा एवं नागरी अक्षरों को प्रचलित किया है वे उन सब लोगों की ओर से अनन्त धन्यवाद के योग्य हैं जो नागरी लिपि को राष्ट्र लिपि और हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा बनने के योग्य मानते हैं। गवालियर, कोटा, बूंदी अलवर आदि बड़ी बड़ी रियासतों के अलावे बहुत से तालुकेदारों ने भी

अपने दफ्तरों के कागजात हिन्दी में लिखे जाने की आज्ञा प्रचलित कर प्रशंसनीय काम किया है। हम लोगों को आशा करना चाहिये कि समय और अवसर पाकर अन्य रियासतें भी उनका अनुकरण करेंगी और इतर रियासतों के हिन्दी हितैषी उच्च अधिकारी तथा कर्म्मचारीगण अपनी रियासतों में हिन्दी के विशेषरूप से प्रचारार्थ अवश्य उत्कट उद्योग करेंगे। सज्जनो सायङ्काल निकट है, काम अधिक है, अतएव मैं पुनः बड़े हर्ष के साथ उन सुयोग्य नरपतियों का धन्यवाद करता हूं जिन्होंने सरला सुसम्पन्ना हिन्दी भाषा और नागरी अक्षरों को साश्रय दिया है। मुझे भरोसा है कि आप सब सज्जनों को यह प्रस्ताव स्वीकृत होगा।"

सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

बारहवां प्रस्ताव।

इसके अनन्तर बाबू गौरीशंकरप्रसाद ने यह प्रस्ताव उपस्थित करते हुए कहा—

श्रीमान् सभापति और सभ्य महोदय गण—

आप लोगों ने जो जो प्रस्ताव निश्चित किये हैं उनको उचित रीति से कार्य में परिणत करने तथा हिन्दी सम्मेलन संबंधी कार्यों का निरीक्षण करनेके निमित्त कोई ऐसी संस्था का नियत करना उचित है जो समय समय पर उपस्थित विषयों पर विचार करें और जो उचित हो वह कार्य करे इस लिये मैं यह प्रस्ताव करता हूं:—

इस सम्मेलन का प्रबन्ध करने तथा इसके निश्चित सिद्धान्तों को कार्यमें परिणत करने और इसके लिये एकत्रित धन का उपयुक्त संरक्षण आदि करने के लिये निम्नलिखित इकतालीस सभासदों की एक सम्मति नियत की जाती है जिसे अपने सम्बन्ध की सब बातों के निर्णय करने का पूरा अधिकार होगा। समिति के सन्मुख उपस्थित प्रत्येक विषय का निर्णय अधिक सम्मति द्वारा होगा और कोरम पांच सदस्यों का माना जायगा। सभासदों को पत्र द्वारा भी सम्मति देनेका पूरा अधिकार होगा। यह समिति सम्मेलन के आगामी अधिवेशन में अपने तथा सम्मेलन के लिये एक नियमावली बनाकर उपस्थित करेगी। जब तक इसके विशेष नियम न स्वीकृत हों तब तक प्रति वर्ष एक समिति चुन ली जाया करेगी। यदि सम्मेलन की तिथि के तीन मास पूर्व उसका सभापति स्वागतकारिणी सभा निश्चय न कर सकेगी तो इस समिति को सभापति स्थिर करने का अधिकार होगा। इसी प्रकार यदि विचारणीय विषयों का निश्चय अधिवेशन की तिथि के दो मास पूर्व न होगा तो यह समिति उस कार्य्य को भी करेगी।

(१) सम्मेलन के सभापति माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय, प्रयाग।
(२) लाला देवराज, जालन्धर।
(३) लाला मुंशीराम, हरिद्वार।
(४) साहित्याचार्य काव्यतीर्थ पंडित रामावतार पाण्डेय एम० ए०, बांकीपुर।
(५) बा० व्रजनन्दन सहाय एम० ए०, बी० एल०, पटना।
(६) राय पूरनचन्द, पटना।
(७) बा० शारदाचरण मित्र एम० ए०, बी० एल०, कलकत्ता।
(८) सर गुरुदास बैनर्जी एम० ए०, डी० एल० कलकत्ता।

(९) बा० जगन्नाथ जी झुंझनूवाला, वर्द्धमान।
(१०) बा०हरिकृष्ण जौहर,हिन्दी बंगवासी कलकत्ता।
(११) पं० अमृतलाल चक्रवर्ती, भारतमित्र, कलकत्ता।
(१२) पं० चन्द्रधर शर्म्मा गुलेरी, अजमेर।
(१३) रायसाहब पं० चन्द्रिकाप्रसाद त्रिपाठी,अजमेर।
(१४) सेठ दामोदर दास राठी, ब्यावर।
(१५) लाला करोड़ी मल मालू।
(१६) पं० श्यामविहारी मिश्र एम० ए०, छत्रपुर।
(१७) मिस्टर आत्माराम, बड़ौदा।
(१८) मास्टर एम० आर० बोडस, बम्बई।
(१९) प्रोफेसर रङ्गाचार्य्य एम० ए०, मद्रास।
(२०) मिस्टर एस० एन० पण्डित, राजकोट।
(२१) पं० गङ्गाप्रसाद अग्निहोत्री, छुई खदान।
(२२) पं० गौरीपन्त जोशी, अमरावती।
(२३) बा० रामनारायण जी राठी, नागपुर।
(२४) राजा नरपति सिंह जी, चक्रधरपुर।
(२५) महामहोपाध्याय पं० आदित्यराम भट्टाचार्य्य एम० ए०, प्रयाग।
(२६) महामहोपाध्याय डाक्टर गङ्गानाथ झा एम० ए०, प्रयाग।
(२७) पं० सत्यानन्द जोशी बी० ए०, प्रयाग।
(२८) पं० बालकृष्ण भट्ट, प्रयाग।
(२९) महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी, काशी।
(३०) पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी, कानपुर।
(३१) बा० श्यामसुन्दर दास बी० ए०, जम्बू।
(३२) पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०, काशी।
(३३) पं० सूर्य्यनारायण दीक्षित एम० ए०, एल एल० बी०, खीरी।
(३४) राजा पृथ्वीपाल सिंह, बाराबंकी।
(३५) पं० रुद्रदत्त, आगरा।
(३६) बा० गौरीशंकरप्रसाद बी० ए०, एल एल०बी०, [काशी।
(३७) पं० शिवनाथ शर्म्मा, लखनऊ।
(३८) पं० देवी प्रसाद शुक्ल बी० ए०, कानपुर।
(३९) राय देवीप्रसाद बी०ए०, बी०एल०,कानपुर।
(४०) पं० राधाचरण गोस्वामी, वृन्दाबन।
(४१) ठाकुर हनुमन्त सिंह, आगरा।

इस प्रस्ताव का अनुमोदन कलकत्ते के बाबू हरिकृष्ण जौहर ने और समर्थन अलीगढ़ के पंडित जीवनशंकर ने किया तथा वह सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

तेरहवां प्रस्ताव।

इस प्रस्ताव को पंडित सोमप्रकाश शर्म्मा बी. ए. ने उपस्थित किया। प्रस्ताव इस प्रकार था–

“यह सम्मेलन आगामी वर्ष के लिये बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन एम. ए., एलएल. बी. को मंत्री और बाबू मिश्रीलाल गुप्त बी. ए. तथा पंडित मुर्लीधर मिश्र बी. ए., एलएल. बी. को सहकारी मंत्री नियत करता है।”

पंडित सूर्यनारायण दीक्षित एम.ए., एलएल. बी. ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा—

“माननीय सभापति जी और सभ्य महोदयगण,

मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूं। किसी संस्था का कार्य विना योग्य अधिकारियों के नहीं चल सकता है। हमारा सम्मेलन भी एक सुगठित संस्था के रूप में परिणत होगा। इसके लिये बा. पुरुषोत्तमदास टण्डन एम. ए. एलएल. बी. बड़े योग्य अधिकारी होंगे। मंत्री सुमंत्री होना चाहिये और कानून जाननेवाले को छोड़कर और कौन विश्वसनीय सुमंत्री हो सकता है। बाबू मिश्रीलाल गुप्त बी. ए. और पं० मुरलीधर मिश्र बी. ए. एल एल. बी. मेरे परम मित्र हैं यदि इनकी प्रशंसा में मैं कुछ कहूँगा तो वह निष्पक्ष राय न समझी जावेगी अतएव मैं केवल इस बात की जमानत करके कि यदि ये सज्जन मंत्री और उपमंत्री बनाये जावें तो सम्मेलन का कार्य्य खूब करेंगे इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूँ।”

सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

चौदहवां प्रस्ताव।

इस प्रस्ताव को पंडित शुकदेव विहारी मिश्र बी. ए. ने उपस्थित किया। प्रस्ताव इस प्रकार था–

“यह सम्मेलन सम्मेलनसमिति को अधिकार

देता है कि वह भारतवर्ष के समस्त राजों महाराजों से हिन्दी साहित्य सम्मेलन की संरक्षता स्वीकार करने की प्रार्थना करे।"

प्रस्ताव उपस्थित करते हुए मिश्रजी ने जो वक्तृता दी वह इस आशय की थी—

"प्रिय सभापति और सभ्यगण!

हमारी हिन्दी को पूर्व काल से राजा महाराजाओं का आश्रय मिलता रहा है और यह उसकी उन्नति का एक बहुत बड़ा कारण रहा है। सब से प्रथम कवि "पुष्य" कहा जाता है जो श्री राजा भोज के एक पूर्व पुरुष के यहां रहता था। चन्द बरदाई हिन्दी भाषा का वास्तविक वाल्मीकि है और वह भी महाराजा पृथ्वीराज के आश्रय में रहता था। भूषण, मतिराम, बिहारी आदि बड़े बड़े कवि राज सम्मान से ही उन्नत दशाको पहुँचे थे। यदि महाराजा शिवाजी, छत्रसाल, भगवन्तराय खीची, काशीनरेश आदि हिन्दी को न अपनाते तो आज उसका युद्ध वर्णन सम्बन्धी एक बहुत बड़ा विभाग बिल्कुल शून्य सा होता। अब ईश्वर की कृपा से वह समय आगया है कि सर्व साधारण विद्या से बड़े बड़े पद उपलब्ध कर सक्ते हैं। इस एवं अन्य कारणों से कवियों की किसी के आश्रय में रहकर साहित्य रचना की आवश्यक्ता नहीं रही और मध्यम श्रेणी के सैकड़ों ऐसे विद्याप्रेमी महाशय गण गद्य एवं पद्य में ग्रन्थ रचना करते हैं जिनकी रचना जीविका नहीं है और जो परोपकार एवं आत्मानन्द के वास्ते ही रचना करते हैं। यह बड़े सन्तोष की बात है पर फिर भी सर्वसाधारण में अधिकाधिक हिन्दी प्रचार के लिये प्रयत्नों, धनव्यय और सहानुभूति की आवश्यक्ता है और सदैव रहेगी। 'सर्वारम्भे तन्दुलं सारभूतं' के अनुसार प्रत्येक काम में सहानुभूति और धन की आवश्यक्ता रहती है। कई वर्षों से सर्कार ८००) सालाना देकर काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा हिन्दी ग्रन्थों की खोज करा रही है। जिन लोगों ने इस खोज की रिपोर्टों एवं अन्य बातों को देखा है वह जानते हैं कि थोड़े ही दिनों में कितना बृहत् कार्य्य होगया है और हिन्दी के कितने विशाल पुस्तक समुदाय का पता लग गया और लगता जाता है कि द्रष्टा हिन्दी के महत्व पर आश्चर्य्यित हो उठता है। इस थोड़े से धनव्यय से इतना भारी काम जब हो गया, तब यदि भारत के समस्त राजे महाराजे साहित्य-सम्मेलन की संरक्षता स्वीकार कर लेवें तो थोड़े दिनों में हिन्दी की न जाने कितनी भारी उन्नति हो जावे और सर्व साधारण में इसका न जाने कितना प्रचार होजावे। इस एक काम के हो जाने से हजारों उत्तम ग्रन्थ प्रकाशित होसक्ते हैं और बनाये जासक्ते हैं और हिन्दी भण्डार की पूर्ति में बहुत बड़ा सहारा मिल सक्ता है। इन कारणों से सज्जनगण! मैं बड़े हर्ष के साथ प्रस्ताव करता हूं कि 'यह सम्मेलन सम्मेलनसमिति को अधिकार देता है कि वह भारतवर्ष के समस्त राजों महाराजों से हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की संरक्षता स्वीकार करने की प्रार्थना करे!' आशा है कि आप सर्व सम्मत होकर एकस्वर से इसे स्वीकृत करेंगे।"

इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए काशी निवासी पण्डित केशवदेव शास्त्री ने कहा—

"सभापति महोदय और उपस्थित सज्जनो!

संसार में सामाजिक संस्थाओं का आधार परस्पर की सहायता पर रहता है। सहायता कई प्रकार से होती है, उनमें से मुख्य धन की सहायता है। किसान के समान प्रत्येक मनुष्य धन रूपी बीज को वहीं वपन करता है जहां उत्तम परिणाम निकले। समाजों तथा सभाओं के लिये सब से आवश्यक यह बात है कि उनका सर्वसाधारण में विश्वास हो और जब समाज के प्रतिष्ठित सज्जन किसी सभा पर विश्वास करते हैं तो सर्वसाधारण भी विश्वास करने लग जाते हैं। इसी लिये हिन्दी साहित्य परिषद् के लिये भी यह अत्यावश्यक जान पड़ता है कि उन महानुभाव नृपतियों से प्रार्थना की जावे जो आर्य्यभाषा को अपने राज्य में आदर की दृष्टि से देखते हैं कि वह हिन्दी साहित्य सम्मेलन के

संरक्षक होना स्वीकार करें। हमारा प्रथम तो यह उद्योग होना चाहिये कि जिन नरेशों ने आर्य्य भाषा को अपने यहां आदरणीय आसन प्रदान किया है वह इसके संरक्षक बनें और क्रमशः प्रत्येक आर्य्य भाषा भाषी समृद्धिशाली सेठ, राजा और महाराजा को संरक्षक बनाने का उद्योग किया जावे, उनके देखादेखी "महाजनो येन गतः स पन्था" के अनुसार उनकी प्रजा और सर्वसाधारण में सहसा आर्य्य भाषा तथा देवनागर अक्षरों का प्रचार होजायगा। इस लिये मैं सहर्ष इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूं।"

सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

पन्द्रहवां प्रस्ताव।

बाबू मिश्रीलाल गुप्त बी. ए. ने इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए कि "इस सम्मेलन का दूसरा अधिवेशन प्रयाग में हो" नागरी प्रवर्धिनी सभा की ओर से सब महाशयों से निवेदन किया कि उनकी सभा का निमंत्रण स्वीकार किया जाय और सम्मेलन का दूसरा अधिवेशन प्रयाग में हो।

सर्वसम्मति से यह निमंत्रण स्वीकार कियागया।

सभापति को धन्यवाद।

इसके अनन्तर बाबू श्यामसुन्दरदास बी. ए. ने सम्मेलन की ओर से सभापति महाशय को धन्यवाद देते हुए कहा—

"सज्जनो, आज तीन दिन से हमलोग इस हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की नींव डालने और हिन्दी की उन्नति के उपायों पर विचार करने में लगे हुए हैं। इसमें सन्देह नहीं है कि हिन्दी के सौभाग्य में यह पहिला अवसर है कि उसके प्रेमियों का सम्मेलन हो और मित्रभाव से मिलकर अपनी मातृभाषा की उन्नति में दत्तचित हों। यद्यपि सम्मेलन होने के कुछ काल पूर्व कहीं कहीं यह आशंका उठी थी कि यह सम्मेलन सफलतापूर्वक न हो सकेगा पर हमारे लिये यह अत्यन्त आनन्द और अभिमान की बात है कि आप महानुभावों ने यहां आकर इस आशंका को समूल नष्ट कर दिया। इतने महाशयों का यहां एकत्रित होना ही इस सम्मेलन की सफलता का दृढ़ और स्पष्ट प्रमाण है। आप लोगों को निस्संदेह यह जानकर परम प्रसन्नता होगी कि इस सम्मेलन में ३०० महाशय बाहर से आए हैं और २०० महाशय काशीस्थ सम्मिलित हुए हैं। बड़ी बड़ी संस्थाओं में भी इतने महाशयों का प्रारम्भ में एकत्रित होना कुछ दुस्साध्य सी बात हुई है पर हमारे लिये यह परम गौरव की बात है कि इस सम्मेलन के पहिले ही अधिवेशन में १००० महानुभाव उपस्थित हुए हैं। इनमें दर्शकों की संख्या सम्मिलित नहीं है जो प्रति दिन कुछ घटती बढ़ती रही। मेरा अनुमान है कि किसी दिन भी इनकी संख्या १००० से कम न थी। इसके अतिरिक्त जो प्रस्ताव आपने स्वीकार किए हैं वे इस बात को स्पष्ट प्रगट करते हैं कि आप लोगों ने हिन्दी की उन्नति के उपायों पर खूब विचार किया है। मेरे कहने का यह तात्पर्य नहीं है कि जो कुछ काम करना था सब हम लोगों ने कर लिया अब कुछ बाकी नहीं है, महाशयो, हम लोगों ने इस कार्य को प्रारम्भ किया है और निस्संदेह प्रथम ही अधिवेशन में जो कुछ कार्य हुआ है वह इस बात का स्पष्ट सूचक है कि हमारा भविष्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। फिर हिन्दी के लिये पैसा-फण्ड का खुलना और उसमें पैसों की वर्षा होना सब से ऊपर काशी नागरी प्रचारिणी सभा का ऋणमुक्त होना क्या कम आनन्द की बात है। सज्जनो, मैं दृढ़तापूर्वक कह सकता हूँ कि हमारा यह सम्मेलन, हमारी सफलता, हमारा उत्साह, हमारा परस्पर सौहार्द्र भाव हमारी भविष्यत् उन्नति का सूचक है। इस सम्मेलन की सफलता के सम्बन्ध में भिन्न भिन्न लोग भिन्न भिन्न विचार प्रगट कर सकते हैं परन्तु आप मुझे इतना कहने की आज्ञा अवश्य देंगे कि बंगाल, बिहार, मध्यप्रदेश, मध्यभारत, राजपुताना, संयुक्तप्रदेश, पंजाब आदि प्रदेशों से अनेक हिन्दी प्रेमियों का काशी में एकत्रित होना, सहस्रों दर्शकों का उपस्थित होकर अपना अनुराग प्रगट करना, आवश्यक प्रश्नों पर विचार होना,

पैसा फण्ड का खुलना, उसमें पैसों की झरी लगना, काशी नागरी प्रचारिणी सभा का ऋणमुक्त होना, हिन्दी प्रेमियों में परस्पर परिचय और अनुराग होना और माननीय पं० मदनमोहन मालवीय जी का सभापति होना यदि हमारी सफलता का सूचक नहीं हो सकता तो मेरी समझ में और कोई प्रमाण हम उपस्थित करने में असमर्थ हैं। अस्तु हमलोगों को संतोष है कि हम अपने उद्योग में कृतकार्य हुए हैं और हमें आकांक्षनीय सफलता प्राप्त हुई है। पर महाशयो, इस कृतकार्यता, इस सफलता के मूल कारण विशेषतया माननीय सभापति महाशय हैं। माननीय पं० मदनमोहन मालवीय ने इस सम्मेलन का सभापति होकर हमलोगों को बहुत उपकृत किया है। अनेक अत्यन्त आवश्यक कार्यों के रहते हुए भी उन्होंने हम लोगों के आग्रह को स्वीकार किया यह हमारे अत्यन्त आनन्द और गौरव का कारण है। महाशयो, सभापति महाशय ने हिन्दी की जो कुछ सेवा की है वह आप लोगों से छिपी नहीं है। उन्होंने अपनी वक्तृता में जो बातें कही हैं उसके पद पद से हिन्दी का परम अनुराग प्रगट होता है। सब बातों पर विचार कर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि मालवीय जी महोदय का सभापति होना सब प्रकार से उपयुक्त और हमारे लिये गौरवान्वित था और उनके सभापतित्व में हमलोग जो कुछ कार्य करसके हैं उसके प्रधान कारण हैं। अतएव मैं प्रस्ताव करता हूं कि यह सम्मेलन माननीय पं० मदनमोहन मालवीय का अत्यन्त अनुगृहीत है और उन्हें हृदय से धन्यवाद देता है कि उन्होंने अत्यन्त कृपा कर सभापति का आसन ग्रहण किया और इस सम्मेलन के कार्य को सुचारु रूप से चलाया। मुझे विश्वास है कि आपलोग इस प्रस्ताव को जयध्वनि के साथ स्वीकार करेंगे। हमलोगों की ईश्वर से प्रार्थना है कि मालवीयजी महाशय बहुकाल तक जीवित रहकर अपनी मातृभाषा हिन्दी की सेवा करने और उसे उच्च आसन पर बैठाने में समर्थ हों। ”

सूचनाएं।

सभापति की आज्ञा से बाबू श्यामसुन्दरदास ने उपस्थित सज्जनों को यह सूचना दी कि ब्यावर के सेठ दामोदरदास राठी ने ५००) सम्मेलन को एक ऐसी पुस्तक के तैयार करने के लिए दिए हैं जिसमें व्यापार सम्बन्धी सब कानूनों आदि का सविस्तर वर्णन हिन्दी में हो और जिससे हिन्दी पढ़े लिखे व्यापरियों को अपने कार्य में सहायता पहुंचे। इन्हीं महाशय ने ३००) रु० इस कार्य के लिये दिये हैं कि जिस में एक महाशय राजपुताने में घूमकर सम्मेलन के कार्य की प्रसिद्धि करें और उसके लिये उत्साह और सहानुभूति उत्पन्न करें।

यह भी सूचना दी गई कि स्वागतकारिणी समिति को दुःख है कि जो लेख सम्मेलन में उपस्थित होने के लिये आए थे वे सब नहीं पढ़े जा सके। अतएव इस बात का उद्योग किया जायगा। कि उनका एक संग्रह शीघ्र ही प्रकाशित किया जाय।

सभापति की वक्तृता।

इसके अनन्तर सभापति महाशय ने सम्मेलन के कार्य को समाप्त करते हुए यह कहा—

“ सज्जनो, एकही बात कहनी है, वह यह है कि आप लोगों ने बड़े अनुग्रह के साथ मेरी थोड़ी सी सेवा को बहुत मान उसके लिये मुझे धन्यवाद दिया। मैंने विशेष कोई बात नहीं कही, जो मेरी योग्यता थी वह मैंने आप के सामने रक्खी। इसमें सन्देह नहीं कि इस कान्फरेन्स में बड़ी सफलता हुई। इस सफलता की बड़ाई प्रतिनिधियों को दी जा सकती है। जो सफलता हुई वह प्रतिनिधियों के गम्भीर विचार और न्यायप्रियता की वजह से हुई। इसके लिये मैं इनका धन्यवाद करता हूं। सम्मेलन का कार्य्य जैसे न्याय और विवेचना के साथ होना चाहिए वैसे न्याय और विवेचना के साथ हुआ इसलिये सम्मेलन का कार्य्य प्रशंसनीय हुआ।

हमारी आशाओं की न पूछिये यह सुमेरु की शिखर से भी ऊंची है। हमारे मित्रों के उत्साह को सबने देख लिया। उसके सम्बन्ध में कुछ कहने का प्रयोजन नहीं। आशाएं भी हैं, उत्साह भी है। अवस्था बहुत ही अच्छी है, सब सामानों को एकत्र कर अब हमें बुद्धि से काम करना चाहिए। विचार पूर्वक काम करने से काम होता है किन्तु केवल उत्साह ही उत्साह के बल आगे बढ़ने में तरह तरह की ठोकरों से बड़ी बाधा उपस्थित होती है। शीघ्रता सराहनीय है किन्तु उतावली की प्रशंसा नहीं की जा सकती। उतावली होनी न चाहिए। बुद्धि पूर्वक, विवेचना पूर्वक आगे बढ़ने की चाल ही सन्तोषजनक चाल है। हमारे साम्हने जो उद्देश्य है वह प्रशंसनीय हैं। हमारे साम्हने जो काम उपस्थित है वह यदि पूर्ण हो तो इसमें सन्देह नहीं कि उससे हमें यश होगा।

अभी भविष्य साम्हने है अभी आनन्द प्रकाश न करके वर्ष भर के बाद आनन्द प्रकाश करना चाहिए। वही आनन्द प्रकाश करने का उपयुक्त समय होगा। जो सज्जन दूर दूर से इस नवरात्र में आए हैं और जिनकी संख्या २९० है उन्हें उनके अनुराग के लिये, हिन्दी प्रेम के लिये बहुत बहुत धन्यवाद है। साथ साथ काशी नागरी प्रचारिणी सभा का धन्यवाद है। इस सम्मेलन की स्वागतकारिणी सभा को धन्यवाद है। सभा और स्वागतकारिणी सभा ने घोर विरोध होने पर भी इतने प्रतिनिधियों का नियुत बुलाया और उन्हें तीन दिनों तक ससम्मान रक्खा। मैंने चाहा था कि विरोधी भी इस सम्मेलन में मिल जाते किन्तु उन्होंने हठ पूर्वक विरोध किया और वह इस सम्मेलन में सम्मिलित नहीं हुए। मैं कुछ लोगों का नाम लेना चाहता था किन्तु नाम लेना ठीक नहीं। इन बलुमटेरों ने, इन धर्मसेवकों ने, इन उत्साही बालकों ने अपने नगर में आए सज्जनों की अच्छी सेवा की है। इनकी यह सेवा, इनका यह उत्साह इनके भावी उदय का सूचक है। इनमें कई बालक जिन्होंने मुझ जैसे सामान्य व्यक्ति की सेवा की है उस ऊंचे पद को पावेंगे जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। बालकों का कर्तव्य ब्रह्मचर्य्य और आचार्यों की आज्ञा पालन करना है। ब्रह्मचर्य्य से शारीरिक और मानसिक पुष्टि होती है और आचार्य्यों का आज्ञा पालन करने से अपना भावी जीवन सुखमय बनाया जा सकता है। बालकों, यदि इन विषयों को स्मरण रखकर तुम काम करोगे तो अपनी उन्नति करने के साथ साथ अपने भावी अभ्युदय का पथ प्रशस्त कर सकोगे।

सम्मेलन समाप्त हुआ, मिलन के उपरान्त विच्छेद में पीड़ा होती है किन्तु सुख का विषय यह है कि यह विच्छेद सदा के लिये नहीं, फिर मिलने के लिये ही यह विच्छेद है। विच्छेद की पीड़ा घटाने की और एक बात है, जिस काम के लिये यह मिलन हुआ वह पूरा हुआ। यहां आ यदि मधुर व्याख्यानादि हमने सुने न होते तो यह विच्छेद और भी पीड़ा देता। इस मिलन की यही बड़ी विधि है।

सम्मेलन जब होगा तब दो कामों के लिये होगा। एक तो इसमें देशभाइयों का मिलन होगा एक भाई दूसरे भाई की यथा साध्य सेवा करेगा। कितनी ही बातें हैं जो निवेदन करने से ही फल उत्पन्न करती हैं निवेदन कर दी गई। करना न करना आप के अधिकार की बात है। इसी के साथ साथ और एक काम है। जिनमें विद्या बुद्धि है वह भाषा का भाण्डार भरने में कुछ न कुछ अपना समय लगाएं। अधिक श्रम न करके लोग यदि अङ्गरेज़ी, फारसी आदि भाषाओं से अनुवाद ही करें तो भाषा का भण्डार भर जायगा। उर्दू भाषा की बात कह चुका हूं उर्दू के कितने ही ग्रन्थों का अनुवाद अबतक हिन्दी में नहीं हुआ है। हमारी भाषा से लोग लेते हैं किन्तु हम आलस्य से दूसरी भाषाओं से नहीं लेते। जो संस्कृत के ज्ञाता हैं उनके लिये अनुवाद करने को बहुतेरे ग्रंथ हैं। बाबू गजाधरसिंह के हम कृतज्ञ हैं कि उन्होंने संस्कृत कादम्बरी का भाषा में अनुवाद किया।

हमें ऐसे अनुवादकों का बड़ा प्रयोजन है। ऐसे अनुवादकों को संस्कृत में प्रवीण होना चाहिए। साथ साथ इनमें भाषा का पूर्ण ज्ञान भी बड़ाही आवश्यक है। पुस्तकें उठाइए, जिस भाषा को जानते हों उस भाषा से अपनी भाषा में अनुवाद कीजिए। सुधाकरजी ने ठीक ही कहा है कि अनुवाद वह है जिसमें प्राण आए, भाव आएं। जब उन बातों में आप पण्डित होंगे तभी आप से अच्छा अनुवाद होगा और ऐसे ही अनुवादों से हिन्दी भाषा की श्री वृद्धि होगी। अनुवाद में मूल पुस्तक का भाव, मूल पुस्तक की बातें अवश्य आएं। मैं उन लोगों को कभी भूल नहीं सकता जिन्होंने महाभारत, उपनिषदों आदि के अनुवाद से हिन्दी भाषा का भण्डार भरा है उनका मैं हृदय से धन्यवाद करता हूं। संस्कृत पुस्तकों के अनुवाद की ओर ध्यान देना चाहिए। मौलाना हाफिज आदि की पुस्तकों का अनुवाद होना चाहिए। ऐसे अनुवादों से आप के भाई मूल ग्रन्थकारों के ऊंचे विचारों का परिचय पा सकेंगे। याद रखिये कि जितने अच्छे विचार हैं वे सब मानव जाति की सम्पत्ति हैं, बङ्गला, गुजराती पुस्तकों का अनुवाद करने से पहिले उन पुस्तकों से अनुवाद करें जिनसे बङ्गला, गुजराती में अनुवाद हुआ है। जीवन बहुत थोड़ा है ऐसी अवस्था में हमें जो काम करना चाहिए वह इस तरह करना चाहिए जिससे वह चिरकाल तक जीये। गुजराती, बङ्गला की तरह हमें भी अङ्गरेजी से हिन्दी भाषा में अनुवाद करना चाहिए। श्री शुकदेव जी ने कहा कि शृङ्गाररस बहुत हो चुका, अब शृङ्गार की आवश्यकता नहीं है। अब तो वह रस हो जिससे महत्व प्राप्त हो। पाश्चिमीय ग्रन्थों में बहुत सा सामान भरा पड़ा है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन से मासिक ५० पृष्ठों की पुस्तक निकले जिससे लोगों के हृदय में सद्विचार उत्पन्न हों और भाषा का भण्डार भरे। अब इस बात पर कटिबद्ध हो जाइए।

जहां से अच्छा उपदेश मिले वहां से उसे लेना चाहिए। भंवरा जैसे फूलों से अच्छा रस लेता है उसी तरह आप अच्छी अच्छी पुस्तकों से अच्छा अच्छा रस लें। उपन्यास बुरी चीज़ नहीं उपन्यासों ने पाश्चात्य देशों में बड़े बड़े काम किए हैं, उनमें देशभक्ति का प्रचार किया गया, उनसे कायरों में वीरत्व लाया गया, हिन्दी भाषा में भी ऐसे उपन्यास बनें जो इन कामों के उपयुक्त हों। लोग कहते हैं कि यदि हम जोला, रिड्रेन आदि की पुस्तकों का अनुवाद करेंगे तो हमें उनके पढ़नेवाले न मिलेंगे। मैं आप को विश्वास दिलाता हूं कि उन्हें पढ़ने की मूर्ति है। आप उनके सामने शक्ति बढ़ानेवाला भोजन परोसें। उपन्यास जो लिखे जांय वह सत्पुरुषों, वीरता आदि को बढ़ाएं, देशहितैषिता की बातें, देश प्रेम की बातें उपन्यासों में लिखी जांय। कविताएं भी बनाई जांय तो ऐसी ही बनाई जांय। इतने दिनों से हम पुरानी लकीर पीटते आते हैं अब हमें उन्हें छोड़ना चाहिए किन्तु इस मार्ग में अभी और श्रम और उत्साह का प्रयोजन है। इसे बढ़ाएं इसके बढ़ाने के लिये थोड़ा थोड़ा समय दें। लोगों में साहित्यसेवा का उत्साह बढ़ाना चाहिए तभी पढ़नेवालों में भी उत्साह बढ़ेगा, तभी अच्छी अच्छी पुस्तकों का भी अधिक प्रचार होगा। अब साहित्य-सम्मेलन समाप्त होता है, मुझे विश्वास है कि दूसरे बार मिलने पर हम उन पुस्तकों का हाल सुना सकेंगे जिनका वर्णन इस समय किया गया है। इस काम में हमारा पैसा-फण्ड हमें बहुत कुछ सहारा देगा। आप का अनेकानेक धन्यवाद है कि आपने कृपापूर्वक मेरी बातें सुनी मेरी भूल चूक क्षमा कीजिएगा।"

समाप्ति।

इस प्रकार तीन दिन के कार्य के अनन्तर सम्मेलन का कार्य समाप्त किया गया और सब सज्जन परस्पर आनन्द प्रगट करते हुए और सम्मेलन की सफलता पर उत्साहित होते हुए अपने अपने स्थानों के लिये बिदा हुए।

अजमेर

रायसाहब पण्डित चान्द्रिका प्रसाद त्रिपाठी जोन्सगंज।

अलीगढ

पंडित केदारनाथ भट्ट हेडमास्टर वर्तमान पाठशाला।

पंडित चिरंजीलाल शर्म्मा ब्राह्मण सभा अलीगढ

पंडित ब्रजवल्लभ मिश्र (बल्लभ कवि) सम्पादक सनाढ्योपकारक ।

आगरा

पंडित घनश्याम शर्म्मा, संस्कृत प्रोफेसर सेंठजोन्स कालेज–बेलनगंज

पंडित रुद्रदत्त, सम्पादक आर्य्यमित्र ।

आजमगढ

बाबू गोविन्द आत्माराम धवले बी० ए०, तहसीलदार।

पंडित गोविंद चन्द्र शर्म्मा, मंत्री श्री सनातन धर्म सभा ।

पंडित वासुदेव शर्म्मा, मंत्री आर्य समाज, डाकघर दोहरी ।

पंडित बद्रीनारायण, विद्यार्थी, महम्मदाबाद गोहना।

पंडित वैजनाथ प्रसाद, विद्यार्थी, मम्मदाबाद गोहना।

पंडित वैजनाथ मिश्र, वकील ।

बाबू महादेव प्रसाद वैश्य c/o मथुरा रामचन्द्र शेखर ग्र० मु० अमिला पो० आर्थला ।

बाबू लक्ष्मण सीताराम खरे, बी० ए० डिपटी कलेक्टर, आजमगढ ।

बाबू भोलानाथराय, सूरजपुर ।

पंडित सूर्य्यभान, विद्यार्थी, मऊ नाटभंजन ।

आरा

पंडित शिवकुमार त्रिपाठी, मु० ममुआ जिला आरा ।

बाबू हरवंश सहाय सिंह, तालूकेदार मु० रामपुर चोर, पो० दरीगाव वाया सहस राम जिला आरा ।

इटावा

पंडित ब्रह्मदेव शर्म्मा मिश्र, उप सम्पादक ब्राह्मण सर्वस्व ब्रह्म प्रेस ।

इलाहाबाद

पंडित इंद्रनारायण द्विवेदी, मंत्री द्विजराज सभा बुद्धिपुरी, पो० आ० बोमुकाम सराय आकिल।

पंडित ओंकार नाथ वाजपेयी, स्वामी ओंकार प्रेस प्रयाग ।

पंडित काशीराम, स्पेशल इन्स्पेक्टर आफ संस्कृत ।

बाबू काशीप्रशाद हिन्दू छात्रालय ।

बाबू राम, नं० ६२ कोठा पारचा, इलाहाबाद ।

बाबू बिन्दवासनीप्रसाद—अतरसुइया—प्रयाग

बाबू गंगाप्रतापगुप्त, एम० ए० आक्सफर्ड एन्ड कम्ब्रज होस्टल ।

बाबू गजाधरप्रसाद--सीनियर-आडीटर-लोकलफंड इलाहाबाद ।

पंडित गणशेप्रसाद, विद्यार्थी, नं० ८ इटमन्स्टनरोड

पंडित गयादत्त त्रिपाठी, जवहरी मुहल्ला प्रयाग ।

पं. गणेशदीन त्रिपाठी उपमंत्री द्विजराज सभा बुद्धिपुरी (सराय आकिल)

बाबू ठाकुरदास, दारागंज, इलाहाबाद ।

पंडित ठाकुरप्रसाद मालवीय, मुन्सरीम हाइकोर्ट ।

बाबू देवीप्रसाद, खत्री, डेली गेट श्री नागरी प्रवार्द्धिनीसभा ।

पंडित मुरलीधरमिश्र, वकील, बादशाही मंडी, इलाहाबाद ।

बाबू मिश्रीलाल, मंत्री नागरीप्रवार्द्धिनी सभा ।

पंडित मन्ननद्विवेदी, गजपुरी, बी० ए० प्रोवेशनरी तहसीलदार ।

पंडित मक्खनलाल, विद्यार्थी, ६२ कोठापार्चा, इलाहाबाद ।

पंडित रमाकान्त मालवीय, भारतीभवन ।

पंडित रविशंकरनागर, विद्यार्थी मार्फत पं० हरीरामजी पंड्या ।

पंडित रामजीलाल शर्म्मा, इन्डियन प्रेस, प्रयाग ।

पंडित रामकृष्णमिश्र, बादशाहीमंडी ।

पंडित राधाकान्त मालवीय, बी० ए० भारतीभवन ।

पंडित शिवाधार पांडे, असिस्टेन्ट एडीटर लीडर ।

पंडित सत्यानन्दजोशी, बी० ए० सम्पादक अभ्युदय।

पंडित सुदर्शनाचार्य्य, सम्पादक गृहलक्ष्मी, कर्नेलगंज।

पंडित सोमप्रकाश शर्म्मा, बी० ए०, इलाहाबाद।

बाबू हरिकृष्ण अग्रवाल, जवहरी महल्ला, प्रयाग।

बाबू हीरालाल, विद्यार्थी, हिन्दू बोर्डिंग, प्रयाग।

कलकत्ता।

पंडित अम्बिकाप्रसाद उपाध्याय, बी० ए० नं २ शामाचरण देस्ट्रीट।

बाबू अरुणजयसहाय वर्म्मा, दक्षिणि मूर्तिमठ, ७। १ बेचुचटर्जी स्ट्रीट।

बाबू काशीप्रसाद जयसवाल, बी० ए० बार एटला नं० ३ विलिंगटन स्कायर।

बाबू कालीप्रसन्न बन्दोपाध्याय, बी० ए०, अध्यापक हुगली कालेज।

पंडित बृजनाथ जगन्नाथ, वेदान्तका विद्यार्थी, गवर्नमेन्ट-संस्कृत कालेज, मलिक स्ट्रीट नं० १६।

बाबू दामोदरदास खंडेलवाल, c/o जी० पी० ओ०।

बाबू देवीबक्स सराफ, सभासद आर्य्यसमाज।

बाबू नवजादिकलाल श्री वास्तव्य, मेनेजर वीरभारत

पं. बाबूराव पराडकर, सभासद ना० प्र० सभा-कलकत्ता।

पंडित रामानन्दशर्म्मा, संयुक्त सम्पादक, वीरभारत।

बा. राधामोहनगोकुलचन्द्र, सम्पादक व मालिक सत्यसनातनधर्म १६६। ६८ हेरिसनरोड।

बा. राजेन्द्रप्रसाद एम० ए० बी० एल० ७। १ बेचू चटर्जी स्ट्रीट।

बा. राखालदास बन्दोपाध्याय, एम० ए० सहकारी सम्पादक वंगीय साहित्य परिषद।

बा. सिताराम, क्लर्क, केशियर बैंक आफ इन्डिया, आस्ट्रेलिया एन्ड चाइना।

बा. सालिग्रामसिंह, वीरभारत आफिस।

पंडित सदाशिव तिवारी,

बा. हरिकृष्णजौहर, सम्पादक हिन्दी बंगबासी।

कानपूर

पंडित ख्यालीराम तिवारी मास्टर, पर्थ्वीनाथ स्कूल।

पंडित देवीप्रसाद शुक्ल सम्पादक सरस्वती कानपुर।

पंडित व्यंकटेश नारायण त्रिपाठी, पटकापुर।

पंडित मनोहरलाल मिश्र सम्पादक रसिकमित्र और श्री कान्यकुब्ज हितकारी।

पंडित रामप्रसाद मिश्र, मंत्री हिन्दी साहित्य सभा गिलिशबाजार।

पंडित सूर्य्य प्रसाद मिश्र सभापति स्वदेश वस्तु-प्रचारिणी सभा मंत्री गोरक्षिणी सभा दफ्तर

पंडित सूर्य्य दत्त वाजपेयी, अध्यापक।

पंडित सुदर्शन नारायण पांडे जिमींदार चौबेपुर

काठियावाड।

पंडित जेनशंकर विट्ठलजी भट्ट स्कालर Luki. काठियावाड।

पंडित मूलजी देवराज सोलांक स्कालर आफ राज-कोट स्टेट।

काला कांकर

बाबू शिवनारायणसिंह, ज्वाइन्ट एडीटर, संम्राट

काश्मीर।

वा. श्यासुन्दरदास बी० ए० पंचतिर्थी जम्बू।

पं. रामचन्द्र शुक्ल पंचतिर्थी जम्बू।

कुरुक्षेत्र

ठाकुर नन्दलाल चाहान, मेनेजर सदावर्त सरकार जैन पंजाब।

खरसवां

बाबू बालेश्वरलाल, हेड पंडित मि० इ० स्कूल।

खेरी

पंडित सूर्य्यनारायण दीक्षित, एम० ए० एल० एल० बी० वकील लखीमपुर खीरी।

खंडवा।

बाबू चंपालाल जौहरी, (सुधाकर कवि) रामगंज बाजार खंडवा।

बाबू माणिक चन्द जैनी बी० ए० एल एल० बी० वकील खंडवा।

गया।

बाबू केशवलाल शिवगोविन्दशाह, पुराना गोदाम, गया।

बाबू गया प्रसाद माणिक, पेशकार मुंसफी।

बाबू छेदी लाल रसीले, पुरानी गोदाम।

बाबू प्रकाश सिंह, मु० और डाक खाना औरंगा बाद, जि० गया।

बाबू लाल लक्ष्मी प्रेस।

पंडित बजरङ्ग दत्त शर्म्मा, मुरारपुर, गया।

लाला भगवानदीन, सम्पादक लक्ष्मी गया।

बा. माधव प्रसाद, पुरानी गोदाम गया।

पंडित मोहन शर्म्मा, विद्यार्थी खरखुस पाठशाला।

बा. राम अनुग्रह नारायण सिनहा, अरवल।

बा. रामकीर्ति सिंह, औरंगा बाद।

बा. रामगुलामराम, एडिटर बजरंगी समाचार।

बा. लक्ष्मी नारायण लाल, वकील, औरंगाबाद प्रोप्रायटर "लक्ष्मी।" गया।

बा. त्रिवेणी सिंह, मुख्तार, औरंगा बाद।

गाजीपुर।

बा. अमर देव सिंह, गुरू ट्रेनिंग स्कूल समूह।

बा. गोपाल राम, सम्पादक जासूस, गहमर।

पंडित बाबू लाल मिश्र, स्टेशन मास्टर जमानिया।

ठाकुर विन्ध्येश्वरी प्रसाद सिंह, शिक्षक मिशन स्कूल, गहमर।

ठाकुर महादेव सिंह, जमींदार कादिरा बाद।

बा. महाबीर प्रसाद, गहमर।

बा. राजाराम सिंह, विद्यार्थी, गवर्नमेंट हाई स्कूल।

पंडित रामरतन चौबे, गाजीपुर।

बा. सूर्य्य प्रसाद, गाजीपुर।

पंडित श्रीलाल उपाध्याय, प्रोग्रेसिव मेडिकल हाल।

पंडित हजारी लाल, मास्टर, गवर्नमेन्ट हाई स्कूल।

गोरखपुर।

पंडित बद्री नारायण मिश्र, आफिशिएटिंग असिस्टेन्ट इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्स।

बा. भगवती प्रसाद नायक, कार्य कारिणी समितिके सदस्थ नागरी प्रवर्द्धिनी सभा प्रयाग, मछली गंज, पो० फरेंध।

पंडित भगवती प्रसाद शुक्ल, सबहेड बी० एन० डबल्यू रेलवे।

पँडित मनमोहन मिश्र, जनरल सुपरेन्टेन्डेन्ट।

बा. मर्य्याद सिंह, मुत अल्लिम नार्मल स्कूल।

बा. महाबीर प्रसाद गुप्त, नागरी पुस्तकालय।

पंडित रामलग्न त्रिपाठी गोरखपुर।

पंडित राजमणी त्रिपाठी, नकल नवीस, तहसील पड़रवना।

पंडित श्री नागेश्वर प्रसाद राम तिवारी, क्लर्क चीफ आडिटर का दफ्तर।

चम्पारन।

पंडित जीवानन्दशर्म्मा, हेडपंडित, महाराजा धर्म्मसमाज संस्कृत स्कूल मोतिहारी।

पंडित देवीप्रसादउपाध्याय, जिमीदार रामनगरराज।

छत्रपुर।

बा. गोविन्ददास, सेकिन्ड मास्टर, हाई स्कूल छत्रपुर मंत्री काव्यलता।

बा. विजयबहादुर सिनहा, मंत्री बालसमाज छत्रपुर।

पं० श्यामबिहारी मिश्र, दीवान छत्रपुर स्टेट।

छपरा।

बा. रघुनन्दनधर दुबे, वैद्यराज साहेबगंज।

जामनगर।

पं० दुर्गाप्रसाद, गुरू महन्त श्रीरामप्रसादजी महाराज आशादाबावाका धर्मस्थान।

जौनपुर।

बा. अशर्फीलाल, वकील, जौनपुर।

पं. अविनाशचन्द्र शर्म्मा, मैनेजर रसिकरहस्य पिलकिछा।

बा. ऋषिलाल साहू, सभासद नागरी प्रचारिणी सभा काशी, गौरा बाद शाहपुर।

बा. जीवनसिंह, फोटोग्राफर, मौजा अमरौमा।

मु. फतेहबहादुरखां, डिपटी इन्स्पेक्टर आफ स्कूलस मु० मुफ्ती।

बा. विश्वम्भरदयालवर्म्मा, मेनेजर, पीपुल्स, इन्डस्टल बंक।

बा. तिलकधारीसिंह, इन्स्पेक्टर कोआपरेटिव सुसाइटि।

बा. भगवानसहाय, सब डिपटी इन्स्पेक्टर आफ स्कूल।

बा. मगनलाल गुप्त, साहु, उपलक्ष्य स्टीनगंज।

बा. रामनाथ कोपाध्यक्ष।

पं. राधाकृष्ण दुवे, प्लीडर जजेज कोर्ट।

बा. शिववरतलालसिंह, वकील हाईकोर्ट।

बा. शिवप्रसाद मारवाड़ी, सभासद गौरावाद शाहपुर।

पं. सरयूप्रसाद मिश्र, अध्यापक, मिशन हाई स्कूल।

बा. सीतलासहाय; असिस्टन्ट रेकार्डकीपर ओलंदगंज।

पं. सीताराम शर्म्मा सम्पादक रसिक रहस्य।

पं. सुखदेवविहारी, मौजे जफरावाद।

दरभंगा।

पंडित जगदीश्वर प्रसाद ओझा, सम्पादक, मिथिला मिहर।

बा. राम बहादुर सिंह, धर्म रतन, गंगापुरजी राजपुरजी।

नागपुर।

पंडित चन्द्र शेखर पाठक, सम्पादक मारवाड़ी।

पलामू।

बा. कवलेश्वरी चरण, रेकर्डकीपर, डालटेनगंज।

पंडित छटू तिवारी, स्टूडेन्ट ट्रेनिंग स्कूल डालटेनगंज।

पंडित जानकी राम तिवारी, हेड पंडित, अपर प्रायमरी स्कूल मझिआंव।

बा. बिक्रम सिंह, विद्यार्थी ट्रेनिंग स्कुल डालटेनगंज।

बा. वृन्दा सिंह, विद्यार्थी ट्रेनिंग स्कूल, डालटेनगंज।

बा. युगल किशोर अखौरी, डालटेनगंज।

बा. रामबृक्ष राम, स्टूडेन्ट ट्रेनिंग स्कूल, डालटेनगंज।

पंडित रामकिशोर पांडेय, आफिशियेटिंग सब इन्सपेक्टर आफ स्कूल डालटेनगंज।

पंडित रामदत्त उपाध्याय, इन्स्पेक्टिग पंडित आफस्कूलस, रंका।

पंडित रामकृपाल पांडे, हेड मास्टर ट्रेनिंग स्कूल, डालटेनगंज।

बा. रामनरायण दास, फोर्थ मास्टर ट्रेनिंग स्कूल, डालटेनगंज।

पंडित रामनीहोरा दुबे, विद्यार्थी ट्रेनिंग स्कूल, डालटेनगंज।

पंडित रामराज राय, विद्यार्थी ट्रेनिंग स्कूल, डालटेनगंज।

पंडित रामसुभग पाठक, विद्यार्थी ट्रेनिंग स्कूल, डालटेनगंज।

पटना।

पंडित उमाधर पाठक, मथुरिया टोला, पटना।

पंडित चक्रपानी मिश्र, विद्यार्थी, पटना।

रायपूरनचंद, धर्म्मशाला घाट, पटना।

बा. त्रीकाली चरण सिंह, सुपरिन्टेन्डेन्ट, नरहन, कोर्ट आफ वार्डस।

पुरनियां।

बा. फौदार सिंह, भूमिहार, मु० धमदाहा।

पंजाव।

पंडित दिवाकरजी सुधाकरजी राधा निरंजन नाथद्वारा।

प्रतापगढ़।

पंडित राम प्रसाद त्रिपाठी, विद्यार्थी बी० ए० क्लास आर पी, प्रतापगढ़ फोर्ट, केटलाग अनुसन्धानक।

फतेहपुर।

पंडित देवीदत्त द्विवेदी, उपदेशक टेमप्रेन्स कौंशिल, मौजा शाद।

फैजाबाद ।

बा. छेदालाल सिंह बी० ए० एस० सी० सेकन्ड मास्टर, गवर्नमेन्ट हाई स्कूल ।
पंडित जैजैराम त्रिवेदी, विद्यार्थी, गांव मुरादाबाद, अकबरपूर, फैजाबाद ।
बा. शिवपाल सिंह, मेनेजर, भीटी रियासत ।
पंडित श्यामलाल रेऊ, भीटी ।
पंडित हृषीकेश उपाध्याय जौतिषाचार्य, प्रधान संस्कृताध्यापक राजकीय पाठशाला, फैजाबाद ।

बडोदा

महात्मा रामप्रपन्नाचार्य्य, मंत्री श्री वैष्णव साधु सुधारिणी सभा ।

बदायूं

लाला जगन्नाथ प्रसाद, उपदेशक मौजा पिपला पो० हजरतपुर आर्य्य समाज मुहशमपुर ।
पंडित मनुदत्त शर्म्मा, उपदेशक गुरुकुल ।
पंडित मंगलदेव शास्त्री कूचा सा अदली ।

बनारस

पंडित अद्वैतानन्द, असीसंगम विश्वेश्वर खास ।
बाबू अम्बिका प्रसाद सिंह नं० ५६/२० रामापुरा ।
बाबू आनन्दप्रसाद वर्म्मा ब्रह्मनाल ।
पंडित आजित नारायण मित्र प्रह्लाद घाट ।
एफ० एल० एनउड एम० ए० अक्सफर्ड लंडन मिशन ।
बाबू अतरसिंह, स्वामी विश्वेश्वर गंज ।
पंडित ए० एन पाठक कर्ण घंटा ।
बाबू अम्बिका प्रसाद बुलानाला ।
पंडित अन्नपुर्णानन्द जालपादेवी ।
बाबू अम्बिका प्रसाद गुप्त सम्पादक इन्दु ।
श्री इन्द्र विजय जैन साधू श्री यशोविजय जैन पाठशाला ।
राय साहब ईश्वरी प्रसाद सेन्ट्रल हिन्दूकालेज ।
बा० उदयलाल जैन काशलीवाल स्याद्वाद पाठशाला ।
एम० जी० कानेटकर, टीचर सेन्ट्रल हिन्दू कालेज थियोसोफिकल सोसाइटी ।
बा० कन्हैयालाल साह शिवपुर ।
बा० कन्हैयालाल अग्रवाल, सौदागर ठठेरी बाजार ।
पं० कन्हैयालाल, विद्यार्थी चौखम्बा ।
बा० कवीन्द्रनारायणसिंह, रईस व जमींदार जगतगंज ।
बा० कपूरचन्द मुख्तार अदालत नई बस्ती ।
बा० कन्हैयालाल मछरटाका फाटक ।
बा० कन्हैयालाल गायघाट ।
पंडित कमलाकांत पांडे ।
पंडित काशीप्रसाद तिवारी सेंट्रल हिन्दू कालेज ।
बा० कालिदास मित्र, स्पेशल मजिस्ट्रेट चौखम्भा ।
बा० काशी प्रसाद, स्टूडेन्ट सी० एच० सी० ।
पंडित कुशहर पांडे, ट्रेनिंग मास्टर, चौबेपुर ।
बा० कुंजीलाल जैन, डाइरेक्टर जैन नाटक मंडली ।
पं० कुंजबिहारी विद्यार्थी निरंजन कान्त से० के पाठशाला ठठेरी बाजार ।
पंडित केशव प्रसाद मिश्र, काव्य तीर्थ भदैनी ।
पंडित कोठाजी नागर गोलागली ।
बा० कृष्णादास मंत्री नागरी नाट्य कला प्रवर्तक साहु गोपाल दास स्ट्रीट ।
बा० श्रीकृष्ण वर्म्मा, प्रोप्राइटर भारतजीवन ।
बा० केसरी चन्द्र जैनी, आसभैरव ।
पंडित कृष्णानन्द शर्म्मा, विद्यार्थी दूधविनायक ।
बा० खेमचन्द जैन विद्यार्थी स्यादाद पाठशाला ।
बा० गणेश प्रसाद छतातर गोविन्द पुरा ।
बा० गंगा प्रसाद अरोडा मालिक कल्पतरु प्रेस
बा० गयाप्रसाद, आध्यापक टानस्कूल शिवपुर ।
बा० गणेश प्रसाद रईस महल्ला चेतगंज ।
बा० गणेशप्रसाद गुप्त पुराने विश्वनाथ ।
पं० गणेश नारायण शंखधार सिद्धमाताकी गली ।
पं० गंगादीन दुबे रामनगर ।
पं० गंगा विष्णु मिश्र, काव्यतीर्थ वेदरत्न महोपदेशक श्री भारत धर्म महामंडल ।

पं० गिर्जा कान्त ओझा, क्लार्क भारतजीवन,

बा० गिरजा प्रसाद, हनुमान फाटक।

विद्यार्थी गोरनाथा राम गर वड गुजरात देशका वतनी बेद संहिता यजुर्वेदीय क्रतेहे, पथरगली।

बा० गोविंददास भिकारीदासका मुहल्ला।

बा० गोपालदास, सोनार नदेसर।

बा० गोविंददास बुलानाला।

पं० गंगादत्त पांडे विद्यार्थी हिन्दूकालेज बोर्डिंगहाउस।

बा० गौरीशंकरसिंह हरिश्चन्द्र हाई स्कूल।

बा० गौरीशंकर बड़ी पियरी।

बा. गोपालप्रसाद, एकाउन्टेन्ट, पीपुल्स बैंक आफ इन्डिया।

बा. गोकुल प्रसाद, कालभैरव।

बा. ज्ञानीशंकर, स्टूडेन्ट, सी० एच० सी० स्कूल

पं. गंगाधर मिश्र शर्म्मा, तुलसी दासके मकान।

बा. चतुर्भुज सहाय वर्म्मा, ठि० नागरी प्रचारिणी सभा काशी।

बा. चन्दीप्रसाद कुइन्स कालेज।

बा. चन्द्रमोहन सेठ, प्राइवेठ सेक्रेटरी, टू बा. मोतीचन्द गायघाट।

शास्त्री चुन्नी लाल धनसुखराम, गवर्नमेन्ट कालेज।

पं. चन्द्रदत्त, ठि० केशवदेव शास्त्री दशाश्वमेध घाट।

बा. चिम्मन लाल, छोटालाल, सेन्ट्रल हिन्दु का०

पं. चुन्नीलाल वैद्य, डंडपाणकी गली।

पं. चन्द्रशेखर वाजपेयी, रामकटोरा बाग।

पं. चन्द्रशेखर दशाश्वमेध, घाट।

स्वामी चेतनानन्दजी, राजमन्दिर शीतलाघाट।

बा. छन्नूलाल, मास्टर हरिश्चन्द्र स्कूल।

पं. छत्रधारी शर्म्मा, बीबी हटिया।

बा. जमनाप्रसाद, दास बुलानाला।

बा. जगपति राय, वाटरवर्क्स, इन्सपेक्टर।

बा. जयकृष्णसिंह, हेडमास्टर, टाउन स्कूल शिवपूर।

पं. जनार्दन शर्म्मा, सारस्वत, मु० भिखारीदास।

बा. जगन्नाथप्रसाद माथुर, एडीटर वाणिज्य सुखदायक।

बा. जगमोहनदास, साहु गोपालदास स्ट्रीट।

बा. जयरामदास सम्पादक उपन्यासबहार, राजघाट।

बा. जगर्जीवनदास, भुतही इमली।

बा. जगन्नाथदास, सेकिन्ड मास्टर, हरिश्चन्द्र स्कूल।

पं. जयदेव शास्त्री, श्रीचन्द्रमठ, बुलानाला।

बा. जगन्नाथप्रसाद भार्गव, लाइब्रेरियन कुइन्स कालेज, गायघाट।

पं. जानकीप्रसाद शर्म्मा, कोषाध्यक्ष कुमार सभा।

बा. जयनारायणसिंह, जमीदार, तारघरके पास।

पं. जयनारायण पाठक, गायघाट, बंगाली बाड़ा।

पं. जागेश्वर मिश्र, भदैनी।

बा. जुगुलकिशोर अग्रवाला, सेन्ट्रल हिन्दू कालेज।

बा. ज्योतिप्रसाद, मेनेजर, गवर्नमन्ट एग्रीकलचुरल।

पं. ताराचन्द्र ओझा, जमीदार त्रिपुरभैरवी।

मिस्टर, आई० जे० एस० तारपोरेवाला, बारएटला सेन्टल हिन्दू कालेज।

बा. दामोदर दास, सभासद श्री अग्रवाल स्पोर्टस क्लब, बुलानाला।

बा. दामोदरप्रसाद, अध्यापक, सेन्ट्रल हिन्दू कालिजिएट स्कूल थियौसौफिकल, सोसाइटी।

बा. द्वीपचन्द, स्याद्वाद पाठशाला।

बा. दुर्गाप्रसाद बी० ए०, जमीदार एन्ड आनरेरी जाइन्ट सेक्रेटरी सेन्टल हिन्दू कालेज लकसा।

पं. दुर्गाशंकर गोर, सिद्धमाताकी गली।

पं. दूधनाथ विद्यार्थी, काजीमंडी।

पं. दुर्गाप्रसाद पाठक, एफ० ए० कर्णघंटा।

बा.देवनाथ चौधरी, बालमुकुन्द चौहटा दशाश्वमेध।

पं. देवकुमार शर्म्मा, नगवा।

पं. देवीप्रसाद, विद्यार्थी, साधूपाठशाला अस्सी।

पं. देवीदत्त शुक्ल, विद्यार्थी एफ० ए०।

बा. देवनरायण दास।

बा. दौलतचन्द, जयनारायण पाठशाला।

बा. दौलतचन्द, जमीदार, शिवपुर।

बा. द्वारका प्रसाद, दशाश्वमेध ।
पं. धनुषधारी शर्म्मा, जमीदार शिवपुर ।
बा. धर्म्मचन्द्र जैन, विद्यार्थी, दिगम्बर स्याद्वाद पाठशाला, भदैनी ।
पं. नरसिंह दत्त उपाध्याय, अध्यापक, मछरहट्टा ।
बा. नरसिंह दास बी० ए० सुखलालसावका फाटक।
बा. नन्दकिशोरलाल, बड़ागांव ।
बा. नरोत्तम दास, गुप्त बेंकर, गोविन्दपुरा ।
बा. नरायणदास, छठवां क्लास, से० हिन्दू कालेज ।
बा. नागेश्वरनाथ, नागेश्वर प्रेस, काशी ।
बा. नन्दकिशोर वैश्य, विद्यार्थी हिन्दू कालेज ।
बा. निहाल चन्द्र, मीरघाट ।
पं. नाथूराम शर्म्मा, लक्खीचौतरा ।
बा. श्रीनागेन्द्र कुमार मित्र, कर्म्मचारी श्री भारतधर्म्म महामन्डल, रामापुरा ।
बा. नेमिचन्द्र जैन, स्याद्वाद पाटशाला ।
बा. नरोत्तम दास, शिवाला ।
प्रोफेसर पी० एन० पाटणकर एम० ए० सेन्ट्रल दिन्दू कालेज ।
बी. पदमराम अय्यर, सेन्ट्रल हिन्दू कालेज ।
पं. प्रद्युम्न पाठक, भदैनी ।
बा. प्रसिद्ध नारायणसिंह, जमीदार, असिस्टन्ट सेक्रेटरी क्षत्रीय हाइ स्कूल ।
बा. पुरुषोत्तम दास, गोपाल मन्दिर ।
पं. प्रताप नारायण दुबे दसवां दर्जा एस० एल० जयनरायन्स हाइ स्कूल ।
पंडित फणीभूषण अधिकारी एम० ए० प्रोफेसर आफ फिलासफी, सेन्ट्रल हिन्दूकालेज, ।
मुंशी बा. नन्दन लाल, काजीकी मन्डई ।
बा. बटुक प्रसाद खत्री, जमीदार, सिद्धेश्वरी ।
बा. बटुक प्रसाद, पितर कुंडा ।
पंडित बलदेव पान्डय भदैनी ।
बा. बल्लभ विजय, साधुजैन पाठशाला ।
बा. बलवंत राय बडोदेकर, दुर्गा घाट गणेश दीक्षित
पंडित बलदेव मिश्र, विद्यार्थी, किन्स कालेज ।
बा. बालगोविन्द, दीनानाथ का गोला ।
श्री. विद्या विजय, जैनसाधु, यशोविजय जैन पाठशाला ।
बा. बांके बिहारी लाल, मंत्री श्री अग्रवाल स्पोर्टस।
बा. वारुणी प्रसाद, मास्टर हरिश्चन्द्र स्कूल, ।
बा. बालकृष्णदास, जगतगंज ।
बा. वासुदेव नेमिनाथ, स्याद्वाद पाठशाला ।
बा. बसन्त सिंह, शिक्षक, राजवितियाका पाठशाला ।
बा. बलदेव दास, जमींदार, भदैनी ।
बा. विश्वम्भर दत्त, सेन्ट्रल हिन्दूकालेज ।
बा. विश्वनाथ प्रसाद सिंह, सराय गोवर्द्धन ।
बा. विश्वनाथ सिंह, स्टूडेन्ट किन्स कालेज ।
मुन्शी बीरेश्वर प्रसाद, अष्टाना, नवापुरा ।
बा. बृजपाल दास, मास्टर, चौक ।
पंडित विश्वेश्वर प्रसाद, विद्यार्थी, १०४ नवापुरा ।
पंडित विट्ठलनाथ दुबे, मुहल्ला रामघाट ।
बा. बेनी प्रसाद, अग्रवाल स्पोर्टस क्लब ।
पंडित वैद्यनाथ मालवीय, गायघाट; पाटन दर्वाजा ।
पंडित वैद्यनाथ शर्म्मा, ठि० बलदेवदास संस्कृत पाठशाला लालघाट ।
पंडित बेचन पांडे, विद्यार्थी एस० लीविंग, हिन्दू कालेज ।
बा. बैजनाथ प्रसाद कक्कड़, गायघाट ।
बा. बृजरत्नदास, रंगील दासका फाटक ।
बा. बृजभूषण दास, रतन फाटक ।
बाबू बेनीप्रसाद गुप्त, ठठेरीबाजार ।
पं० बेनीमाधव मिश्र, त्रिलोचन घाट ।
बा. बटुक प्रसाद गुप्त न० ६ बुलानाला ।
बा. लालकृष्ण सिंह, असिस्टन्ट अकौउन्टेन्ट, अर्दली-बाजार ।
पंडित बैजनाथ, मेनेजर अन्नपूर्णा फारमेसी, कबीर चौरा ।
पंडित विजयानन्द तिवारी, भदैनी ।
पंडित विष्णुदत्त द्विवेदी, उपदेशक, नवाबगंज ।
बा. बन्सीधर, सुपरिन्टेन्डेन्ट जैन पाठशाला, भदैनी।

बा. भगवान प्रसाद, सब डिपटी इन्सपेक्टर आफ स्कूल्स।
पंडित भागवत मिश्र बी० ए०, छात्र, सेन्ट्रल हिन्दू कालेज।
बा. भागवत प्रसाद, अन्नपूर्णागंज।
बा. भगवान प्रसाद, वकील, जैतपुरा।
बा. भवनाथ, दुर्गा घाट।
बा. भगवान दास एम० ए०, सेन्ट्रल हिन्दू कालेज।
बा. भैरव लाल सेठ, टीचर क्विन्स कालेज।
बा. भृगुनाथ प्रसाद, विद्यार्थी, दारानगर।
बा. भरत दास, गोपाल दास सावका महल्ला
बा. भगवती प्रसाद सिंह, रईस रामनगर।
बा. भगवती प्रसाद सिंह, विद्यार्थी, गोवर्द्धन सराय।
बा. भगवती प्रसाद, रामनगर मिडल स्कूल।
पंडित भगवती प्रसाद उपाध्याय भदैनी।
बा. भोलानाथ मिहरौत्रा नीची ब्रह्मपूरी।
बा. भोलानाथ, सेन्ट्रल हिन्दू कालेज।
बा. भारती सिंह, अमर गली।
बा. महावीर प्रसाद, मास्टर, मिडल स्कूल राम नगर।
बा. महाबीरसिंह, क्लर्क सब रजिस्ट्रार आफिस मु० जगतगंज।
पं. मालाक्ष शास्त्री, जंगमबाड़ी।
पं. माधवराम शर्म्मा, सम्पादक सनातन धर्म्म व भारत मारतन्ड।
बा. महादेवसिंह, मास्टर, क्षत्रिय हाइ स्कूल।
बा. महादेव प्रसाद, फर्स्ट क्लार्क, मुंसफी।
बा. महादेवप्रसाद, नवाबकी डेवढ़ी, बनारस।
बा. महीपतराम नायक, बुलानाला।
बाबू महाबीर प्रसाद, जगत गंज।
बाबूमनोहरदास, क्लर्क म्युनिसिपलऑफिस कालभैरव।
पंडित मथुरा प्रसाद, विद्यार्थी, पाठशाला खेदूराम।
बाबू मनीराम, चौसठी घाट, बंगाली टोला।
पंडित मुरारीदत्त शर्म्मा, संकृत पाठशाला,।
बा. मधुसूदनदास, राजा दरवाजा।
बा. महाबीर प्रसाद, बुलानाला नं० ४९। २५
बा. महादेव प्रसाद गंधी।
बा. मथुरा प्रसाद, म्युनिसिपल कमिश्नर आनरेरी मजिस्ट्रेट औरंगाबाद।
पं. महादेव प्रसाद, विद्यार्थी, काशी।
बा. मारकंडे प्रसाद, पियरीकलां।
बा. मंगतराय, बेंकर, त्रिलोचन घाट।
पंडित मुरलीधर नागर, असिस्टेन्ट-इन्स्पेक्टर ऑफ स्कूल्स।
मुन्शी मंगला प्रसाद, कबीर चौरा।
बा. मोहनलाल, मोहल्ले जेरगुलर।
पं. मुरलीधर, सत्तीचौतरा।
पं. मूलशंकर द्विवेदी, मंत्री, गुर्जर हितेक्षसमाज पशुपतेश्वर महादेव के सामने।
श्रीयदुवंशझा, ज्योतिषी।
पं. यज्ञनारायण उपाध्याय, असिस्टेन्ट, प्रोफेसर, संस्कृत कालेज।
बा. रघुनाथ प्रसाद, प्लीडर, कालभैरव।
बा. रामप्रसाद चौधरी, सिद्धेश्वरी।
बा. राधारमण गुप्त मछरहट्टा।
बा. रवीन्द्रनारायण सिंह, स्टूडेन्ट क्विन्स कालेज।
बा. राधाकृष्ण पाठक, वकील, मु० गायघाट।
बा. रामजी सहाय, कारपरदाज पं. देवी प्रसाद उपाध्याय भदैनी।
मु. रामप्रकाशलाल, आडिट क्लार्क डिस्ट्रिक्ट सुपरेन्टेन्डेन्ट ऑफिस बी० एन० डब्लू० रेलवे।
बा. रामवन्दन प्रसाद, वकील वाइस चेयरमैन म्युनिसिपल बोर्ड दारानगर।
बा. रामअधीन, गोला दीनानाथ।
बा. रामेश्वर सिंह दशाश्वमेध घाट।
पं. रामखेलावन उपाध्याय, चौबेपुर।
पं. रामपदारथ शुक्ल, सब ओवर सियर, अर्दली बाजार।
बा. राजारामसिंह, फर्स्ट इअर क्लास सेन्ट्रल हिन्दू कालेज.

बा. रामगोपाल, राताचन्द बाड़ा।
बा. रामासिंह, शकारपुरिया।
बा. रघुनन्दन प्रसाद, छात्र हिन्दू कालेज,
पं. रमाशंकर विद्यार्थी, सराय गोवर्द्धन।
पं. राजाराम पांडे, हरिश्चन्द्र हाइ स्कूल,।
बा. रामनिरंजन।
बा. राधेकृष्ण दास।
पं. रामरतन पाठक, नायब सदर कानूनगो जगतगंज।
पं. रामसरन दास, करनघन्टा।
बा. रामलगन लाल, भैरोनाथ।
बा. रामकिशोर सिंह, अध्यापक नारायण गढ़।
बा. राजेन्द्र नारायणसिंह, क्लर्क, को-आपरेटिव सोसाइटी, अर्दली बाजार।
बा. रामचन्द्र राव, स्टूडेन्ट. सेन्टल हिन्दू कालेज।
बा. रामदास गुजराती, दारानगर।
बा. रामलाल, शिवपुर।
पं. रूपनरायण पांडे, श्री भारतधर्म्म महामन्डल।
बा. लक्ष्मीनारायण गुप्त, जिमींदार ३६ कालभैरव
पं. लक्ष्मीशंकर शर्म्मा, कालभैरव।
पं. लक्ष्मीप्रसाद पांडे, टेढीनीम।
प. लक्ष्मी प्रसाद, उपाध्याय, विद्यार्थी हिन्दूकालेज।
बा० लल्लूजी डेरावाले राजा दरवाजा।
बा० लौटूसिंह उर्फ शंकरानन्दसिंह अध्यापक क्षत्रिय हाइस्कूल।
बा० लोकमन जन विद्यार्थी संस्कृत स्याद्वाद पाठशाला
ठा० लालजीसिंह मेनेजर क्षत्रिय मित्र बनारस।
पंडित विट्ठलदास नागर सेकन्ड मास्टर गवर्नमेंन्ट स्कूल।
बा० विनायक राव स्टूडेन्ट मराठा स्कूल।
पंडित शंकरदत्त बाजपेयी भारतजीवन प्रेस।
पंडित शीतलाप्रसाद लंडनमिशन पाठशाला।
पंडित श्याम सुन्दर बाजपेयी विद्यार्थी दशाश्वमेध
बा० शारदाप्रसाद वकील मु० औरंगाबाद।
बा० शंकरलाल पथरगली।
पंडित शिवराम त्रिपाठी, नगवा।

बाबू तुच्छ शिवकृष्णा।
पंडित शिवनारायण, शंखधार, सिद्ध माताकी गली।
पंडित श्री दास ब्रम्हनाल।
पं० श्यामसुंदर शर्म्मा चतुर्वेदी, दशाश्वमेध।
बाबू शोभाराम, बी० ए० एम० बी० बुलानाला।
पं० शिवदत्त काव्य तीर्थ, बुलानाला।
बा० शुकदेव वर्म्मा, वैदिका ध्यापक क्षत्रिय हाइस्कूल।
पं० शिवगोविंद पांडे, असिस्टंट स्टेशन मास्टर,
महात्मा शिवशंकरगिरि, बुलानला, पाठशाला गोविंन्ददास।
बा० शिवप्रसादसिंह, हरतीरथ।
बा० शिवराज प्रसाद।
बा० शीतला प्रसाद, लंडन मिशन हाई स्कूल।
बा० सहदेव सिंह, जमींदार, अर्दली बाजार।
पं० सम्पुर्णानन्द, विद्यार्थी जालपादेवी।
पं० सरदार झा, विद्यार्थी, रणवीर्य पाठशाला।
पं० सत्यनारायण शर्म्मा, वैदिक पाठशाला
पं० सरयू नारायण त्रिपाठी, एम० ए० पाटनदर्वाजा।
मुन्शी सत्यनारायणलाल, अध्यापक शिवपुर।
बा० सांवलजी नागर, स्कूल लीविंग क्लास।
पं० सीताराम पंत अध्यापक, सूत टोला।
मुन्शी शिवप्रसाद श्रीवास्तव, लाइब्रेरीयन, कारमाइकल लाइब्रेरी।
पं० सीताराम शिवपुर बनारस।
महात्मा सिद्धराम जंगम वाड़ी मठ।
पं० सिद्धेश्वर शर्म्मा, नीलकंठ।
महन्त सीतारामदास, संस्थापक साघू पाठशाला।
पं० श्री नील कमल भटाचार्य्य, एम० ए० अध्यापक सेन्ट्रल हिन्दू कालेज।
पं० सिद्धि प्रसाद उपाध्याय, (भदैनी)
बा० सुन्दरदास, लाहोरी टोला।
पं० सुखलाल न्याय मध्यमपूर्ण वच्छ राजघाट
बा० सूर्य्य प्रसादसिंह, काजीकी मंडई।
पं० सोमनाथ पालना मोहल्ला भिकारीदास।

श्याचन्द ओझा, इंद्रपुर परगना शिवपुर।
बा. संकठाप्रसादसिंह मास्टर क्षत्रिय हाई स्कूल।
मुं. हरनन्दप्रसाद, वकील, दारानगर।
मुं. हरवंश लाल, क्लार्क म्यूनिसिपल आफिस
स्वामी हरिहरानन्द, सुंडिया।
पं. हरप्रसाद, विद्यार्थी, नवापुरा।
पं हरनारायण विद्यार्थी गोविंदराम पाठशाला।
बा. हरशंकरसिंह, हरतीरथ।
बा. हरिहरदास, रंगीलदासका फाटक।
पं. हरिनाथ, विद्यार्थी, मध्यमेश्वर।
बा. हजारीलाल जैन, विद्यार्थी स्याद्वाद पाठशाला।
बा. हरिश्चन्द्रसेन गुप्त, विद्यार्थी, गोला दीनानाथ।
बा. हरिप्रसादसिंह, कालभैरव।
पं. हीरालाल, विद्यार्थी, बंगाली टोला, चौसट्टीघाट।

बलिया।

पं. अवध उपाध्याय, ब्रम्हनौली, बलिया।
पं. जगदेव उपाध्याय, हेड क्लर्क डिस्ट्रिक्ट बोर्ड।
पं. दूधनाथ, उपाध्याय, अध्यापक, नारायण गढ़।
बा. दिनेश्वर प्रसादसिंह, जमींदार नारायण गढ़।
मौलवी मुहम्मद हमीदखां, हेडमास्टर तहसीली स्कूल सिकन्दरपूर।
बा. धनेश्वर राय, म्यूनीसिपल हेड फाटक।
बा. बेनीमाधव राय, मैट्रिक क्लास नरही।
पं. रामलखन पांडे, नरही।
पं. रामचीज द्विवेदी, म्यूनिसिपल, सेकेन्ड क्लार्क।
पं. रामेश्वर ओझा, अध्यापक, तालिबपूर।

बस्ती।

बा. जगमोहन वर्म्मा, देवीपूर।
बा. विठ्ठल दास, सेकन्ड मास्टर, गवर्नमेन्टस्कूल बस्ती।
पं. नन्दकुमारपांडे, मौजा भारी तहसील डुमरियागंज।
पं. ललिता प्रसाद अग्निहोत्री आर्य्य समाज।

बहराइच।

पं. रामसेवक पांडे, ब्रम्हनीपूर।

बांकीपूर।

बा. कृष्णप्रसादसिंह चौधरी, मु० चौधरीटोला, पो० महेन्द्रू।
पं. नन्दकुमारदेव शर्म्मा, सम्पादक बिहार बन्धु।
बा. नौरंग प्रसादसिंह चौधरी, जिमीदार, बैंकर चौधरी टोला।
पं. पुरुषोत्तम भट्ट, मैनेजर बिहार बन्धु।
बा, रामगोपालसिंह चौधरी, बी० ए० बी० एल० वकील हाइ कोर्ट।
बा. शिवनन्दसहाय, मुख्तार, कमिश्नर्स कोर्ट।
बा. सोनासिंह चौधरी, जिमीदार व महाजन, चौधरी टोला पो० महेन्द्रू।
पं. हरनन्दन पांडे, पटना कालेज।
पं. हरिदेव भट्ट, प्रोप्राइटर बिहार बन्धु समाचारपत्र।

बांदा।

बा. शिवकुमारसिंह, सब डिपटी इन्सपेक्टर, शिक्षा विभाग, कर्वी।

ब्यावर।

बा. केसरी मल बोहरा।
बा. दामोदर दास राठी कृष्णामिल।

बिहार।

पं. केवल रामभट्ट, मथुरिया टोला।

बिजनौर।

मुं. सोतीशंकरलाल, सम्पादक अबला हितकारक।

बुलन्द शहर।

बा. ज्योतिस्वरूप।
बा. ज्वालाप्रसाद, डिपटी कलक्टर, पहासू।
पं. देवेन्द्र शर्म्मा, मुहल्ला सिकन्दराबाद।

भागलपुर।

श्री कृष्णप्रसाद बी. ए. बी. एल।
पं. गौरीप्रसाद मिश्र, वकील अदालत जजी, आदमपुर।
बा. जगधर प्रसाद बी. ए. बी. एल, भागलपुर।
बा. निवेनचन्द्र चौधरी, इन्स्पेक्टर ऑफ एग्रीकल्चर।
पं. बलदेव रामझा बी. ए. असिस्टेन्ट इन्स्पेक्टर ऑफ स्कूल्स।
पं. रामलोचन पांडे, हिन्दी पंडित जिलास्कूल।

बा. हरेकृष्णप्रसाद बी. ए. सम्पाक, यंगबिहार।

मथुरा।

पं. महेन्दुलाल गर्ग, फरह।

पं. क्षेत्रपाल शर्म्मा, मालिक सुखसंचारक कम्पनी।

मिर्जापूर।

पं. आदित्य प्रसाद पाठक, राबर्टसगंज, मिर्ज़ापुर।

पं. कृष्णनन्द शर्म्मा, सीखड मिर्जापुर।

पं. चुन्नीलाल मालवीय, पुरानीअन्जही।

बा. दीपनारायण सिंह, सम्पादक कूर्मि क्षत्रिय हितैषी।

बा. पुरुषोत्तमदास ठीकेदार मु० सोंवरी।

बा. पुरुषोत्तम दास, गोपीगंज।

बा. बंद्रीप्रसाद कटराबाजीरोड।

बा. बसावन लाल, रिकार्ड कीपर।

बा. वैद्यनाथ गुप्त मंत्री आर्य समाज।

बा. भगवान दास जायसवाल बी. ए. धुंधी कटरा।

बा. महादेव प्रसाद ठेकेदार मु० गणेशगंज।

बा. माधो सिंह।

बा. रामकृष्ण दास गुप्त, कानूनगो कोढ़।

बा. लक्ष्मीनारायण ठि० जीतमल गिरधारीलाल।

पं. लक्ष्मीनारायण शर्म्मा मिश्र, संस्कृताध्यापक, सुबोधिनी पाठशाला मु० सत्ती बाजार।

बा. शिवचरन सिंह, चुनार।

बा. शिवशरण लाल जायसवाल, लाकफेक्टरी मिर्जापूर।

पं. शालिग्राम पांडे, सीखड़ पोस्ट सीखड़।

बा. सीताराम, मोहर्रिर रजिस्टरी, कोढ़, जि०

पं० स्वामीशरण शर्म्मा मिश्र, जमींदार, गांव बरोधा पो० लालगंज, ।

मुंगेर।

पं० तुलसीराम, मु० पो० बेगूसराय

पं० नागेश्वर प्रसाद, मंत्री श्रीगणेश विहार पुस्तकालय, वेगूसराय।

बा० नन्दकिशोरलाल, महाजन, ऑनरेरी मजिस्ट्रेट बेगूसराय, ।

मुजफ्फरपुर।

परमहंस, महोपदेशक, सूसा, पो० सिलौत, ।

पं० रामदास रायमिश्र, हिन्दी प्रोफेसर भूमिहार ब्राम्हण।

मैनपुरी।

स्वामी निर्भयानन्द, वानप्रस्थ गोरक्ष, वेवर मैनपुरी।

रायबरेली।

बा० श्रीगोविंद सहाय, लेटओवरसियर पी० डबल्यू डी० बेलीगंज, रायबरेली।

बा० पुतनलाल विद्यार्थी, हेडक्लार्क, इन्जीनियर इनचीफस आफिस राय बरेली।

रानीगंज।

बा. जगन्नाथ झुझनू वाले, बेंकर रानीगंज (बंगाल)

लखनऊ।

बा. श्री काली चरन बन्दोपाध्याय, लखनऊ।

बा. कृपाशंकर निगम, सेन।

पं. गणेश बिहारी मिश्र, गोलागंज, लखनऊ।

बा. गोपाल लाल खत्री, चौक, लखनऊ।

पं. माधव शुक्ल, इलाहाबाद बैंक, लखनऊ।

बा. लक्ष्मण प्रसाद, वकील, लखनऊ।

पं. शिवप्रसाद, मिश्र, क्लर्क, इलाहाबादबैंक लखनऊ

पं. श्रीनारायण मिश्र, स्टूडेन्ट बी० ए० क्लास, केनिंग कालेज, लखनऊ।

बा. शिवनाथ प्रसाद कक्कड़, क्लर्क इलाहाबाद बैंक, लखनऊ।

बा. श्यामदास बन्दोपाध्याय लखनऊ।

लाहौर।

मि. धर्म्मपाल, बी० ए०, लाहौर।

सारन।

चौधरी बैजनाथ प्रसाद सिंह, जमीदार, मौजे इखलासपुर परगना चैनपुर, जिला शाहाबाद।

बा. नन्दकिशोर राय, असिस्टेन्ट मास्टर।

बा. राजाराम सिंह, विद्यार्थी, जि० सारन।

पं. श्री कृष्णावल्लभ मिश्र, विद्यार्थी।

सिंहभूमि ।

पं. बालेश्वर लाल, हेड पंडित मिडिल इङ्गलिश स्कूल सिंहभूम ।

बा. रामचीज सिंह, हेड पंडित इन्डियन स्कूल, चन्द्रधरपुर, सिंहभूम ।

सीतापुर ।

पं. खगेन्द्राचारी, अध्ययनपद संसकृत, मु० लहदपुर जि० सीतापुर ।

पं. शुकदेव बिहारी मिश्र, बी० ए० मुनसिफ जि० सीतापुर ।

हाथरस ।

बा. रघुनाथ प्रसाद कपूर, जनरल एजेन्ट, हाथरस

महाराज हजारी लाल गोस्वामी, अध्यापक ।

बा. जगदेव प्रसाद, स्वर्णकार, मऊनाटभंजन ।

ऊपर लिखे नाम उन महाशयों के हैं जो इस सम्मेलन में उपस्थित थे। यद्यपि यह सूची पूरी नहीं है पर जहां तक हो सका है इसके पूर्ण करने का उद्योग किया गया है ।

इति ।

श्री ल. ना. प्रेस, बनारस सिटी २८९-६८-१०००.

प्रथम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की सहायतार्थ चन्दा देने वाले सज्जनों की नामावली।

श्रीमान राजा साहब भिनगा काशी	१००)
बाबू मोतीचन्द साहब काशी	१००)
फुटकर चन्दा मिर्जापुर निवासियों का	१६१)
नागरी प्रचारिणी सभा काशी	५०)
राय शिवप्रसाद साहब काशी	५०)
राय कृष्णचन्द्र साहब काशी	५०)
राजा फतहसिंह वर्म्मा पुवायां	३०)
श्रीमान महाराजा साहब छत्रपुर	३०)
बाबू श्यामसुन्दर दास बी. ए. काश्मीर	२५)
कुँवर फतह लाल मेहता उदयपुर	२५)
डाक्टर तेजबहादुर सप्रू प्रयाग	२५)
नागरी प्रवर्धिनी सभा प्रयाग	२५)
राजा मोहनविक्रम शाह देव काशी	२५)
गोस्वामी रामपुरी जी काशी	२०)
पं० कृष्णाराम मेहता वकील काशी	१५)
म० म० पण्डित सुधाकर द्विवेदी काशी	१५)
पं० श्यामविहारी मिश्र एम० ए० छत्रपुर	१५)
बाबू गोविन्द दास साहब काशी	१५)
राजा माधोलाल साहब काशी	१५)
उपाध्याय पं० बदरीनारायण चौधरी मिर्जापुर	१५)
बाबू कोलईराम महादेवराम मिर्जापुर	१५)
पं० माधव प्रसाद पाठक काशी	१२॥)
सेठ धौंकल मल्ल गणपत लाल नागपुर	११)
गोस्वामी रामकृष्ण पुरी नागपुर	११)
अग्रवाल सभा कलकत्ता	११)
ब्राह्मण सभा कलकत्ता	११)
बाबू जुगल किशोर खत्री काशी	१०)
पं० सुरेन्द्र नारायण शर्मा काशी	१०)
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा काशी	१०)
बाबू गोपालराम गहमर	१०)
पं० सिद्धेश्वर शर्म्मा काशी	१०)
एक सहायक काशी	१०)
श्रीकेशव देव शास्त्री	१०)
पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० काशी	१०)
राय पूरनचन्द्र खत्री पटना	१०)
बाबू गौरीशंकर प्रसाद वकील काशी	१०)
लाला सीताराम बी० ए० प्रयाग	१०)
डा० जी० ए० ग्रीयर्सन इंगलेण्ड	१०)
राय श्यामकृष्ण जी साहब काशी	१०)
पं० देवीप्रसाद उपाध्याय काशी	१०)
बाबू जगन्नाथ प्रसाद छत्रपुर	१०)
पं० हरदेव भट्ट बांकीपुर	१०)
एक सहायक काशी	१०)
बाबू वैद्यनाथ गुप्त मिर्जापुर	१०)
बाबू निहालसिंह के द्वारा कलकत्ते से	१०)
सत्य सनातन धर्म्म कलकत्ता	१०)
बाबू महादेवप्रसाद जी मिर्जापुर	८)
बाबू महादेव प्रसाद काशी प्रसाद मिर्जापुर	७)
पं० श्रीधर पाठक नैनीताल	५)
पं० राधाचरण गोस्वामी वृन्दावन	५)
बाबू श्यामलाल आगरा	५)
बा० जयरामदास काशी	५)
बा० गंगा प्रसाद अरोड़ा काशी	५)
पं० गणपति जानकीराम दूबे लश्कर	५)

पं० मंगल प्रसाद सूबेदार बोरधा ५)
पं० जगदेव उपाध्याय बलिया ५)
बाबू रामप्रताप लाटा आसाम ५)
पं० केवलराम भट्ट बिहार ५)
बाबू शिवशंकर सिंह बांकीपुर ५)
पं० सरयूनारायण त्रिपाठी काशी ५)
बाबू अयोध्यादास बारिस्टर गोरखपुर ५)
एक हितैषी गाजीपुर ५)
मिष्टर ए० सी० मुकर्जी काशी ५)
पं० सखाराम गणेश देउस्कर कलकत्ता ५)
पं० मथुरा प्रसाद मिश्र मिर्जापुर ५)
बाबू टोडरसिंह द्वारा लाहौर से ५)
बाबू भागवत प्रसाद जायसवाल दीनापुर ५)
बाबू जगन्नाथ प्रसाद सिंह दरभंगा ५)
बाबू कालिका प्रसाद बी० ए० गया ४)
पं० चन्द्रशेखरधर पाठक द्वारा नागपुर से ३।-)
बाबू बालगोविन्द जी गया २॥)
पं० मिश्रीलाल जी पाठक द्वारा २॥-)
पं० बालकृष्ण भट्ट जम्बू २)
बाबू विश्वेश्वर प्रसाद वर्म्मा काशी २)
पं० लोचन प्रसाद पांडेय बालपुर २)
बाबू कृष्ण प्रसाद सिंह गोरखपुर २)
बाबू जगन्नाथ प्रसाद भार्गव काशी २)
गो० ब्रजनाथ शर्म्मा आगरा २)
बाबू शिवकुमार सिंह बांदा २)
पं० रामकृष्ण मिश्र नागपुर २)
गुप्तदान नागपुर २)
पं० रामदेव चोखानी मंडवा २)

बाबू लक्ष्मीनारायण गुप्त काशी
पं० नन्दकुमारदेव शर्मा बांकीपुर
बाबू पूर्णेन्द्र नारायण सिंह बांकीपुर
बाबू यशोदानन्द अखौरी कलकत्ता
बाबू कल्याणदास काशी
बाबू सर्यू प्रसाद इन्दौर
बाबू ठाकुरदास काशी
बाबू झब्बूलाल मिर्जापुर
बाबू वृन्दावन मिर्जापुर
बाबू नारायण प्रसाद वकील पटना
पं० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल प्रयाग
पं० सुमित्रा प्रसाद बछरावां
बा० गोपालदास काशी
पं० विश्वनाथ मिश्र काशी
बाबू सन्नूलाल गुप्त बुलन्दशहर
बाबू राम अवस्थी सरायमीरा
पं० राजमणि त्रिपाठी पडरौना
पं० छोटेराम औरंगाबाद
बाबू प्रतापसिंह गढ़वाल
पं० स्वामीदयाल नागपुर
बाबू गोविन्ददास छत्रपुर
बाबू विजय बहादुर सिंह छत्रपुर
पं० लक्ष्मीशंकर द्विवेदी मिर्जापुर
बाबू भगवान प्रसाद मिर्जापुर
बाबू छेदालाल सिंह मिर्जापुर
पं० गोविन्दाचार्य्य काशी
बाबू निवारण चन्द्र भागलपुर